नीराजन

पं. दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय

हमारा साध्य

प्रचण्ड तेजोमय शारीरिक बल, प्रबल
आत्म-विश्वास-युक्त बौद्धिक क्षमता एवं
निस्सीम भाव सम्पन्ना मनः शक्ति
का अर्जन कर, अपने
जीवन को निस्पृह भाव
से भारत माँ के चरणों
में अर्पित करना ही
हमारा परम
साध्य है ।

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय
कानपुर

नीराजन

वार्षिक पत्रिका

१९८९-९०

संरक्षक :
श्री ओम शङ्कर

प्रधान सम्पादक :
महेन्द्र प्रताप दुबे 'सुमन'

सह सम्पादक :
अंग्रेजी:- श्री कृष्ण कुमार गुप्त
श्री गया प्रसाद वर्मा
संस्कृत:- श्री गणेश शंकर बाजपेयी

नीराजन के इस अंक में

हिन्दी विभाग

	रचना	रचनाकार	पृष्ठ
१–	वन्दना		
२–	सम्पादकीय		I
३–	नीराजको से		IV
४–	शिक्षा–व्यवस्था एक दृष्टि माननीय बैरिस्टर साहब के विचार		VI
५–	राष्ट्र निर्माण में शिक्षा का योगदान	चन्द्र पाल जी पूर्व प्राचार्य	VII
६–	शिक्षा की दोहरी व्यवस्था की समाप्ति	ओमशंकर प्राचार्य	XI
७–	कविता	विनय पान्डे	XVI
८–	मन	श्री जे॰ पी॰ श्रीवास्तव आचार्य	१
९–	युग–दर्शन 'सहज मार्ग'	अर्जुन पाण्डेय	४
१०–	राष्ट्र श्रद्धा के प्रतीकों की मान रक्षा	सौभाग्य शुक्ल	५
११–	सापेक्षिकता और वेग	शशि भाल सिंह सेंगर	७
१२–	आत्म विश्वास	विकास त्रिपाठी	९
१३–	अमृत मिल जाये यदि मग में	कृष्ण कुमार गुप्त	१०
१४–	करें हम राष्ट्र हित नव सृजन	त्रिभुवन पाण्डेय	११
१५–	नये वर्ष की बधाई		१४
१६–	रिश्ता	वीरेन्द्र नाथ	१५
१७–	मानव का स्मृति केन्द्र	यशोवर्धन सिंह	१९
१८–	आह्वाहन कविता	अरविन्द त्रिवेदी	२१
२०–	गुलाब युद्ध	आशुतोष तिवारी	२३
२१–	कृषक कविता	सुभाष चन्द्र शर्मा	२५
२२–	तुलसी महिमा	गौरव सक्सेना	२७
२३–	सुपथ पर प्रभु हमको ले चलो	त्रिवेणी नारायण जायसवाल	३१
२४–	सततुकाराम	अमित पुरुषोत्तम	३५
२५–	महँगाई की महिमा	निश्चल मेहरोत्रा	३६
२६–	पर्यावरण एव प्रदूषण	यशवत देश मुख	३७
२७–	क्या आप जानते हैं	आनन्द कुमार	४०
२८–	राम जन्म भुमि का उद्धार	अनुभव वर्मा	४१

रचना	रचनाकार	पृष्ठ
२९- वृक्ष के उदगार	प्रशान्त त्रिवेदी	४२
३०- STUDENT	अमित जैन	४३
३१- हमारी भारतीय संस्कृति	ऋषेन्द्र मौर्य	४४
३२- एक बीरबल	दिव्य मिश्र	४५
३३- संघ-प्रमुख विभूतियों की दृष्टि में	रविकुमार गुप्त	४६
३४- हिन्दू राष्ट्र का अर्थ चिन्तन	प्रशान्त कटियार	४७
२५- आई किस ढंग की है देश में स्वतन्त्रता	अर्जुन सिंह	४८
२६- युवा पीढ़ी और नैनिकता	महेन्द्र सिंह सेंगर	४९
२७- भीख माँगता है	गोपाल मिश्र	५०
२८- सफलता का रहस्य	विश्वम्भर दायल	५१
२९- गंगोत्री से बदरीनाथ	धनंजय पाण्डेय	५४
३०- हमारा NCC कैम्प	वीरेन्द्र नाथ	५७
३१- रे मानव तेरे कदम किधर	सौरभ शुक्ल	६२
३२- भारत के महान शहीद	रवीश सिंह राजपूत	६३
३३- विश्व में प्रथम	प्रणय यादव	६४
३४- प्राचीन भारत में गणतंत्र	ब्रजेश कुमार	६५
३५- एंटी बायोटिक की खोज	राजीव रंजन पाण्डेय	६७
३६- एक तेजस्वी महापुरुष	वेद प्रकाश सिंह	७०
३७- सामान्य ज्ञान	वेद प्रकाश सिंह	७१
३८- हँसी के गुब्बारे	जितेन्द्र कुमार त्रिपाठी	७२
३९- क्रिकेट का पहला-पहला रिकार्ड	आशुतोष सिंह	७४
४०- विस्मय पूर्ण	नीतेश त्रिपाठी	७५
४१- मौन आदमी बोलती लाश	आशीष कुमार	७७
४२- काले जादू का कमाल	हिमाशु कटियार	७८
४३- भूख	वीरेन्द्र गुप्त	८०
४४- सहारा	मुनि रूप त्रिपाठी	८१
४५- वार्षिक आख्या		८३

संस्कृत विभाग

१- अस्माकं विद्यालयस्य वार्षिकोत्सव	क्षेमेन्द्र बाजपेयी	१
२- कालिदास्य प्रकृति वर्णनम्	गणेश शंकर बाजपेयी	३
३- साम्प्रदायिकतायाः निवारणम् अत्यावश्यकम्	विश्वम्भर दयाल	५
४- वृक्षारोपणफलम्	दिव्य मिश्र	६

ENGLISH SECTION

1.	Pt. Deen Dayal Upadhyaya—a Tribule	Mr. J. P. Srivastava	1
2.	Unto God		3
3.	Laugh of the World Laughs with you	Subhash Chandra	4
4.	Man is the Architect	Yogesh Chandra	6
5.	Whither India	Mr. Chandre Pal Singh	7
6.	My Opinion About Life	Kanchan	11
7.	The Vedas	Vishambhar Dayal	13
8.	Poetry and its Function	G. P. Verma	15
9.	Faltery is a Key of Success	Ashutosh Singh	17
10.	Liquid Crystal		18
11.	Pollution	Dharmendra Pratap	19
12.	Our Friend	Krishna Kumar Gupta	21
13.	Two Funny Stories	Nitin Kumar	24
14.	अनुक्रमांक इण्टर मीडिएट		25
15.	अनुक्रमांक हाईस्कूल		27

पूज्य श्री गुरु जी, जिन्होंने विद्यालय की आधार-शिला रखी।

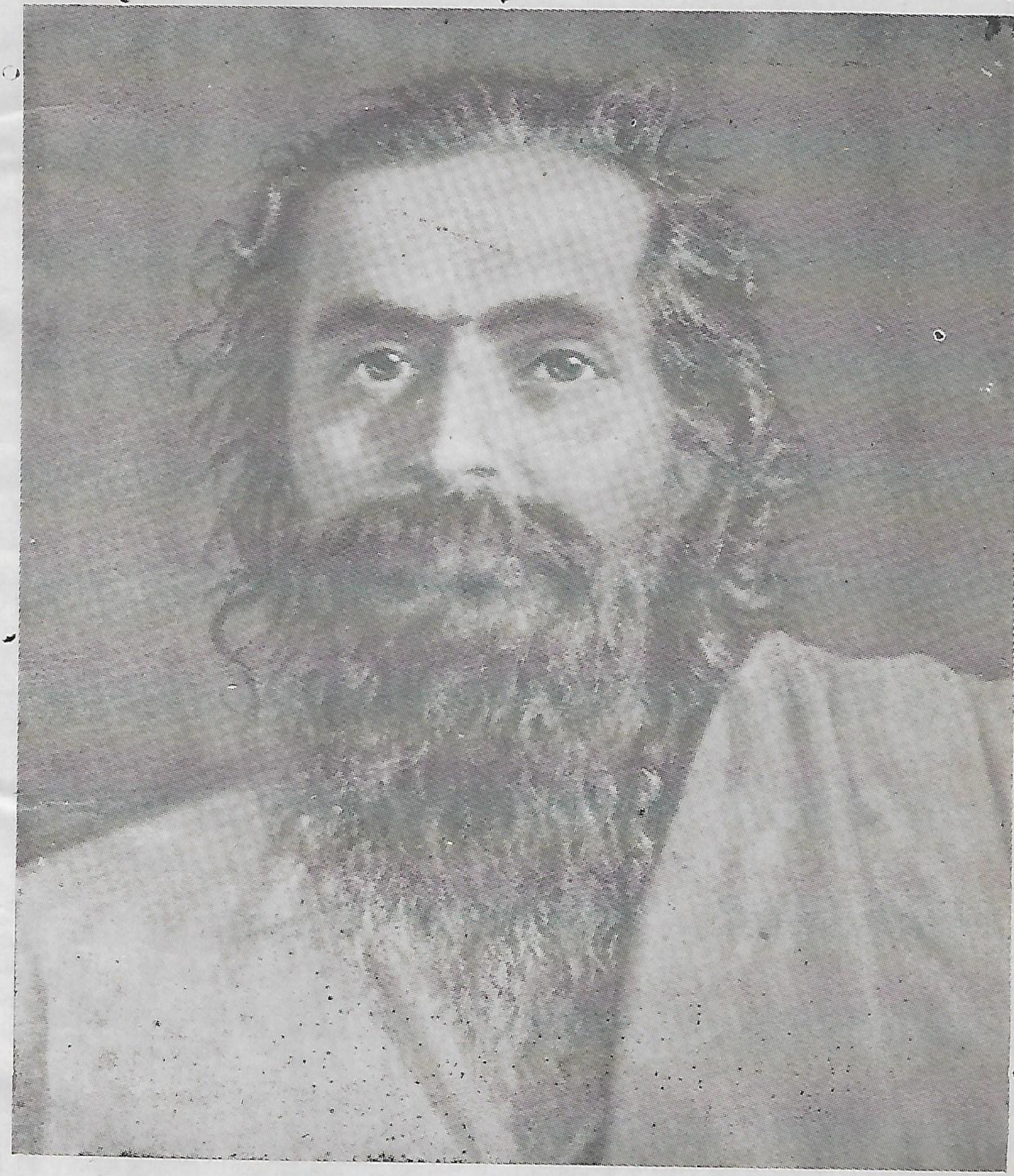

ओ ! आत्मजयी साधना-सिन्धु, ओ धर्म-प्राण अनथक राही। ओ ! महामहिम चैतन्य-राशि ओ, ! कर्म पंथ के गतिवाही। नीराजन की आरती सजी अब तो स्वीकारो निर्लोभी, थक चुके पाँव धो लेने दो योगिन् ! देवर्षें ! निर्मोही।

पण्डित दीनदयाल उपाध्याय, जिनके नाम का संबल लेकर हम बढ़ रहे हैं।

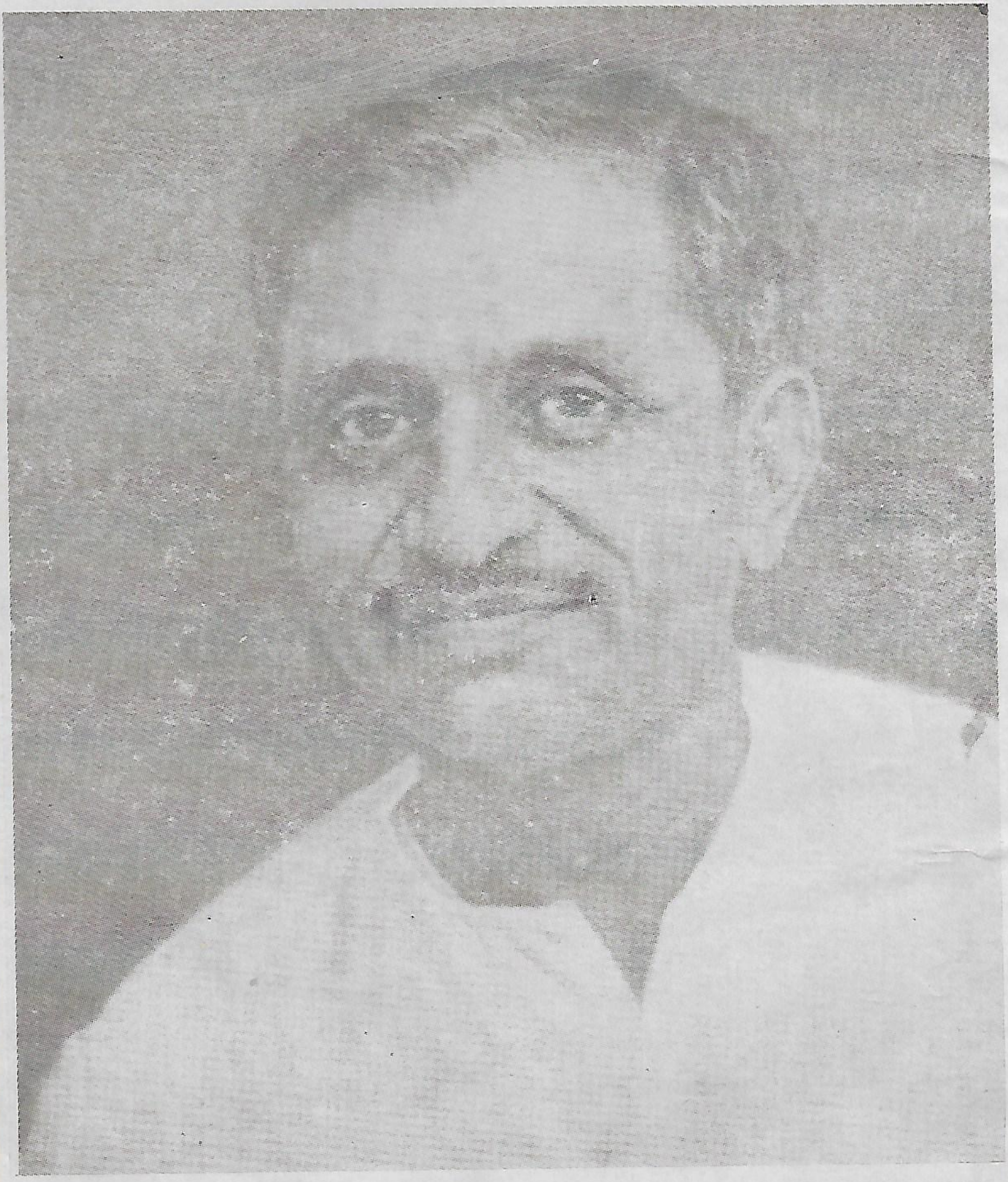

मन में दधीचि का त्याग, राग तन में केशव अभिमानी का। भावना–सिन्धु की ऊर्मि प्रबल प्रतिरोध प्रबल मनमानी का !
ओ ! काल-जयी युग-पुरुष तुम्हें, अर्पित तुमसे ही प्राप्त कर्म ! युग-शिल्पी ओ ! युग की गाथा, दो शक्ति निबाहें आत्म-धर्म !

ममता मयी पूज्या 'बू जी', जिनके अथक परिश्रम और अप्रतिम त्याग से विद्यालय का स्वप्न साकार हुआ

ममता और त्याग की प्रतिमा देशभक्ति की पयस्विनी माता तुम समाज की देवी नमन तुम्हें हे ! यशस्विनी

श्रद्धेय बैरिस्टर साहब, जिनकी प्रेरणा ही विद्यालय के यश का मूलाधार है।

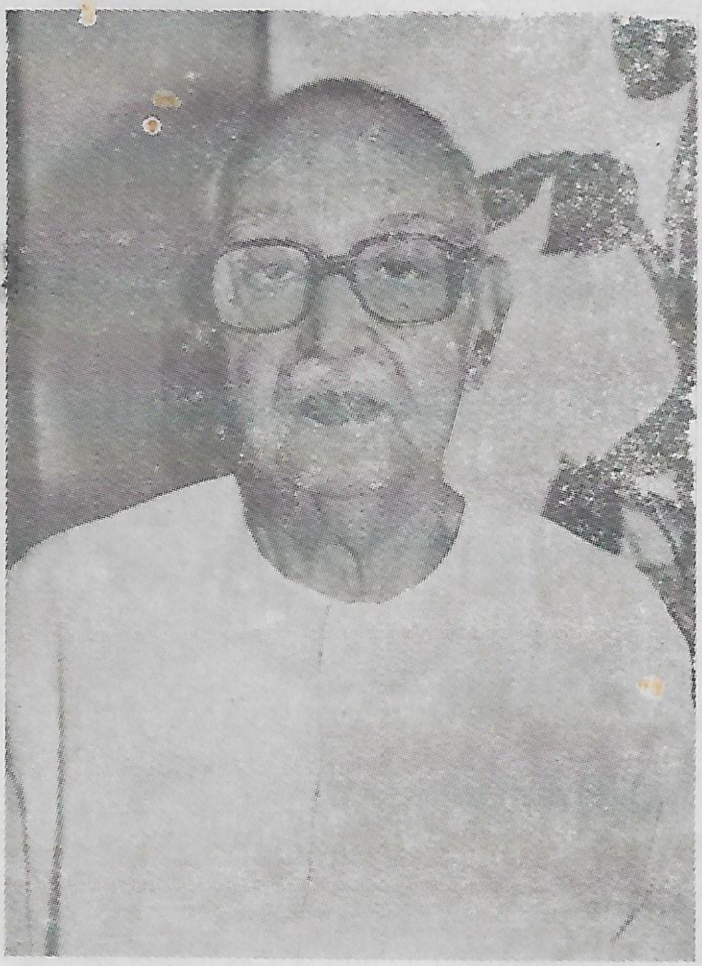

हे ! तपी तुम्हारा निःस्व त्याग
हम सबका हैं प्रेरणा-पुंज
तुम रहो सतत छाया बनकर
जा में बन अनुपम सघन कुंज

नरेन्द्रजीत सिंह
बैरिस्टर

विक्रमाजीत सिंह मार्ग
कानपुर
टेलीफोन : ६१५१९

सन्देश

परम प्रिय दुबे जी

सप्रेम नमस्कार। आपका पत्र दिनांक ११ अप्रैल को प्राप्त हुआ। विद्यालय की वार्षिक पत्रिका निकालने वाली है ऐसा आपने सूचित किया। जानकर प्रसन्नता हुई।

शिक्षा की दिशा पर कुछ वर्षो से सुनने को तो बहुत मिल रहा हैं किन्तु सफल प्रयोग बहुत कम होते दिखाई दे रहे हैं। मेकाले की शिक्षा पद्धति का स्थान नई शिक्षा नीति लेगी, अब दोहरी शिक्षा नीति नहीं चलेगी, ऐसा हम सुन रहे है। यह सब नारों का ही स्वरूप ले रहे हैं ऐसा लगता है।

शिक्षा के स्वाभिमान् आतम विश्वास, नैतिकता, साहस, स्वानुशासन ऐसे गुणों के साथ शारीरिक और बौद्धिक क्षमता का बिकास कर व्यक्ति को समानोन्मुख बनाबे इसका अभाव दिखता है। मुझे विश्वास है कि आपकी पत्रिका शिक्षा की सही दिशा पर प्रकाश डालेगी। आज देश में के नैतिकता और चारित्र्य का ह्रास दिखाई दे रहा है उसे उपयुक्त शिक्षा पद्धति ही दूर कर सकती है। ऐसे पद्धति कैसे विकसित हो यह विचारणीय है।

समस्त शुभकामनाओं सहित–

आपका

नरेन्द्रजीत सिंह

वन्दना

योो वो शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः
उशतीरिव मातरः । (अथर्व० १/५/२)

[जो आपका उत्तम आनन्दामृत है, हमें तो वही प्रदान करो। संतान का शुभ चाहने वाली माता के समान हमें तृप्त और पुष्ट करो ।]

★ ★ ★

(नारद कृत जाड्यापह स्तोत्र)

नवार्क विम्बद्युतिमुद्गलज्ज्वलत्ता–
टंक केयूर किरीट कङ्कणाम् ।
स्फुरत्कणन्नूपुररावरंजितां
नमामि कोटीन्दुमुखीं सरस्वतीम् ।
वंदे सदाहं कलहंस उद्गते–
चलत्पदे चंचल चञ्चुसम्पुटे ।
निर्धौतिमुक्ताफलहार संचयं–
संधायंतीम् सुभगां सरस्वतीम् ।
वराभयं पुस्तकबल्लकीयुत–
परं दधानां, विमले, करद्वये ।
नमाम्यहं त्वां शुभदां सरस्वतीम्–
जगन्मयीं ब्रह्ममयीं मनोहराम् ।
तरंगितक्षौम सिताम्बरे परे–
देहि स्वरज्ञानमतीव मंगलै ।
येना द्वितीयो हिं भवेयमक्षरे–
सर्वोपरि स्यां पर राग मण्डले ।

(गर्ग संहिता २१/४१)

सम्पादकीय

सुमन दुबे

मैं जानता हूँ कि 'नीराजन' हमारे कुछ विद्यार्थियों, उनके अभिभावकों और उनके कुछ परिचितों तक ही सीमित रहेगी और मेरी ये पंक्तियाँ भी उतने ही, बल्कि उनसे भी कम लोगों तक पहुँच पायेंगी। क्योंकि समस्या यह भी तो है कि इन्हें पढ़ेंगे कितने लोग। जो पढ़ेंगे भी उनमें से कितने लोग मेरे मन्तव्य से जुड़ पायेंगे और जो थोड़े बहुत जुड़ेंगे भी, उनकी संख्या इस पूरे देश की जनसंख्या के अनुपात में अत्यल्प होगी। लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि पढ़ने वालों की संख्या कम होने के कारण मुझे लिखना ही नहीं चाहिये या पत्रिका का प्रकाशन ही नहीं करना चाहिये।

मैं जानता हूँ कि जिन तथाकथित साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने-देखने वालों की संख्या लाखों में है, वे किस प्रकार अपना प्रचार-प्रसार बढ़ाने की धुन में सूचना-पत्रक मात्र बनकर रह गई हैं। वे ब्यौरे छाप रही हैं और सामान्य ज्ञान बढ़ाने का काम कर रही हैं। मसलन विश्व में कहाँ कौन सी घटना हुई, कौन पदारूढ़ हुआ और कौन अपदस्थ। किस साहित्यकार को कौन सा पुरस्कार मिला या कौन मरा कौन जिया आदि, आदि। इन्हें मौलिक रचनात्मकता से कोई मतलब नहीं। नई प्रतिभाओं को सजाने-सँवारने और प्रोत्साहन देने में इनकी कोई रुचि नहीं। बल्कि जो मौलिक और स्थापित लेखक हैं उनसे भी वे वही लिखाना चाहती हैं जिसे भीड़ पसन्द करती है और पढ़ना चाहती है। वे भी वही लिख रहे हैं जो पत्रिकायें छापना चाहती हैं। परिणामत: रचनात्मकता बाधित हो रही है और मौलिकता का टोटा होता जा रहा है। जो पत्रिकायें साहित्यिक मर्यादा का निर्वाह कर रही हैं, उनके पाठकों की संख्या कम होती जा रही है। यानी कि मदिरा अपने ठौर पर बिक रही है–पूरी ठसक के साथ बिक रही है और गोरस को अपने ग्राहकों के लिये गली-गली जाना पड़ रहा है। किन्तु इसमें आश्चर्य क्या है? हर युग में यही हुआ है। रहीम के समय में भी मूल्यों का ऐसा ही संकट रहा होगा। तभी तो कवि को ऐसा लिखना पड़ा। इसलिये मुझे भी इस बात का कोई अफसोस नहीं है कि हमारे पाठकों की संख्या कम है। हम तो जो भी हैं, जैसे भी हैं, जितने भी हैं- रचनात्मकता से जुड़ना चाहते हैं। ज्योति से ज्योति जलाने के काम में लगे हैं। एक भी दिया और जल गया तो हमारे लिये उपलब्धि की बात होगी। हम तो प्रतिभा की खोज में लगे हैं। प्रतिभा को धारदार बनाने के काम में लगे हैं। लोगों में साहित्यिक रुचि जगाना चाहते हैं।

हमारा यह काम प्रमाण-पत्रों की दौड़ से अलग है। यह एक नई दौड़ है। रचनात्मकता की दौड़।

इसमें वही भागीदार हो सकता है जिसमें क्षमता होगी। इस दौड़ में बैसाखी लगाने की आवश्यकता नहीं। बैसाखी लगाकर दौड़ने वाले कुछ कदम चलकर ही बैठ जायेंगे। जो क्षमतावान हैं—वे आगे—बहुत आगे बढ़ते जायेंगे। साहित्यिक प्रतिभा कभी सीमित नहीं होती। वह तो जीवन के हर क्षेत्र तक व्यापक है। हर क्षेत्र को उसकी आवश्यकता है। वह कुशलता देती है। वैज्ञानिक के साथ जुड़ेगी तो वैज्ञानिक क्षेत्र में चिकित्सक के साथ जुड़ेगी तो चिकित्सा के क्षेत्र में अभियन्ता को अभियन्त्रण में, प्रशासक को प्रशासन में और राजनीतिज्ञ को राजनीति में कुशलता देगी। वह तो निखारने का काम करती है। जीवन को पूर्णता की ओर अग्रसर करती है। क्योंकि मनुष्य की पूर्णता बुद्धि और भाव के समन्वय में है और यह समन्वय साहित्य ही स्थापित कर सकता है। साहित्य मनुष्य को पूर्णता की ओर ले जाने वाली राह का अन्तिम पड़ाव है। वह जीवन का आध्यात्मिक मूल्य है। वह सत्य, शिव और सुन्दर से जोड़ने का साधन है। तभी तो साहित्य, संगीत और कला से विहीन मनुष्य को पशु कोटि का माना गया है। अन्य जैविक मूल्य हमें पशुता से जोड़ते हैं लेकिन साहित्य हमें मनुष्य की कोटि में ले जाता है। उससे भी आगे मनुष्योत्तर कोटि पाने के लिये भावनात्मक होना आवश्यक है। जीवन को एक नियम देने की आवश्यकता है, जो साहित्य के माध्यम से ही सम्भव है।

रही बात मेरे लिखने की, सो मैं तो लिखूँगा ही। इसलिये नहीं कि लिखना मेरा शौक है। इसलिये भी नहीं, कि खानापूरी करने के लिये लिखना आवश्यक है। मैं इसलिये लिखूँगा कि लिखना मेरी विवशता है। लिखना मेरी नियति में है। इसलिये कहानी, कविता, निबन्ध, ललित निबन्ध, संस्मरण या किसी भी रूप में लिखूँगा। कुछ नहीं तो अपनी डायरी के रूप में ही लिखूँगा। लेकिन आज के समाज की किसी न किसी समस्या को लेकर ही लिखूँगा। रहना तो इसी समाज में है इसलिये इसकी समस्याओं से आँखें कैसे बन्द कर लूँगा ?

इस बात की मुझ वास्तव में कत्तई चिन्ता नहीं है कि मेरा लिखा हुआ पढ़ने वालों की संख्या कम है। बनी रहे। इससे क्या होता है ? सच्चाई का पाठकों की संख्या से क्या सम्बन्ध ? सच्चाई तो हर हाल में सच्चाई ही रहेगी। अन्धों की बहुत बड़ी भीड़ यदि सूरज को नकार दे तो इसका आशय यह तो नहीं हो जाता कि सूरज का अस्तित्व है ही नहीं। सूरज तो सूरज ही रहेगा। बहरों की बस्ती में यदि चिड़ियों के चहकने, भौंरों के गुनगुनाने और झरनों की कल-कल ध्वनि को महत्व न दिया जाय तो इसका मतलब यह तो नहीं है कि चिड़ियाँ चहकना बन्द कर दें। भौंरे गुनगुनाना बन्द कर दें और झरने अपनी कल-कल ध्वनि को स्वयं पी जायें। इसका अर्थ यह भी नहीं होगा कि किसी तरह का आहत या अनाहत नाद है ही नहीं। न सुनाई पड़ने वालों को तो समय-चक्र का घर्घर नाद और क्रान्ति का शंखनाद भी सुनाई नहीं देता। लेकिन जो सुनना चाहते हैं वे सब कुछ सुन लेते हैं। 'देव' कवि को गुलाब की पंखुरियों की चटकारी तक सुनाई देती है।

"मदन महीप जू को बालक बसन्त ताहि, प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै।"

यह अतिशयोक्ति नहीं भाव की सिद्धावस्था है। कबीर की तो बात ही और है। वे तो और भी आगे की सुनते हैं। उनके पास तो चीटी के पगों के 'नेवर' तक सुनने की क्षमता है। यदि ऐसा न होता तो—

"चींटी के पग नेवड़ बाजे, सो भी साहिब सुनता है", कैसे लिख देते ? कबीर सन्त थे । सत्य के उद्‌घोषक थे । वे अप्रामाणिक बात नहीं कह सकते थे । वे राजनीतिज्ञ तो थे नहीं कि जो दूसरों को रिझाने वाला हुआ वही कहदिया । कबीर ने कहने के पहले अनुभव अवश्य किया होगा । स्वयं सुना होगा । जैसे 'हिये की आँखें' होती हैं वैसे ही 'हिये के कान' भी होते हैं । हो सकता है हिये के कानों से ही सुना हो । तभी तो 'अनहद' के रहस्य को भी समझ सके थे वे ।

आज अन्धों, बहरों की भीड में मुझे ऐसे ही कबीर की तलाश है जो हिये की आँखों से देख सके और हिये के कानों से सुनने में दक्ष हो । मुझे अन्धों की भीड़ से कोई मतलब नहीं । बहरों के जमघट से कुछ भी लेना-देना नहीं । मैं तो अपने कबीर को ढूँढ़ रहा हूँ । कबीर, जो स्वभाव से फक्कड़ और व्यवहार से अक्खड़ हो । क्योंकि मैं जानता हूँ कि अक्खड़ वही हो सकता है जिसके मन में कोई लाग-लपेट नहीं होती । जो अपनत्व-परत्व की भावना से दूर रहता है । जो दो टूक बोलता है । किसी को बुरा लगता है तो लगता रहे । वह तो सत्य का पक्षधर है । कथनी से भी और करनी से भी । जो कथनी और करनी में फर्क करता है वह अक्खड़ नहीं हो सकता । फक्कड़ भी नहीं हो सकता । फक्कड़पन के लिये निर्लिप्त भाव चाहिये । स्वार्थ-रहित होना चाहिये । चादर तभी बेदाग रह सकती है । यह स्वार्थ ही तो चादर को दागी कर देता है । लेकिन कबीर ने अपनी चदरिया ज्यों की त्यों तहाकर धर दी थी । आसक्ति तो चदरिया के प्रति भी नहीं है । यह तो देने वाले के प्रति श्रद्धा भाव है । उसके प्रति कृतज्ञता का ज्ञापन है । वैसे तो पूरे फक्कड़ हैं । तभी लुकाठी हाथ में लिये बजार में खड़े होकर कहते हैं—"जो घर जारै आपनो, चलै हमारे साथ ।" यह घर ही तो स्वार्थ का केन्द्र है । कबीर का आशय ईंट-गारा या मिट्टी के घर से नहीं है, स्वार्थ के सम्बन्धों से बने घर से है जिसे ज्ञान की लुकाठी से जलाकर ही कबीरपंथी हुआ जा सकता है । जब यह घर ही नहीं रहेगा तो सारी दुनियाँ अपना घर लगेगी । परायापन रहेगा ही नहीं ।

साहित्य-सर्जना तो सृष्टि-रचना की तरह स्वत: प्रेरित प्रक्रिया है । कोई चाहे या न चाहे, वह तो होगी ही । जैसे सृष्टि का क्रम नहीं रुकता वैसे ही साहित्य-सर्जना भी नहीं रुकती । यह तो वाग्‌देवी के अनुग्रह का फल है । इसे कोई बाधित नहीं कर सकता । स्वयं रचनाकार भी नहीं । इसीलिये मैं तो लिखूँगा ही । किसी के चाहने न चाहने से क्या होता है ? तुलसी बाबा ने भी तो यही किया था । इतना बड़ा काम 'स्वांत: सुखाय' का सहारा लेकर कर गये, वही बाद में सर्व जन हिताय सिद्ध हुआ । उनका 'स्व' इतना बिराट हो गया था कि उसमें पूरा विश्व समाहित हो गया । उनकी तप की चिन्गारी भवभूति बन गई । राम-कथा के आदि द्रष्टा भव की नगरी (काशी) में बैठकर लिखी गई राम-कथा भव को समर्पित करके तुलसी ने मानो भव-सागर पार उतरने के लिये भव-वासियों को जलयान दे दिया ।

मैं तुलसी तो हूँ नहीं । हो भी नहीं सकता । मैं तो उनकी पग-धूल स अलग हुआ एक कण मात्र हूँ जो उनके चरण-चिन्ह पाने के लिये भटक रहा है । इसीलिये, इस रूप में भी, सक्रिय और सचेत रहना चाहता हूँ । यही मेरी विवशता है । इसीलिये कुछ न कुछ लिखते रहना चाहता हूँ । मेरे बाल और किशोर रचनाकारों, तुम भी उठो, जागो और लक्ष्य को पहचानकर उस पर अचूक शर-सन्धान करो—अपनी रचनात्मकता का यही चरम प्राप्तव्य मानता हूँ मैं । यही मेरे लेखन का इष्ट है । अस्तु ।

नीराजकों से

जब से 'नीराजन' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ, जिसे कदाचित् १७ वर्ष हो चुके हैं, मैं लगातार इस स्तम्भ में कुछ न कुछ लिखता आया हूँ। इस विद्यालय के प्रधानाचार्य के रूप में तो 'नीराजन' से मेरा नाता १९७६ से ही टूट गया था, परतु तुम्हारे वर्तमान प्राचार्य तथा मेरे अनन्य बन्धु एवं सहयोगी श्री ओम् शंकर त्रिपाठी के सदाग्रह पर मैं पत्रिका के प्रत्येक अङ्क हेतु अपना सम्बोधन भेजता रहा हूँ। कभी-कभी मैं अपने से पूछता हूँ कि तुम में से कितने इस सम्बोधन को पढ़ते होंगे ? पढ़ने वालों में से कितने उस पर ध्यान देकर उसको समझने की चेष्टा करते होंगे ? और ध्यान देने वालों में से कदाचित् कोई ही उसके अनुसार अपने जीवन को ढालने का प्रयास करता होगा।

मैं वास्तव में अपने को कृतकृत्य समझूँगा, यदि एक भी तुम में से मेरे किसी सुझाव को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करे।

तुलसी के इस कथन से मैं अक्षरशः सहमत हूँ कि "पर उपदेस कुसल बहुतेरे—जे आचरहिं ते नर न घनेरे।" मैं तो अपने को पर-उपदेस देने में भी कुशल नहीं मानता। परन्तु जब मुझसे तुम लोगों के प्रति कुछ कहने को कहा जाता है तो उस समय अपने लम्बे अनुभव के आधार पर जो भी विचार उभर कर आता है उसे तुम लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास करता हूँ।

बहुधा मैं तुम लोगों को विद्यालय में आने वाली पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ते हुए देखता हूँ। अधिकतर छात्र क्रिकेट सम्बन्धी समाचारों, पहेलियों, व्यंग्य-विनोद, चुटकुलों. कहानियों आदि को ही पढ़ते हैं। अखण्ड ज्योति, राष्ट्रधर्म, कादम्बिनी अथवा पाञ्चजन्य जैसी गम्भीर पत्रिकाओं को तो शायद ही कोई पढ़ता हो। धर्म-युग और साप्ताहिक हिन्दुस्तान को तो केवल उनके रंगीन आकर्षक चित्रों के लिये उलट-पलट लेते हैं। बहुत हुआ तो 'प्रतियोगिता दर्पण' को वे छात्र ही पढ़ते हैं जो किसी प्रतियोगिता की तैयारी में संलग्न रहते हैं। पुस्तकालय का सदुपयोग तो कोई-कोई छात्र ही करता है, जबकि पुस्तकालय में एक से एक बढ़कर विभिन्न विषयों की पुस्तकें हैं।

इस विद्यालय में पढ़कर ससम्मान कक्षा उत्तीर्ण करना ही तुम्हारा जीवनोद्देश्य नहीं है। अपनी पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ जीवनोपयोगी साहित्य के अध्ययन की भी तुम्हें आवश्यकता है। हल्की मनो-रंजक पाठ्य-सामग्री के अतिरिक्त कुछ गम्भीर विचारोत्तेजक अध्ययन भी तुम्हारे भविष्य-निर्माण के लिये उपादेय होगा। महत्वपूर्ण सामयिक घटनाओं से तुम्हें अवगत होना ही चाहिये, राष्ट्र के सामने जो ज्वलन्त समस्यायें हैं उन पर सम्पादकीय लेख अथवा प्रमुख विचारकों की टिप्पणियाँ भी पठनीय होती हैं। तुम राष्ट्र के भावी नागरिक हो। तुम्हें अपने भावी कर्त्तव्यों और दायित्वों की दृष्टि से भी अपनी तैयारी करनी है। अच्छी पुस्तकें हमारी 'Never-failing friends' (कभी धोखा न देने वाले मित्र) हैं। इन मित्रों के चयन में तुम्हारे आचार्य सदैव सहायता हेतु तत्पर हैं। केवल तुम में जिज्ञासा की तीव्रता की आवश्यकता है।

चन्द्रपाल सिंह (पूर्व प्राचार्य)

–:◌•◌:–

शिक्षा-व्यवस्था

एक दृष्टि

[श्रद्धेय बैरिस्टर साहब एक कुशल प्रशासक ही नहीं, उत्कृष्ट कोटि के चिन्तक और शीर्षस्थ शिक्षाविद् भी हैं। इस समय शिक्षा के सम्बन्ध में अनेक प्रकार से विचार और प्रचार हो रहा है। 'नीराजन' ने यह सर्वथा उचित समझा कि अपने संरक्षक मान्यवर बैरिस्टर साहब से इस बहुचर्चित विषय पर उनके विचार जानें। इसीलिये सम्पादक ने उनसे कतिपय चर्चित प्रश्नों पर उनके उत्तर प्राप्त किये।

प्रस्तुत प्रश्नोत्तर इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि बैरिस्टर साहब के शिक्षा सम्बन्धी विचार बड़े ही सुस्पष्ट, व्यवहार्य तथा उपयोगी हैं।] -सम्पादक

नीराजन :–शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यों के संकट की तरह जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी मूल्यों का संकट है। इसका मूल कारण क्या है ? क्या दोनों में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है ?

बैरिस्टर साहब :–किसी भी समाज के जीवन मूल्य उसकी संस्कृति तथा परम्पराओं से बनते हैं। श्रेष्ठ जन जो व्यवहार समय-समय पर करते आये हैं वही हमारे पथ-प्रदर्शक रहते हैं। हमारी संस्कृति मूलतः त्याग, तपस्या पर आधारित है। हमारा सारा कर्म लोक कल्याण के लिये ही होना चाहिये। इन उदात्त आदर्शों को छोड़कर आज हम पाश्चात्य उपभोग प्रधान चरित्र की ओर भागने लगे हैं। अमेरिका-रूस की नकल हर क्षेत्र में करने लगे हैं। यही हमारे मानवीय मूल्यों में ह्रास का कारण है। कहा है "राजा कालस्य कारणं।" जब हमारे बुद्धिजीवी नेता-शासक भारतीयता से विमुख हैं तो समाज में उसके प्रति आस्था कैसे रहे। अन्य क्षेत्रों की भाँति शिक्षा क्षेत्र में भी लोक कल्याण का स्थान स्वार्थ साधन ले रहा है। यही संकट है।

नीराजन :–अधिकांश लोग ऐसा मानते हैं कि शिक्षा केवल युवा वर्ग के लिये है। इस प्रकार विद्यार्थी और विद्यालय से अन्य लोगों का कोई सम्बन्ध नहीं रहता। क्या यह स्थिति घातक नहीं है ?

बैरिस्टर साहब :–शिक्षा तो जन्म से मृत्यु तक चलती है। दिशा विद्यालय देते हैं किन्तु उसी मार्ग पर जीवन भर चलते हुये मनुष्य विकास करता है। संसार को ही एक महाविद्यालय मानकर मनुष्य चले। हम नित्य व्यक्ति-व्यक्ति से, आने वाली समस्याओं से सीखते चलें, आत्म निरीक्षण करते रहें, स्वभाव को समाज के कल्याण हेतु ढालते रहें तभी श्रेष्ठ मानव का निर्माण सम्भव है।

नीराजन :–क्या दोहरी शिक्षा प्रणाली को समाप्त किया जा सकता है ?

बैरिस्टर साहब :–दोहरी शिक्षा प्रणाली से अभिप्राय क्या है यही अभी मेरी समझ में नहीं आया। यदि हिन्दी माध्यम, अंग्रेजी माध्यम का प्रश्न है तो मेरी समझ में शिक्षा का माध्यम तो मातृभाषा ही होना चाहिये किन्तु जब तक भारतीय भाषायें तकनीकी दृष्टि से समृद्ध नहीं हो जाती अंग्रेजी की जानकारी आवश्यक होगी। द्वितीय भाषा के रूप में अंग्रेजी को रखना अनुचित न होगा। हमें नारों में नहीं फँसना

चाहिये। "अंग्रेजी हटाओ" के स्थान पर "शिक्षा का माध्यम मातृभाषा बनाओ" यह प्रयास होना चाहिये। मातृभाषा पर बल देने से हिन्दी का विरोध नहीं होगा। हिन्दी तो देश में सम्पर्क भाषा बनेगी ही। हाँ हमें हिन्दी में अन्य भाषाओं के शब्द भी ले लेने चाहिये जैसे आज उर्दू तथा अंग्रेजी के तमाम शब्द बोलचाल की भाषा में आ ही गये हैं।

यदि दोहरी शिक्षा से यह अभिप्राय है कि विशेष विद्यालय समाप्त कर दिये जावें। सबमें एक जैसी ही शिक्षा हो, एक जैसा ही शुल्क, सारा सरकारीकरण। यह न तो सम्भव दिखता है न उपयुक्त होगा। इस समय तो विशेष विद्यालयों में ही पढ़ाई होती है। सबको एक समान करने का अर्थ होगा सब उंगलियों को अँगूठे के बराबर ला देना। आवश्यकता इस बात की है कि जो मान्यता प्राप्त अनुदानित विद्यालय हैं उनमें प्रामाणिकता से पढ़ाई चले, सब नियमित हो, शिक्षकों तथा छात्रों में स्वानुशासन हो। ऐसी स्थिति होगी तो विशेष विद्यालय स्वयं ही समाप्त हो जावेंगे। यह विद्यालय तो बढ़े ही इसलिये हैं क्योंकि अनुदानित विद्यालयों की स्थिति में जबरदस्त अव्यवस्था हो गयी है।

नीराजन :–बच्चों में मौलिक प्रतिभा का विकास कैसे हो ? क्या इसका हल प्रमाण-पत्र प्रणाली में है ?

बैरिस्टर साहब :–आज सारी पढ़ाई और परीक्षा प्रमाण-पत्र के लिये ही होने लगी है। बालक के सर्वांगीण विकास की ओर ध्यान ही नहीं दिया जाता। उसे समाजोन्मुखी, संयमी, अनुशासित, व्यवहार-कुशल बनाने का प्रयास नहीं होता। परीक्षा प्रमाण-पत्र का महत्व कम करना आवश्यक है। आवश्यक गुणों के विकास पर अधिक बल दिया जाना चाहिये।

नीराजन :–शिक्षा में अंग्रेज़ी माध्यम का वर्चस्व क्या मौलिक प्रतिभा के विकास में बाधक है ?

बैरिस्टर साहब :–अंग्रेजी माध्यम अस्वाभाविक है। मातृभाषा के माध्यम से ही बालक विषय को आत्मसात् कर सकता है। भिन्न माध्यम से तो उसे रटना ही पड़ता है। इस दशा में मौलिक प्रतिभा का विकास सम्भव ही नहीं हो सकता।

नीराजन :–मूल्यों का संकट भारत में ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व में है इसका कारण वैज्ञानिक सस्कृति का विकास या मनुष्य के मन में बढ़ता भौतिक व्यामोह है ?

बैरिस्टर साहब :–सम्पूर्ण विश्व में मूल्यों का संकट है, यह सही है। इसका कारण व्यक्तिवाद तथा भौतिक व्यामोह ही कहा जा सकता है। क्षणिक सुख के पीछे व्यक्ति भागता है। किन्तु उसे शान्ति नहीं मिलती किसी मनीषी ने कहा हैं–"Strive for happiness not joy". किन्तु आज आन्तरिक शान्ति की ओर न जाकर क्षणिक सुख का ही आकर्षण अधिक हो गया है। श्रीमद् भगवद् गीता में कहा है–"त्यागात् शान्तिः अनन्तरम्" जब तक कर्म फल के त्याग की भावना नहीं बढ़ेगी शान्ति, सन्तोष, सहिष्णुता या मूल्यों पर आधारित जीवन नहीं बन सकता।

नीराजन :–पूरे विश्व में युवा पीढ़ी या तो कुंठाग्रस्त है या आक्रोश में जी रही है। इसे शिक्षा-प्रणाली का दोष मानकर क्या पूरे विश्व की शिक्षा प्रणाली को दोषी बताया जा सकता है ?

बैरिस्टर साहब :–पूरे विश्व की शिक्षा में दोष है तो यही कि वह जीवन मूल्यों पर आधारित नहीं। मनुष्यता के विकास के स्थान पर केवल ज्ञानोपार्जन या जीविका का साधन बन गई है। जब व्यक्ति कर्तव्य कर्म करता नहीं तो कुण्ठा या आक्रोश आते हैं।

राष्ट्र-निर्माण में शिक्षा का योगदान

चन्द्रपाल सिंह (पूर्व प्राचार्य)

शिक्षा अर्थात् सीखने और सिखाने की क्षमता ही मानव की ऐसी विशेषता है जो उसे पशु जगत् से बहुत ऊँचा उठा देती है। पशु को भय और प्रलोभन से सिखाया तो जा सकता है, परन्तु उसे सीखे हुये ज्ञान को वह न तो विकसित कर सकता है और न दूसरों को संचरित कर सकता है। इसी विशेष क्षमता के कारण मानव अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को विकसित तथा ज्ञान-विज्ञान के अपार भण्डार को संचित कर पाया है। पशु प्रकृति ने जैसा भी उत्पन्न किया था हजारों वर्ष के बाद भी वैसा ही है। उसकी न कोई सभ्यता है न संस्कृति। परन्तु मनुष्य विरासत में अपने पूर्वजों से परम्पराओं, ज्ञान-विज्ञान, भाषा, साहित्य, कला आदि के रूप में भी प्राय: करता रहा है उसे समृद्ध कर अगली पीढ़ी को देता रहा है ताकि वह भी उसे और समृद्ध कर अगली पीढ़ी को दे सके। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि अशिक्षित मनुष्य और पशु में कोई अन्तर नहीं होता।

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विशेष भूमि, भौगोलिक परिस्थिति तथा ऐतिहासिक परम्पराओं के कारण एक विशेष प्रकार की संस्कृति विकसित हो जाती है। कोई भी राष्ट्र अपनी विशेष संस्कृति के अनुकूल ही अपनी व्यवस्थायें बनाकर अपनी उन्नति करता है। इस उन्नति के लिये राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की भी आवश्यकता होती है। यदि किसी राष्ट्र को अन्य राष्ट्र का प्रभुत्व स्वीकार करना पड़ता है तो उसकी अपनी प्रतिभा कुण्ठित हो जाती है। उसकी अपनी संस्कृति, भाषा, कला-कौशल स्वतन्त्र रूप से विकसित नहीं हो पाते। उसे शासक राष्ट्र की भाषा एवं संस्कृति को स्वीकार करना पड़ता है तथा दास-मनोवृत्ति हो जाने के कारण उसे अपनी प्रत्येक वस्तु हेय लगने लगती है तथा शासक राष्ट्र की सभी वस्तुयें अच्छी लगने लगती है। स्वतन्त्र राष्ट्र भी एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार का सांस्कृतिक लेन-देन आवश्यक तो है ही वह दोनों के लिये लाभदायक भी है। परन्तु ऊपर से लादी हुई संस्कृति भयावह होती है।

भारतीय राष्ट्र अत्यन्त प्राचीन है। ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में वह विश्व का गुरू रहा है। सहस्रों वर्ष तक भारत इतना शक्तिशाली रहा कि किसी विदेशी शक्ति का इस पर आक्रमण करने का साहस ही नहीं हुआ। परन्तु कालान्तर में शक्ति क्षीण होने पर जब कुछ अर्ध सभ्य जातियों जैसे यवन, शक, हूण, कुषाण आदि ने आक्रमण किये भी तो वे यहीं बस गये और समय बीतते-बीतते यहाँ के समाज में ऐसे रच-बस गये कि आज उनकी पृथक् कोई पहचान नहीं रह गई। नौवीं शताब्दी के पश्चात् इस्लाम धर्मानुयायी कुछ जातियाँ जैसे अरब, तुर्क, अफगान और मुगल आक्रामक बेघर आईं। उन्होंने देश के कुछ भागों पर कुछ समय तक राज्य

भी किया । इन विधर्मियों से १८वीं शताब्दी तक संघर्ष चलता रहा जिसमें कभी इनकी और कभी उनकी जीत होती रही । अन्त में १९वीं शदी के आते-आते दक्षिण में मराठों के, पश्चिम में राजपूतों के और उत्तर में सिखों के रूप में हिन्दुओं ने स्वतन्त्रता का ध्वज फहराया था और आशा बँधी थी कि पूरा भारत स्वतन्त्रता की साँस ले सकेगा । परन्तु तब तक अंग्रेजों ने व्यापारियों के रूप में भारत में प्रवेश किया तथा अपने कुशल संगठन, दृढ़ अनुशासन एवं धूर्ततापूर्ण कूटनीति के बल पर सारे देश को अपने चंगुल में कस लिया ।

मुसलमानों ने इस पर भीषण अत्याचार किये, हमारे धार्मिक स्थानों को भ्रष्ट किया, हमारे कुछ लोगों को बलात् मुसलमान बनाया, परन्तु वे हमारे धर्म और संस्कृति को प्रभावित नहीं कर पाये । अंग्रेजों ने तो अपनी शिक्षा नीति के द्वारा हमें ऐसा मीठा जहर पिलाया कि हम स्वयं अपनी संस्कृति को भूलने लगे, आर्यों को विदेशी समझने लगे तथा अपने धार्मिक कर्मकाण्ड को अन्ध विश्वास । हमें पश्चिमी भाषा, पश्चिमी वेश-भूषा, पश्चिमी चाल-चलन अच्छे लगने लगे । इस दृष्टि से मुसलमानी राज्य से अंग्रेजी राज्य अधिक खतरनाक साबित हुआ । मुसलमान हमारे धर्म और संस्कृति को तो नष्ट नहीं कर सके ।

१९४७ में जब हम अंग्रेजों के चंगुल से छूटे तो हमें चाहिये था कि हम भारतीय आदर्शों पर आधारित स्वतन्त्र शिक्षा नीति को अपनाते, मैकाले द्वारा संचालित शिक्षा नीति से पीछा छुड़ाते । साथ ही देश का विभाजन न होने देते और यदि देश का विभाजन होना ही था तो हिन्दू और मुस्लिम आबादी का पूरा बँटवारा करा लेते । जिस प्रकार विभाजन हुआ यदि उसी को हमें मानना था तो हमें अन्य संस्थाओं को राष्ट्र की मुख्य धारा में पूर्णतया समाहित करने हेतु संविधान में उपयुक्त प्रावधान करने चाहिये थे । आज स्थिति यह है कि हिन्दू पाकिस्तान से तो बिल्कुल निकाल दिये गये और भारत में मुसलमानों की आबादी पाकिस्तान की कुल आबादी से भी अधिक बढ़ने की आशंका है । उन्हें भारत में सब प्रकार के विशेष अधिकार दिये गये हैं, यहाँ तक कि वे अधिकार भी दिये गये हैं जो बहुसंख्यक हिन्दुओं को भी नहीं हैं । पूर्व में मिजोरम, नागालैण्ड, मेघालय आदि राज्यों में ईसाइयों का बाहुल्य होने पर वे भी स्वतन्त्रता की माँग कर रहे हैं और पश्चिम में काश्मीर से हिन्दुओं का पलायन जारी है तथा पंजाब में पाकिस्तान द्वारा प्रशिक्षित आतंकवादियों का आतंक है ।

स्वतन्त्र होते ही हम लोगों ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा तो घोषित कर दिया परन्तु अंग्रेजी को १५ वर्षों के लिये सहायक राजभाषा मान लिया ताकि इस अवधि में अंग्रेजी पढ़े लिखे अधिकारी हिन्दी सीख लें, परन्तु ४० से अधिक वर्ष व्यतीत होने पर भी अंग्रेजी का वही दबदबा कायम है । हम यहाँ तक अंग्रेजी से प्रभावित हैं कि बच्चे के जन्म दिन अथवा विवाह जैसे धार्मिक कृत्य के निमन्त्रण पत्र भी अंग्रेजी में छपवा कर अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं। अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में अपने बच्चे को प्रविष्ट कराना प्रतिष्ठा-मूलक मानते हैं ।

देश-विभाजन जब 'द्विराष्ट्र' सिद्धान्त पर हुआ तो उसका तार्किक परिणाम होना चाहिये था भारत को हिन्दू राष्ट्र घोषित करना तथा उसके संविधान को उस राष्ट्र की परम्पराओं और आदर्शों पर आधारित करना । परन्तु विडम्बना यह रही कि इस देश के भाग्य विधाता वे बने जिनकी शिक्षा-दीक्षा कैम्ब्रिज और आक्सफर्ड के विश्वविद्यालयों में हुई तथा जो अपनी भाषा में सोचने, बोलने और लिखने के बजाय अंग्रेजी

में सोचते, बोलते और लिखते थे। वे कैसे यहाँ की संस्कृति को प्रतिष्ठित कर सकते थे। उन्होंनेकेवल भारत को इंगलैण्ड और अमेरिका जैसे पश्चिमी देशों का नकलची बनाने की चेष्टा की। गाँधी के घोषित अनुयायी होते हुये भी उन्होंने गाँधी के सारे सिद्धान्तों की हत्या की। भारत की आध्यात्मिक संस्कृति पर उन्होंने पश्चिम की भौतिकवादी संस्कृति को तरजीह दी। शिक्षा मानव निर्मात्री हो तथा ऐसे नागरिक तैयार करे जो चरित्रवान हों, देशभक्त हों तथा अपने पैरों पर खड़े हो सकें। इसके स्थान पर उन्होंने ऐसी शिक्षा की व्यवस्था की जिससे बड़े-बड़े उद्योगपति, वैज्ञानिक, इन्जीनियर और डाक्टर जो बने पर उनका लक्ष्य रहा केवल सुखोप-भोग। इसी शिक्षा का परिणाम है कि आज देश में भौतिक उन्नति तो दिखाई पड़ती है, परन्तु स्वार्थ का बोलबाला है, एक ओर गगनचुम्बी अट्टालिकायें हैं तो दूसरी ओर झुग्गी झोपड़ियाँ, एक ओर भरे पेटों के लिये षटरस की भरमार है, तो दूसरी ओर भूखे पेटों को सूखी रोटी भी नसीब नहीं। पैसा कमाने की आशा छायी है। चारों ओर प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार व्याप्त है, यहाँ तक कि सरस्वती के मन्दिरों में भी नाटकीय दृश्य दिखाई देते हैं।

मुझे स्मरण है स्वतन्त्रता के ठीक पश्चात हमारे नेताओं ने विद्यालयों तथा महाविद्यालयों के छात्रों से श्रम-दान व्यवस्था कराया था, जिसके अन्तर्गत सड़क बनाना, बाँध तैयार करना आदि था। परन्तु यह योजना एक-दो वर्ष चलकर ही रह गई। यदि छात्रों से उनकी लम्बी छुट्टियों में इस प्रकार का रचनात्मक काम कराना उनकी शिक्षा का अंग बना दिया जाय तो राष्ट्र निर्माण का कितना बड़ा कार्य हो जाता और साथ ही राष्ट्र के होनहार नागरिकों का चरित्र निर्माण भी होता। इसी प्रकार छात्रों से प्रौढ़ शिक्षा का कार्य कराया जा सकता था अथवा उनसे उन बालकों को पढ़वाया जा सकता था जो अपनी पारिवारिक परिस्थिति के कारण विद्यालय नहीं जा सकते। इस प्रकार संविधान के उस निर्देशक सिद्धान्त का कार्यान्वियन हो सकता था जिसके अनुसार प्रत्येक १४ वर्ष तक के बालक को नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा मिलना अनिवार्य होना चाहिये। आज भारत में साक्षरता का प्रतिशत ३७ है, जबकि किसी भी आधुनिक प्रजातन्त्र के लिये साक्षरता शत-प्रतिशत होना आवश्यक है।

शिक्षा का अर्थ केवल कतिपय विषयों की जानकारी देना मात्र नहीं है। शिक्षा के द्वारा हम बालक को शारीरिक, मानसिक, व्यावसायिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का बिकास करते हैं। इस प्रकार बालक का सर्वाङ्गीण विकास ही शिक्षा का उद्देश्य है। पर आज कतिपय विद्यालयों को छोड़कर कहीं इस उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो रही है। अच्छा रोजगार प्राप्त करना ही शिक्षा का उद्देश्य रह गया है। रोजगार के लिये डिग्री चाहिये और डिग्री प्राप्त करने हेतु येन केन प्रकारेण परीक्षा पास करना ही आज के नवयुवक का लक्ष्य बन गया है। क्या ऐसे नवयुवकों से हम राष्ट्र की उन्नति की आशा कर सकते हैं। स्वतन्त्रता मिलते ही हमें प्रथम वरीयता शिक्षा को देनी चाहिये थी। पर हमारे नेताओं ने प्रथम वरीयता दी कल कारखानों और बाँधों को। परन्तु इन कल कारखानों को चलाने वाले लोग यदि चरित्रवान न हुए, ईमानदार न हुये, देशभक्त न हुये तो इन बड़े औद्योगिक संस्थानों से देश को क्या लाभ होगा। आज जितने घोटाले इन बड़े-बड़े निर्माणों में हो रहे हैं सभी जानते हैं। राष्ट्र निर्माण में शिक्षा का इतना अधिक महत्व होते हुये भी यह कितने शोक का विषय है कि किसी भी राजनीतिक पार्टी के घोषणा-पत्र में न शिक्षा की स्पष्ट कल्पना है और न उसको वरी-यता देने पर ही बल है। भारतीय जनता पार्टी जैसी राष्ट्रीय पार्टी के मेनिफेस्टो ने भी हमें निराश ही किया।

डा० सम्पूर्णानन्द उन राजनीतिज्ञों में से थे जो देश के निर्माण के लिये भाषा और संस्कृति का महत्व अच्छी प्रकार समझते थे। उन्होंने उत्तर प्रदेश में हिन्दी को अनिवार्य बनाया। परिणाम हुआ कि मुसलमान बच्चे भी तुलसी, सूर और मैथिली शरण गुप्त को पढ़ने लगे। मैंने कई ऐसे मुसलमान वकीलों को देखा है जो शुद्ध हिन्दी बोलते थे और अपने ड्राफ्ट (मसौदे) हिन्दी में तैयार करते थे। मुसलमानों को मुख्य राष्ट्रीय धारा में लाने का यह सफल प्रयास था, परन्तु उनके बाद दूसरे काँग्रेसी मुख्य मन्त्री श्री नारायण दत्त तिवारी ने उर्दू को उत्तर प्रदेश की दूसरी सरकारी भाषा बनाकर श्री सम्पूर्णानन्द के कार्य पर पानी फेर दिया। केवल इसीलिये न कि मुसलमानों के थोक वोट उनको मिलें।

किसी भी राष्ट्र के समुचित विकास के लिये उसके अपने सांस्कृतिक आदर्शों के अनुकूल आगे बढ़ने हेतु उचित शिक्षा की पड़ती आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा के द्वारा ही समाज में वाँछित परिवर्तन लाया जा सकता है। इजरायल जैसे छोटे देश ने किस प्रकार आश्चर्यजनक उन्नति की है। मुश्किल से ४० लाख लोगों को यह देश आस-पास के लगभग १० करोड़ की आबादी के अरब देशों का किस प्रकार सफलतापूर्वक सामना कर सका। उसने अपनी पुरानी हिब्रू भाषा को पुनर्जीवित किया, जबकि उस देश में आकर बसने वाले यहूदी अधिकतर अमरीका, जर्मनी, रूस आदि देशों के थे जो वहीं की भाषा बोलते थे। परन्तु उन्होंने अपनी सांस्कृतिक भाषा हिब्रू को अपनी राष्ट्र भाषा बनाया। उसी में अन्य भाषाओं को वैज्ञानिक एवं तकनीकी ग्रन्थों में अनुवाद कराया और उसी के माध्यम से अपने नवयुवकों को ऊँची से ऊँची शिक्षा दी। उनमें यहूदी धर्म, यहूदी संस्कृति और इजरायल राष्ट्र के प्रति गर्व का भाव भरा। तभी तो आज इजरायल बड़े-बड़े राष्ट्रों के कान काटता है।

हमें भी यदि अपने राष्ट्र को उन्नति के पथ पर अग्रसर करना है, उसे समृद्ध और शक्तिशाली बनाना है तो अपने राष्ट्रीय आदर्शों पर आधारित शिक्षा के द्वारा प्रत्येक बच्चे में अपने देश, अपनी भाषा और अपनी संस्कृति के प्रति अगाध प्रेम, अटूट निष्ठा तथा निश्चल गर्व की भावना भरनी होगी।

सुभाष

मिलता नहीं विकल्प ज्यों रवि के प्रकाश का।
उजली सी रोशनी का औ तम-तोम ह्रास का।
बेजोड़ सूरमा था लाल माँ की कोख का–
कोई विकल्प था नहीं नेता सुभाष का॥

प्राचार्य श्रेष्ठ श्री ओमशंकर त्रिपाठी

ओ तपस्वी ! वीतरागी ! समय साक्षी है तुम्हारी साधना का।

कथा आगत की बनेगा — कल तुम्हारा त्याग।

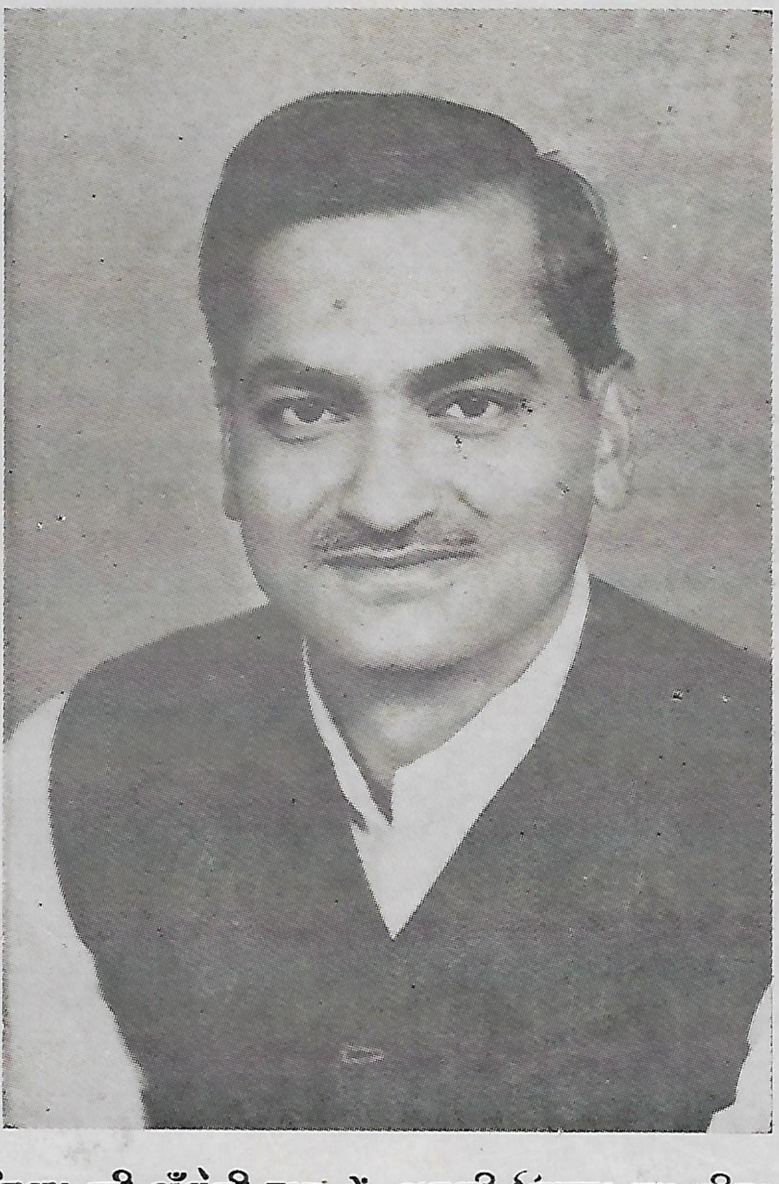

शिक्षा की अँधेरी राह में, अपनी निष्ठा का दीपक जलाकर आगे बढ़ता हुआ एक निराला व्यक्तित्व

विद्यालय-रत्न

चि० लोकेश चन्द्र पाठक

ने १९८८-८९ की राष्ट्रीय प्रतिभा खोज
परीक्षा देकर छात्रवृत्ति अर्जित की।
बधाई

सुधीर पोरवाल

हाई स्कूल परीक्षा में सम्पूर्ण प्रदेश में ७वाँ स्थान
बधाई

चि० अनुराग गुप्त

ने १९८८-८९ में राष्ट्रीय प्रतिभाखोज
परीक्षामें छात्रवृत्ति प्राप्त की।
बधाई

शिशिर कान्त

सम्पूर्ण प्रदेश में १७वाँ स्थान
बधाई

शिक्षा की दोहरी व्यवस्था की समाप्ति ?

ओम शंकर (प्राचार्य)

विगत ३-४ फरवरी १९९० को विधान-भवन, उत्तर प्रदेश में आयोजित राज्य-स्तरीय शैक्षिक उन्नयन गोष्ठी में पढ़े गये वक्तव्यों में जो सर्वाधिक सराहनीय और प्रभावी रहे, उनमें से एक यह भी था। अपने लम्बे शैक्षिक अनुभवों के आधार पर प्राचार्य श्री ओम शंकर जी ने जिन विचार-बिन्दुओं को रेखांकित किया, उनसे अन्य लोग भी अवगत और लाभान्वित हो सकें, इसलिये इस पूरे वक्तव्य को अविकल रूप से यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। —सम्पादक

राज्य शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद, उत्तर प्रदेश द्वारा विधान-भवन में आयोजित राज्य स्तरीय शैक्षिक उन्नयन गोष्ठी में दिया गया वक्तव्य—

अध्यक्ष महोदय !

इस गोष्ठी में विचार प्रस्तुत करने का अवसर आपने दिया, एतदर्थ धन्यवाद। इसके पूर्व भी इस प्रकार की गोष्ठियाँ इस भवन में हो चुकी हैं; किन्तु परिणाम क्या हुये, मैं कह नहीं सकता। आज की गोष्ठी भी किन परिणामों तक पहुँचेगी, भविष्य बतायेगा। फिर भी शिक्षा-क्षेत्र में काम करने के कारण एक सहज पीड़ा होती है, जब शासन का राजनैतिक मुखौटा इस सारस्वत क्षेत्र को भी ठगने लगता है। खैर··· मूल विषय पर आता हूँ। समय क्यों नष्ट करूँ। आपने विषय दिया है दोहरी शिक्षा की समाप्ति। आइये इस पर विचार करें।

परिभाषा :

"दोहरी व्यवस्था" से क्या तात्पर्य है सरकार को यह स्पष्ट नहीं है। इस समय अपने प्रदेश सहित लगभग सम्पूर्ण देश में दो से अधिक शिक्षा-पद्धतियाँ एवं कई प्रकार की संस्थायें कार्य कर रही हैं। उदाहरणार्थ अपने प्रदेश में माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालित अथवा C. B. S. E. से मान्यता प्राप्त विद्यालय, अंग्रेजी माध्यम के तथा कथित पब्लिक स्कूल जो एक अन्य अखिल भारतीय शिक्षा परिषद् I. C. S. E. से सम्बद्ध है। माध्यमिक शिक्षा परिषद् उत्तर प्रदेश से मान्यता प्राप्त सरकारी एवं निजी शिक्षा संस्थायें तथा अल्प संख्यकों द्वारा संचालित कुछ विशेष अधिकार एवं सुविधा प्राप्त संस्थायें इनमें से कौन सी शिक्षा संस्थायें अथवा पद्धतियाँ समाप्त होनी चाहिये यह स्पष्ट होना चाहिये।

संवैधानिक आपत्ति :

समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ है कि प्रदेश के माननीय मुख्य मन्त्री महोदय के एक सार्वजनिक वक्तव्य से यह ध्वनित होता है कि वे प्रदेश में पब्लिक स्कूल जैसे विद्यालयों को समाप्त कर देना चाहते हैं, क्योंकि वे शिक्षा का एक ही प्रकार प्रदेश में चाहते हैं। परन्तु यदि वे एक विशेष प्रकार का रूप ही प्रदेश में लागू करना निश्चित करते हैं तो एक बहुत बड़ी संवैधानिक आपत्ति उपस्थित हो सकती है। यह आपत्ति होगी नागरिक के समानता के मौलिक अधिकार के हनन की। फिर शिक्षा संविधान की समवर्ती सूची में Concurrent list में है। अत: केन्द्रीय सरकार ही सम्पूर्ण देश में शिक्षा के समान स्वरूप को निर्धारित कर सकती है। यह विषय प्रदेशीय सरकार के अधिकार के बाहर है। अत: यह विवाद प्रदेश-सरकार क्यों उठा रही है। वही जाने। दूसरा विषय है शिक्षा का **गुणात्मक विकास कैसे हो।**

महोदय !

शिक्षा बालक के सर्वांगीण विकास की एक उदात्त प्रक्रिया है। अत: शिक्षा के गुणात्मक विकास के लिये बालक की प्रसुप्त प्रतिभाओं का विकास करना होगा न कि पुस्तकीय ज्ञान का संप्रेषण मात्र। आगे जो भी विन्दु हम प्रस्तुत करेंगे वे सभी उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में ही देखे जाने चाहिये। छात्र के विकास हेतु कतिपय मौलिक गुण कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते हैं :–

(१) स्वानुशासन (२) उत्तरदायित्व-भावना

(३) नैतिकता (४) देश-प्रेम

इसके परिणामस्वरूप उसमें

(१) आत्मनिष्ठा (२) कर्मनिष्ठा

(३) धर्मनिष्ठा (४) राष्ट्रनिष्ठा

का विकास होगा और स्वाभाविक रूप में उसके द्वारा

(१) आत्मोन्नति (२) विभवोन्नति

(३) समाजोन्नति तथा (४) राष्ट्रोन्नति

के परिणाम प्राप्त होंगे। यह उपलब्धि फिलहाल कम छात्र संख्या, अच्छे शिक्षक (योग्य तथा आचरण वाले) प्रभावी पाठ्यक्रम और सुविचारित परीक्षा-प्रणाली के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। इस हेतु राष्ट्रीय स्तर पर विचार परस्पर विश्वास और राजनीति से मुक्त दृष्टि की महती आवश्यकता है।

२. सीमित संख्या वाली कक्षायें व विद्यालय :

शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाला दूसरा बड़ा कारण है जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण प्रवेशार्थी छात्रों की संख्या में वृद्धि और उसके अनुपात में विद्यालयों की संख्या में कमी। परिणामत:

एक कक्षा में जहाँ ४० से अधिक बच्चे नहीं होने चाहिये वहाँ ७०-८० तक बच्चे बैठते हैं। स्वाभाविक है कि अध्यापक बच्चों पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दे सकता। ऐसी कक्षा में उपयुक्त अनुशासन भी नहीं रह सकता। अतएव शिक्षा की गुणवत्ता को कायम रखने के लिये एक कक्षा के कई अनुभाग खेलने अथवा एक अनुभाग में अधिक प्रवेश लेने के स्थान पर विद्यालयों की संख्या बढ़नी चाहिये। एक विद्यालय में भी छात्रों की कुल संख्या उतनी ही चाहिये जितने के चेहरे प्रधानाचार्य देखकर पहचान सके कि वे उसी विद्यालय के छात्र हैं। मेरी राय में एक शिक्षा संस्था में ५०० से अधिक छात्र नहीं होने चाहिये।

३. शैक्षिक व्यवस्था में प्रबन्ध तन्त्र का स्थान :

हमारे प्रदेश में वर्तमान काल में स्थानीय प्रबन्ध तन्त्रों को निष्प्रभावी करके जो अव्यवस्थित व्यवस्थायें चलाई जा रही हैं, मेरे विचार से बच्चों के गुणात्मक विकास पर पहली चोट उन्हीं के द्वारा लगी क्योंकि यदि इतिहास पर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि अपने ही प्रान्त में शिक्षा के प्रसार का श्रेय निजी संस्थाओं को ही जाता है। अधिक दिन पूर्व की बात छोड़ भी दें जब निजी शिक्षा संस्थाओं को अधिक स्वायत्तता मिली हुई थी, अभी हाल का ही उदाहरण लें, गत २६ जनवरी के दैनिक जागरण में फर्रुखाबाद जनपद के जिलाधिकारी ने बताया है कि जनपद में कुल १३० माध्यमिक शिक्षा संस्थायें हैं जिनमें तीन सरकारी हैं शेष १२७ निजी संस्थाओं में ३० का प्रबन्ध असन्तोषजनक है। दूसरे शब्दों में ९७ निजी प्रबन्ध द्वारा संचालित विद्यालय अर्थात कुल के ७५% विद्यालय आज भी जब प्रबन्ध समितियों के अधिकार सीमित कर दिये गये हैं, सन्तोषजनक रूप में काम कर रहे हैं। ईमानदारी से देखा जाय तो इन प्राइवेट विद्यालयों से ही देश और प्रदेश को उच्चकोटि के प्रशासक, वैज्ञानिक, इन्जीनियर, अधिवक्ता और ~~शिक्षक~~ शिक्षा-अध्यापक मिले हैं। प्रबन्ध तन्त्रों पर आवश्यकता से अधिक अंकुश लगाकर उन्हें निष्प्रभावी बना देने का परिणाम यह हुआ कि आज कोई भी समाज-सेवा की भावना से प्रेरित दानवीर, यशिच्छु व्यक्ति विद्यालय ~~खोलने~~ स्थापित करने की बात नहीं सोचता और जो खड़ा भी करना चाहता है वह सरकार की छाया से भी अपने विद्यालय को दूर रखना चाहता है।

४. पारस्परिक विश्वास :

यों तो समाज-जीवन ही परस्पर विश्वास पर आधारित है किन्तु लोकतन्त्र में तो सम्पूर्ण ढांचा ही विश्वास के बिना चूर-चूर हो जाता है। प्रबन्ध तन्त्रों के ऊपर सर्वथा अविश्वास करना अनुचित, अन्यायपूर्ण और अव्यवहारिक है। अधिनायकवाद में ऐसे व्यवहार से भले ही काम चल जाये, परन्तु लोकतन्त्र में इसके लिये कोई स्थान नहीं है। अतएव शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने के लिये जहाँ हमें शिक्षकों का विश्वास प्राप्त करना होगा वहीं प्रबन्ध तन्त्र का भी।

५. साँकुश प्रबन्ध तन्त्र :

प्रबन्ध तन्त्र अथवा व्यवस्था जिसके अन्तर्गत प्रबन्ध तन्त्र बनता है पर विश्वास रखते हुये उसके स्वरूप को उपयुक्त बनाये रखने के लिये व्यवस्था में समयानकूल परिवर्तन करना होगा जो विस्तृत विवेचन का विषय है। प्रबन्ध तन्त्र पर आवश्यक अंकुश कैसे लगाया जाय इस पर विचार करना होगा, ताकि न तो प्रबन्ध तन्त्र निरंकुश होकर किसी प्रकार का शोषण अथवा अन्याय कर सके और न ही वह निष्प्रभावी होकर अपने कर्तव्य से विरत हो जाये।

६. शासन और प्रबन्ध तन्त्र का सम्बन्ध :

शासन शिक्षा-संस्था को केवल वित्तीय सहायता दे और यह देखे कि उसका उपयोग भली-भाँति हुआ है परन्तु संस्था की मान्यता प्रदेश के माने हुये शिक्षाविदों एवं मनीषियों की परिषद् द्वारा ही मिले और उसी परिषद् द्वारा शिक्षा के स्वरूप तथा पाठ्यक्रम का निर्धारण हो तथा शिक्षकों के अधिकारों एवं उत्तर-दायित्वों का भी उसी के द्वारा निर्धारण हो वित्तीय सहायता देकर शासन शिक्षा संस्थाओं पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेना चाहता है। वास्तव में शासन द्वारा दिया हुआ धन भी तो समाज का ही है, जो उसे करों के रूप में ~~आहरित~~ प्राप्त होता है। वित्तीय सहायता देकर समाज को शिक्षित करने का शासन संवैधानिक उत्तर-दायित्व है। सरकारी नियन्त्रण के माध्यम से सत्ताधारी राजनैतिक दल अपनी विचार-धारा को शिक्षा संस्थाओं पर लादने का भी प्रयास कर सकता है। इसीलिये शिक्षा संस्थाओं पर नियन्त्रण सरकार का न होकर शिक्षा-विदों के माध्यम से समाज का ही होना चाहिये। तभी शिक्षा की गुणवत्ता का विकास ठीक दिशा में होगा। १९७५-७७ के आपात काल में असंदिग्ध रूप से अच्छी शिक्षा देने वाली कई संस्थाओं को शासन ने अपने नियन्त्रण में लेकर उन्हें चौपट कर दिया था। दूसरा उदाहरण है पश्चिमी बंगाल की कम्युनिस्ट सरकार द्वारा विद्यालयों के पाठ्यक्रम को मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित करने का प्रयास।

अल्प संख्यक शिक्षा संस्थायें :

अल्प संख्यकों को राष्ट्रीय मुख्य धारा में लाना भी सरकार का दायित्व है। यह शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। अतएव उन्हें अपनी धार्मिक शिक्षा अपने बच्चों को देने के अतिरिक्त व्यवस्था अथवा अध्यापक-नियुक्ति सम्बन्धी विशेष अधिकार या सुविधायें देकर भेदभाव करना उचित नहीं होगा।

७. अवकाशों की संख्या :

भारतीय विद्यालयों में अवकाशों की संख्या आवश्यकता से अधिक होती है जिससे कार्य दिवसों की संख्या कम हो जाती है तथा शिक्षा की गुणवत्ता बाधित होती है। केवल मुख्य त्योहारों तथा राष्ट्रीय पर्वों पर ही छुट्टी होनी चाहिये। महापुरुषों की जयन्तियाँ विद्यालयों में ही मनायी जानी चाहिये, पूरे अथवा आंशिक अध्यापन को स्थगित करके किसी महापुरुष के निधन पर विद्यालय बन्द करने के स्थान पर विद्यालय बन्द होने से पूर्व शोक प्रस्ताव पारित करना ही पर्याप्त समझा जाये।

बड़े नगरों में असामान्य परिस्थिति में विद्यालय ही क्यों बन्द किये जायें? कानपुर में आरक्षण सम्बन्धी उपद्रव होने पर विद्यालय लगभग एक महीने बन्द रहे जिन विद्यालयों के प्रधानाचार्य अपने यहाँ अनुशासन स्थापित करने का उत्तरदायित्व वहन करने को तैयार थे। उन्हें भी विद्यालय बन्द करने को बाध्य किया गया। परिषदीय परीक्षाओं के दिनों में कक्षा १० तथा १२ के अतिरिक्त अन्य कक्षाओं के बच्चों को लगभग एक मास पढ़ाई से वंचित रहना पड़ता है। इन परीक्षाओं को चलाने का कोई वैकल्पिक प्रकार सोचा जाये अथवा इन दिनों के बदले इन कक्षाओं की पढ़ाई ग्रीष्मावकाश में हो।

८. पाठ्यक्रम पर पुनर्विचार :

नीचे की कक्षाओं में भाषा और गणित के अतिरिक्त अन्य विषयों की पढ़ाई मौखिक रूप से

सामान्य ज्ञान में सम्मिलित कर दी जाय तथा उसकी परीक्षा भी मौखिक रूप से अथवा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों द्वारा की जाये। जहाँ तक हो सके बच्चों पर पुस्तकों और कापियों का भार कम किया जाये।

९. **अध्यापक-चयन :**

अध्यापकों का चयन प्रथम श्रेणी के प्रत्याशियों में से जिनकी अध्यापन में वास्तविक रुचि हो उन्हीं में से किया जाये। चयन के लिये उनकी वे सभी प्रकार की परीक्षायें ली जायें जो वरिष्ठ प्रशासनिक सेवा के प्रत्याशियों के लिये ली जाती हैं–मौखिक, मनोवैज्ञानिक तथा लिखित। उनके वेतन क्रम भी उन जैसे ही हों। तभी शिक्षा-विभाग योग्य व्यक्तियों को शिक्षा द्वारा राष्ट्र निर्माण जैसे महत्वपूर्ण कार्य में लगा सकेगा। समय-समय पर शिक्षकों के Refresher Courses तथा गोष्ठियाँ आदि भी होती रहें ताकि उनकी दक्षता विकसित होती रहे तथा उनके कार्य का मूल्यांकन भी वैज्ञानिक ढंग से होता रहे। अपने उत्तरदायित्व के प्रति उपेक्षा अथवा चरित्र सम्बन्धी दोष पाये जाने पर दण्ड का प्रावधान रहे।

व्यावसायिक शिक्षा :

माध्यमिक स्तर के पश्चात् जिन बालकों की उस प्रकार की रुचि अथवा रुझान है उन्हें विभिन्न व्यावसायिक संस्थाओं जैसे पालीटेक्निक, आई॰ आई॰ टी॰ आयुर्वेदिक संस्थान विधि महाविद्यालय सैनिक अकादमी शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय आदि में प्रवेश देना ही चाहिये, परन्तु सामान्य शिक्षा ग्रहण करते समय भी बच्चों के रुझान को पहचानने तथा उसे परिष्कृत करने हेतु विभिन्न प्रकार की अभिरुचियों (Hobbies) के रूप में व्यावसायिक शिक्षा का प्रावधान आवश्यक है। जैसे मोमबत्ती, चाक, साबुन आदि बनाना अथवा फोटोग्राफी इलेक्ट्रोनिक्स का प्रशिक्षण। इस प्रकार की दैनिक जीवन में व्यवहार में आने वाली वस्तुओं के बनाने की कुशलता बच्चे को व्यावहारिक जीवन के लिये सक्षम बनाती है। पुस्तकाधरित शिक्षा पर आजकल अधिक बल दिया जाता है। कहीं बच्चा पुस्तकीय कीट (Book Worm) बन कर ही न रह जाय, उसका सर्वांगीण विकास हो, इसलिये जहाँ खेलकूद की आवश्यकता है वही हाथ से विभिन्न प्रकार के कार्य करने की क्षमता का विकास भी आवश्यक है, जो व्यावसायिक प्रशिक्षण के द्वारा ही सम्भव है।

इस प्रकार यदि शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय पर शासन और देश के चिन्तक ईमानदारी से सोचकर दिशा निर्धारित करेंगे, तो निस्सन्देह देश का भविष्य अभी भी निराशा की गहराइयों से उबारा जा सकता है। अन्यथा नियति को दोष देना स्वभाव बन ही गया है हम सबका।

कविता

— विनय पाण्डेय १२ 'क'

आज के परिवेश में भारत का भविष्य है, विसंगतियों से भरा हुआ, कुछ ऐसा दिखाई पड़ता है एक किशोर मन को फिर भी रचनाकार भविष्य के प्रति आशावान है 1) — सम्पादक

उस काले-भूरे धुएँ से हटकर,
कुछ दिखा मुझे,
एक दुर्बल, जर्जर सा
कुछ अधेड़, कुछ जवान सा,
कुछ अमीर पर गरीब ज्यादा
सिर पर जर्मनी हैट
और अँग्रेजियत का लबादा ओढ़े,
वह कुछ तनता व दौडने की कोशिश करता हुआ
लड़खड़ाता हुआ कुछ रोगी लग रहा था,
कुछ हँसने की कोशिश करता हुआ
पर उदासी जैसे टपक रही थी।
मैंने उससे पूछा "आपका परिचय ?"
बोला "मैं भारत हूँ।"
'वही प्राचीन समय का जगद्गुरू ?'
"हाँ, पर अब शायद इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करता हुआ,"
मैंने पूछा, 'यह क्या हाल बनाया ?
तिरछी निगाहों से घूरकर कुछ अँग्रेजी अंदाज में शेर सुनाया,
जिसका अर्थ कुछ इस प्रकार था-
वह शख्स क्या उठेगा जिसे गिरना नहीं आता-
गिर-गिर के उठना ही तो कलाम-ए-जिंदगी है।
कथन सुनकर मेरा दिमाग और तमतमाया
अन्तर का आह्वान वेग से बाहर आया,
कि माना यही है जिंदगी की कहानी शायद
कि गिरते हैं और गिर कर उठते हैं लोग,
पर यहाँ माजरा कुछ उल्टा ही है।
यहाँ तो गिरते हैं और गिर कर मरते हैं लोग।।
मैंने फिर से उसकी ओर देखा
लेकिन उस धुँए में अचानक फिर वह खो गया
शायद उन्नति की उसी घुड़दौड़ में शामिल होने
जिसमें वह पहले ही पिछड़ चुका था,
ईश्वर करे वह जल्दी ही मंजिल पाले
मेरी शुभकामनाओं के साथ

मन

लेखक-जे० पी० श्रीवास्तव
आचार्य

('मन' जैसे सूक्ष्म, प्रबल और मानव-जीवन के हर कोण को प्रभावित करने वाले भाव-तत्व का सरल और उपादेय विश्लेषणात्मक चिन्तन।) —सम्पादक

'डगमग छाँड़ि दे मन बौरा (कबीर), तजो रे मन हरि विमुखन को संग (सूर) सुनि मन मूढ़ सिखावन मेरो' (तुलसी), मन रे परसि हरि के चरन' (मीरा) आदि में स्वर अलग-अलग हो सकते हैं पर सम्बोधन है एक। सब मन से कह रहे हैं। इससे मन की महत्ता, उसकी शक्ति और उसके केन्द्रबिन्दु होने का बोध होता है। है भी मन बड़ा सशक्त—इसीलिए कहा गया है 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः' अर्थात् मन ही मनुष्यों के बन्धन और मोक्ष का कारण है। मन के हारे हार है और मन के जीते जीत है। हर लड़ाई पहले मन से हारी अथवा जीती जाती है क्यों कि मन हमारी शक्तियों का नियामक है। इसीलिए कहा जाता है कि सुखी वह है जिसका मन वश में है और दुःखी वह है जो अपने मन के वश में है—सर्वमात्मवशं सुखं सर्वं परवशम् दुःखम्।

पुराणों में चन्द्रमा का जन्म भगवान् के मन से माना गया है। तब तो मन शीतलता का भण्डार होना चाहिए क्योंकि चन्द्रमा बड़ा शीतल है। निस्सन्देह शान्त मन बड़ा शीतल होता है—निस्तब्ध, शान्तहिम सरोवर जैसा। पर हम इसे शान्त रहने दें तब तो। अपने ऊटपटाँग विचारों के पत्थर फेंक फेंक कर हम इस शान्त सरोवर को प्रकम्पित करते रहते हैं। फलतः वह मथ जाता है, आन्दोलित हो उठता है। इसी का परिणाम यह होता है कि वह अशान्त हो उठता है और अपने स्वाभाविक शीतलता के गुण को खो बैठता है। मन की यही गति प्रमथन स्वभाव वाली चंचल गति कहलाती हैं। तभी हम बहुधा कहते हैं कि मन बड़ा चंचल है।

अर्जुन जैसा योद्धा भी मन की इस चंचलता से त्रस्त हो गया था। बलवान मन उसे मथ रहा था और इसीलिए उसके हाथ से गाण्डीव सरका जा रहा था, उसका शरीर काँपने लगा था, कार्पण्य दोष से वह पूर्णतया त्रस्त हो उठा था, उसके लिए खड़ा रहना भी असम्भव हो उठा था और वह धम्म से अपने रथ में बैठ गया था—बैठ क्या गया था हार ही गया था। वह तो भगवान् कृष्ण की कृपा थी, उनका सान्निध्य था और था उनका गीतोपदेश जिसने उसकी पराजय को विजय में बदल दिया था। स्वस्थ होने पर उसने कहा था "हे प्रभो! मेरा मोह नष्ट हो गया है, मेरी स्मृति लौट आई है, मेरा सारा सन्देह नष्ट हो गया है, मैं आपके वचनों के अनुसार आचरण करूँगा अर्थात् युद्ध करूँगा।" तो अर्जुन क्या तन से बीमार हो गया था जो स्वस्थ हो गया। नहीं, वह मन से बीमार था, अब उसका मन स्वस्थ हो गया था और मन के स्वस्थ हो जाने पर सत्य को देखने की शक्ति और तदनुसार आचरण करने की क्षमता उसमें आ गई थी। तभी कहा गया है कि 'मन के हारे हार है और मन के जीते जीत।'

अभी हमने मन को एक सरोवर कहा था। इसमें नाना विचार-तरंगें उठती रहती हैं। प्रभु कृपा

से अथवा अपनी साधना से जब इसमें सुन्दर सन्तुलनमयी तरंगें उत्पन्न होती हैं तब कोई कवि, कोई कलाकार, कोई दार्शनिक पैदा हो जाता है जो सौन्दर्य में जीता है और सौन्दर्य में जीना सिखाता है। परन्तु जब ये तरंगें असुन्दर और असन्तुलित हो जाती हैं तो कोई पागल, कोई अपराधी पैदा हो जाता है जो अपने कुकृत्यों द्वारा अपना अनिष्ट तो करता ही है अपने अनिष्ट के व्याप में समाज को भी समेट लेता है। व्यष्टिमन समष्टिमन से प्रभावित होता है और व्यष्टिमन समष्टिमन को प्रभावित भी करता है। हमारे क्रिया कलाप, हमारी सारी चेष्टायें, हमारे सुकृत और दुरित हमारे अपने मन के प्रतिबिम्ब ही तो हैं और इनके सदसत् प्रभाव वाह्य जगत् को आन्दोलित किये बिना भला कैसे रह सकते हैं ?

मन का संयम इसीलिए अत्यन्त महत्व का है। अर्जुन ने जब भगवान् श्री कृष्ण से अपनी मन सम्बन्धी चंचलता का निवेदन किया था। तो भगवान् ने असंशयं शब्द का प्रयोग करते हुये न केवल अर्जुन के निवेदन परस्वीकृति की मोहर लगा दी थी वरन् एक हाथ आगे बढ़कर मन को दुर्निग्रह कह दिया था। परन्तु वे यहीं नहीं रुक गये थे। रुक जाते तो गजब हो जाता। भगवत्ता की पराजय न हो जाती ? भला कहीं असम्भव सम्भव हो सकता है ? श्री कृष्ण ने अर्जुन को रहस्य की बात बता दी थी कि मन अभ्यास और वैराग्य से नियंत्रित किया जा सकता है। लोग कह देते है क्या करें अमुक चीज में मन लगता ही नहीं। उसमें मन लगता नहीं लगाया जाता है, इसे कहते हैं अभ्यास और जब लोग कहते हैं कि अमुक चीज से मन हटता नहीं तो कहना पड़ता है मन हटता नहीं हटाया जाता है। इसे कहते हैं वैराग्य।

अभ्यास के लिए यदि पर्याय ढूँढ़ने चलें तो मुझे दो अभिव्यक्तियाँ सटीक लगती हैं—अच्छी आदतों का निर्माण अथवा सुसंस्कारों का ग्रहण। इसके लिए आवश्यक है कि हम जिस सत्कार्य में मन लगाने का अभ्यास अर्थात् मनः संयम करना चाहें उसे पुनः पुनः करें, उसकी नियमितता भंग न होने दें, एक भी अपवाद उपस्थित न होने दें और साग्रह पुनरावृत्ति करते चलें। असन्दिग्ध रूप से वह अच्छी आदत, वह सुसंस्कार हमारे चरित्र का एक अविभाज्य अंग बन जावेगा। पर निरन्तर सजग और सावधान बने रहना है कि हमारा क्रम खण्डित न होने पावे, कोई भी अपवाद चोर बनकर हमारे संकल्प रूपी घर में सेंध न लगाने पावे। ठीक यही काम वैराग्य की दिशा में करना है। जिस बुराई से मुँह मोड़ा है, मन को उस दिशा में झाँकने का भी अवसर प्रदान न करें।

अभ्यास और वैराग्य के मार्ग को कुछ लोग निवृत्ति मार्ग की संज्ञा देकर नकार सकते हैं और कह सकते हैं कि भाई हम तो प्रवृत्ति मार्गी हैं हम मन का दमन क्यों करें ? इसका उत्तर तो हम आगे देंगे किन्तु उनके लिए सुख-शन्ति का मार्ग है उदात्तीकरण। सत्साहित्य पढ़ना, ललित कलाओं में भरपूर रुचि लेना, प्रकृति के सान्निध्य में विचरण करना, अर्थात् सूर्योदय, नक्षत्रावली कलकलनिनाद कारिणी सरिताओं, मुसकराते हुये प्रसूनों, बच्चों की किलकारियों का भरपूर आनन्द उठाना, सेवाकार्यों में जुटना, सृजनात्मक कार्यों में दत्तचित्त होना आदि अनेक उपाय हैं जिनसे मन का उदात्तीकरण हो जाता है। प्रवृत्ति मार्गियों के लिए मन को सँवारने का जहज सुप्राप्य मार्ग यही है। अपनी अपनी रुचि के अनुसार मार्ग चुन लें पर गन्तव्य दोनों मार्गों का एक है मनः संयम।

मनः संयम क्यों करें ? अब इस प्रश्न का उत्तर भी दे दिया जाय। सुख शान्ति तो सभी चाहते हैं और स्पष्ट रूप से निरूपित किया गया है कि सुखशान्ति मन पर निर्भर है। मैथिलीशरण गुप्त जी भी तो यही कहते हैं—मनः प्रसाद चाहिये फिर तो क्या कुटीर और क्या प्रासाद। यदि मन प्रसन्न है तो कुटीर में भी राजप्रसाद का सुख है। ऐसी स्थिति में ही पंचवटी की पर्णकुटी में रहने वाली सीताजी ने सोल्लास कहा था 'मेरी कुटिया में राजभवन मनभाया।' अयोध्या के वैभव भरे राज भवन को उन्होंने इसीलिए छोड़ा था क्योंकि वहाँ उन्हे

सब कुछ मिल पाता पर मनः प्रसाद न मिलता। इस मन: प्रसाद को प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है मन का संतुलन, मनः संयम। इसीलिए सब शास्त्र पुकार पुकार कर कह रहे हैं कि सुख चाहते हो तो मन को वश में करो।

मन को वश में करने का एक उत्तम मार्ग है योग साधना। इसके आठ अंग है आसन से लेकर समाधि तक। योग सधाना से मन पर बुद्धि का और बुद्धि पर आत्मा का अधिकार हो जाता है और साधक उससे भी परे की स्थिति में पहुँच जाता है। यही स्थिति from body to bodiless body वाली स्थिति है जहाँ पहुँच कर मनुष्य नर से नारायण बन जाता है। स्वामी राम कृष्ण परमहंस देव योग साधना से इसीस्थिति तक पहुँच गये थे इसीलिए वे ईश्वरावतार माने गये, स्वयं नारायण बन गये। उत्थान की यही चरमस्थिति है। मानव जीवन को अपने उत्थान के चरम तक पहुँचना है। न पहुँच सकने के भय से साधना के मार्ग पर पैर ही न बढ़ाना कायरता है। चलना ही सच्चा मनुष्यत्व है। विश्वास रखें जो थोड़ा सा भी चलेंगे वह मंगलकारी ही होगा–स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्–इस धर्म का थोड़ा सा भी अभ्यास महत् भय से बचाता है।

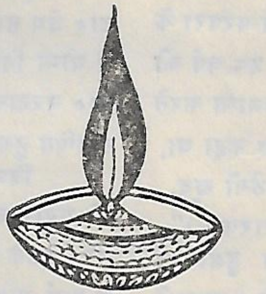

● अपने मन वासना को जीतो क्योंकि तुम्हारा शत्रु कोई मनुष्य नहीं तुम्हारे मन की वासना हैं।

–महात्मा बुद्ध

● परमेश्वर का प्यार केवल सदाचारी और कर्तव्य परायणों के लिये सुरक्षित है।

–श्री रामशर्मा आचार्य

युग–दर्शन "सहज मार्ग"

– अर्जुन पाण्डेय आचार्य

[सहज मार्ग के प्रवर्तक का एक सरल परिचय, अनुभूत लेखनी से –सम्पादक]

दिव्य पुरुष अकस्मात् पैदा नहीं होते। जब पीड़ित मानवता को उनकी आवश्यकता होती है तो वे आते हैं और प्रकृति प्रदत्त अपना कार्य पूर्ण कर चले जाते हैं।

भौतिकता से कराहती पृथ्वी को अध्यात्म की दिव्य सुगंध प्रदान करने २ फरवरी १८७३ को फतेहगढ़ में बसंत पंचमी के शुभ दिन एक दिव्यात्मा का अवतरण हुआ जिसे संसार ने समर्थ गुरू महात्मा रामचन्द्र जी (उपाख्य लाला जी) के नाम से जाना। इन्होंने युगों से विस्मृत प्राणाहुति प्रणाली 'जो ऋषि विद्या का आधार थी, को पुनर्जीवित एवं संशोधित कर मानवता के लिए दिव्य जीवन का पथ प्रशस्त किया। इस विशिष्ट व्यक्तित्व ने शांत भाव से संसार के वातावरण में दिव्यता का समावेश किया तथा एक आचार्य-परंपरा के साथ सैकड़ों जिज्ञासुओं को दिशा प्रदान कर ५८ वर्ष की आयु में महासमाधि ली। भौतिक लीला समाप्त करने से पूर्व उन्होंने मानवता को आश्वस्त करते हुए कहा था,

"मेरे परवानों की खातिर, शम्मा जल उठेगी खुद,
खुद ब खुद दौड़ेंगे उस पर तालि बाने मारफत।"

यह आश्वासन १९४५ में मूर्तिमंत हुआ जब उनके उत्तराधिकारी शाहजहाँपुर के उनके ही नामधारी महात्मा श्री रामचन्द्र जी (बाबू जी) ने राजयोग की परिष्कृत प्रणाली "सहज मार्ग" प्रदान कर अपने गुरूदेव के नाम पर "श्री रामचन्द्र मिशन" की स्थापना कर संसार के लिये ऋषि विद्या सर्व सुलभ करायी, जो अब तक चुने हुये हाथों में रहती थी।

महात्मा श्री रामचन्द्र जी शाहजहाँपुर (उपाख्य बाबू जी) का जन्म ३० अप्रैल १८९९ को हुआ था। बचपन से ही ये अंतर्मुखी शांत प्रकृति के थे। अपने गुरु-देव की भाँति ये भी न्यायालय में कार्यरत थे। अपने गुरुदेव से अंतः संसर्ग द्वारा प्राप्त दिव्य सन्देश के आधार पर इन्होंने मानवता का पथ प्रदर्शन करते हुये १९७२ से १९८२ के बीच कई बार विदेश यात्रा की और संसार के प्रत्येक क्षेत्र के जिज्ञासुओं को दिव्य जीवन-पथ प्रदान किया। कार्य को आगे बढ़ाने के लिये विश्व के विभिन्न भागों में प्रशिक्षक नियुक्त किए। उनके त्याग तपस्या मय जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर हजारों व्यक्तियों ने अपने को कृतार्थ किया है और कर रहे हैं। "सहज मार्ग" प्रणाली को भारत के सुप्रसिद्ध दार्शनिक एवं योगिराज अरविन्द घोष एवं महर्षि रमण जैसे सन्तों के साथ साधना रत डा० के० सी० वरदाचारी ने सातवाँ दर्शन बताया है। आगरा विश्वविद्यालय ने इस नये दर्शन पर डा० प्रेम सागर को डाक्टरेट प्रदान की है। तिरुपति में योग्य विद्वानों एवं अनुभूत सत्य के मनीषियों के साथ डा० वरदाचारी के निर्देशन में एक अनुसंधान केन्द्र स्थापित हुआ जो अब भी कर्यरत है।

विश्व में आध्यात्मिक बीज आरोपित कर बाबू जी महाराज ने १९ अप्रैल १९८३ को महा समाधि ली। इसके पूर्व उन्होंने अपने परम प्रिय शिष्य मद्रास के पार्थ सारथी राजगोपालाचारी को अपना उत्तरा–धिकार प्रदान किया। इससे पूर्व निरन्तर अपने समीप रखकर इनका पूर्णतः रुपांतरण कर उनको ऋषि-विद्या की पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। पार्थ सारथी जी अपने परम श्रद्धेय गुरुदेव की दिव्य प्रेरणा द्वारा संसार को प्राण-हुति की पीयूष धारा प्रदान कर रहे हैं। वैदिक ऋषियों का दिव्य ज्ञान आज सर्व सुलभ है तथा यह प्रणाली मानवता का आवाहन कर रही है।

आगे कदम बढ़ाये जिन्हें सूझता नहीं,
रौशन चिरागे राह किये जा रहा हूँ मैं।

"सापेक्षिकता और वेग"

– शशिभाल सिंह सेंगर
आचार्य

[परम्परा से प्राप्त वैज्ञानिक सिद्धान्त पर एक मौलिक युवा-दृष्टि । – सम्पादक]

किसी रेल-मार्ग के सापेक्ष किसी यात्री का वेग क्या होगा, यदि वह ५० किमी० प्रति घंटे के वेग से चलती हुई गाड़ी में ५ किमी प्रति घंटे के वेग से इंजन की ओर चलता है ? स्पष्टतः वेग ५०+५=५५ किमी० प्रति घंटा होगा । हमारा यह उत्तर वेगों के नियम पर आधारित है । मैं समझता हूँ, इसकी सत्यता पर आप लोगों को भी सन्देह नहीं होगा । और यदि सन्देह हो तो उसका निवारण यूँ कर लीजिये कि गाड़ी एक घण्टे में ५० किमी० चलती है तथा यात्री ५ किमी० अतिरिक्त चलता है । अतः यात्री का कुल विस्थापन एक घंटे में ५५ किमी० हुआ । अर्थात यात्री का रेलमार्ग के सापेक्ष वेग ५५ किमी० प्रति घंटा हुआ ।

अब आइये जरा उपरोक्त नियम के व्यापक उपयोग पर तनिक विचार करें । कल्पना कीजिये कि एक यात्री २४०,००० किमी० प्रति से० की चाल से चलती हुई रेलगाड़ी में १००,००० किमी प्रति से० के वेग से चलता है तो रेल-पथ के सापेक्ष उसका वेग क्या होगा ? निश्चित रूप से यह वेग २४०,०००+१००,०००= ३४०,००० किमी० प्रति से० होना चाहिये । परन्तु क्या यह वेग सम्भव है ? नहीं । मगर क्यों ? क्यों कि यह वेग प्रकाश के वेग ३००,००० किमी० प्रति से० से अधिक है और हम जानते हैं कि ब्रह्माण्ड में कोई भी वेग प्रकाश के वेग से अधिक नहीं हो सकता ।

इसीलिये वेग जोड़ने का सूत्र, जिसका हम अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं, पूर्णतया सही नहीं है । यह केवल उन वेगों के लिये उपयोगी है, जो प्रकाश-वेग से काफी कम हैं ।

प्रकाश के सम्बन्ध में एक बात और स्पष्ट कर दूँ । वह यह कि भौतिक पिण्डों पर लागू होने वाले गति के सामान्य नियम, प्रकाश के सन्दर्भ में लगभग निरर्थक से हैं । जैसे जब कोई गतिमान पिण्ड किसी अवरोध को पार करता है तो ऊर्जा क्षय के कारण उसका वेग कम हो जाता है । परन्तु जब प्रकाश किसी पारदर्शी माध्यम, जैसे कांच या जल, को पार करता है तो पार करने के बाद वही वेग प्राप्त कर लेता है, जो प्रवेश करने से पूर्व था ।

वे लोग, जो सापेक्षिक-सिद्धान्त के विरोधाभासों से भिज्ञ हो चुके हैं, आसानी से समझ जायेंगे कि क्यों स्पष्ट प्रतीत होने वाला तर्क, जिसके द्वारा हमने अभी वेगों के योग का निगमन किया, अनुपयोगी है । क्योंकि हमने एक घंटे में गाड़ी द्वारा तय किये फासले को गाड़ी में यात्री द्वारा तय किये फासले से जोड़ा है । जबकि सापेक्ष-सिद्धान्त कहता है कि ये फासले जोड़े नहीं जा सकते ।

स्टेशन के सापेक्ष यात्री का वेग ज्ञात करने के लिये, हमे उसके द्वारा स्टेशन घड़ी के अनुसार एक घण्टे में तय किया फासला मालूम करना चाहिये । जबकि गाड़ी में उसके वेग से पहुँचने के लिये हमने गाड़ी की घड़ी को प्रयुक्त किया ।

अतः दो वेग जिनमें से कम से कम एक, प्रकाश वेग से तुलनीय है, बिल्कुल भिन्न तरीके से, जिसके हम अभ्यस्त नहीं हैं, जोड़े जाते हैं। इस विधि में हम चाहे जितना भी वेग ३००,००० किमी० प्रति से० में जोड़ें, हमें फिर वही ३००,००० किमी० प्रति से० वेग उपलब्ध होगा।

वेगों के योग के सामान्य सूत्र की अनुपयोगिता का एक और तुलनात्मक उदाहरण लिया जा सकता है।

हम सभी जानते हैं किसी समतलीय त्रिभुज के तीनों कोणों का योग दो समकोण होता है। अब एक ऐसे त्रिभुज की कल्पना करें जो पृथ्वी के धरातल पर खींचा गया हो और उसकी प्रत्येक भुजा पृथ्वी की त्रिज्या से तुलनीय हो। पृथ्वी के धरातल की गोलाई के कारण, नापने पर इस त्रिभुज के तीनों कोणों का योग दो समकोण से अधिक आता है।

अतः जिस प्रकार पृथ्वी के धरातल पर बड़े-बड़े क्षेत्रों को मापने के लिये समतल ज्यामिति के सामान्य सूत्रों का प्रयोग गलत है, उसी प्रकार बड़े वेगों के लिये वेगो के योग के सामान्य सूत्रों का प्रयोग अनौचित्य पूर्ण है।

● हम महान व्यक्तियों के निकटतम पहुँच जाते हैं जब हम नम्रता से महान होते हैं।

—गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर

● दुःखों में सबसे बड़ा अज्ञानता।

—अश्वघोष

राष्ट्र-श्रद्धा के प्रतीकों की मान-रक्षा

—सौभाग्य शुक्ल, दशम 'ख'

[प्रस्तुत लेख विशृंखलित होने के बाद भी बाल-संचेतना का प्रकटीकरण है। —सम्पादक]

हमने आशा की थी कि जब हम स्वाधीन हो जायेंगे तो जो प्रतीक और नारे स्वाधीनता - संघर्षकाल में देशवासियों के लिये अमर-प्रेरणा का स्रोत बने, उन्हें समाज में और अधिक गौरवपूर्ण स्थान मिलेगा। किन्तु हुआ कुछ और ही। धीरे-धीरे वे सभी प्रतीक विस्मृति के अन्धकार में विलीन हो गये। जन-मानस में उनका अस्तित्व ही नहीं रहा।

विस्मृत लोक-प्रिय नारों का पुनरुद्धार

उन दिनों 'भारत माता की जय', और 'वन्दे मातरम्' के जो उद्घोष गूँजते थे, वे न केवल स्वाधीनता-संग्राम के लिये लोगों को ललकारते थे, बल्कि राष्ट्र के सम्मुख परम-पावन प्राणों से भी प्यारी और स्वर्ग से भी न्यारी अपनी मातृभूमि की जाज्वल्यमान जीवंत छवि प्रस्तुत करते थे। वे तो ऐसी जाज्वल्यमान ज्योति बन गये थे जिस पर मर मिटने के लिये लोग जाति, प्रान्त और भाषा आदि के बन्धनों को तोड़कर पतंगों की भांति टूट पड़ते थे और एक विशाल राष्ट्रीय महायज्ञ में कंधे से कंधा मिलाकर काम करते थे। संक्षेप में ये प्यारे तथा न्यारे उद्घोष राष्ट्र के हृदय की धड़कन थे और एक अखण्ड एकात्म समरस चेतना की जड़ों का सिंचन करते थे।

देश भर में लगने वाली दैनिक संघ-शाखाओं में जब प्रार्थना के बाद 'भारत माता की जय का' गुरुगंभीर घोष होता है, तो वह विस्मृत तथा शोषित भावधारा पुनः सजीव हो जाती है। चाहे राजनीति का क्षेत्र हो या उद्योग का अथवा शिक्षा, संस्कृति और धर्म का, जिन अनेकानेक संगठनों में स्वयंसेवक भी कार्य कर रहे हैं। त्रिवेन्द्रम में जब डेमोक्रेटिक यूथ फेडरेशन आफ इण्डिया का सम्मेलन हुआ तो वहाँ 'भारत माता की जय' का नारा लगाया गया था।

भगवा ध्वज

भगवा ध्वज युगों के भारत की संस्कृति और परम्परा का पूज्य प्रतीक रहा है। जब श्री हेडगेवार ने संघ का श्रीगणेश किया तो उन्होंने सभी स्वयंसेवकों के सामने भगवा ध्वज को राष्ट्रीय आदर्शों के सर्वोच्च प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने उसे गुरु की पदवी दी और व्यास-पूर्णिमा दिवस पर गुरुपूजा की परम्परा डाली। उस दिन स्वयं सेवक सेवक श्रद्धापूर्वक उसकी वेदी पर अपने पुष्प अर्पित करते हैं। तब से भारतीय मजदूर संघ, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद, वनवासी-कल्याण आश्रम, भारतीय किसान संघ और विश्व हिन्दू-परिषद जनसंगठन भगवारंग के ध्वजो को अंगीकार करते आ रहे हैं। समूचे देश में शाखाओं में लाखों स्थानों पर प्रतिदिन भगवा ध्वज फहराया जाता है। कभी-कभी ये अन्य संगठन उसका विशाल सामूहिक प्रदर्शन करते हैं। इससे एक सर्वोत्कृष्ट राष्ट्रीय प्रतीक रूप में भगवाध्वज की एक अनूठी प्रतिमा जनमानस में प्रतिष्ठित हो गयी है।

भगवा ध्वज की मान्यता में सबसे कठिन अड़चन श्रम-क्षेत्र में आयी। विश्व के समूचे श्रमिक-सगठन क्षेत्र में पर्याप्त लम्बे समय से लाल ध्वजों का वर्चस्व रहा है। किन्तु भारतीय मजदूर संघ ने भगवा अपनाया और सशक्त रूप से उसे 'विश्वकल्याण' की कामना करने वाले परम्परागत राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया। भगवा अब लोकप्रिय हो गया है और वह भा० म० संघ के सभी कार्यक्रमों की शोभा बढ़ाता है। मार्च १९८१ में छठा भा० म० संघ राष्ट्रीय सम्मेलन-वामपंथी वर्चस्व वाले कलकत्ता महानगर में हुआ। जब मजदूर संघ का एक विराट जुलूस कलकत्ता की सड़कों से होकर निकला तो नागरिक यह देखकर अवाक रह गये कि हजारों श्रमिकों के हाथों में प्रचलित लाल ध्वज के स्थान पर भगवा ध्वज था। कलकत्ता के प्रमुख समाचार-पत्रों ने भी इस पर टिप्पणी करते हुए कहा, कि यह एक नितान्त नवीन और अनोखी घटना है।

स्वामी विवेकानन्द स्मारक

सन् १९६३ में जब वर्तमान युग के राष्ट्रीय पुनर्जागरण के सिंह-सदृश कर्णधार स्वामी विवेकानन्द की जन्म शती का पुण्य-प्रेरणादायी अवसर निकट आया तो स्वयंसेवकों ने सहजस्फूर्त सुझाव दिया कि कन्याकुमारी समुद्र-तट पर समुद्र के मध्य शिला पर उनकी गरिमा के अनुरूप स्मारक खड़ा किया जाये। इसी शिला पर स्वामी जी तीन दिन तक गहन ध्यान में डूबे रहे। वहीं उन्हें जीवन के ऐतिहासिक ध्येय का ज्ञान व भान हुआ। तभी से उस शिला का नाम 'विवेकानन्द-शिला' पड़ा।

किन्तु इस भव्य प्रकल्प से प्रारम्भ में ही एक गम्भीर चुनौती तमिलनाडु के मसीही चर्च ने खड़ी कर दी। चर्च कन्याकुमारी जिले को अपना गढ़ समझता था। लगभग समूचे तटवर्ती मछुवारे समुदाय को ईसाई बना लिया गया है। दक्षिण समुद्र क्षेत्र पर उन्हीं की नावों और बेड़ों का राज है।

जब समूचे देश ने विवेकानन्द शिला पर स्वामी विवेकानन्द का एक भव्य स्मारक खड़ा करने का संकल्प लिया गया तो चर्च उस योजना को चौपट करने के लिए हर प्रकार से छल-बल-कौशल के हथकंडे अपनाने लगा। जब तमिलनाडु सरकार ने शिला विवेकानन्द शिला-स्मारक समिति को सौंप दी, तो वहाँ मई १९६३ में एक स्मारक पट्टिका लगायी गयी। मसीही मदांधों ने उसे नष्ट कर दिया और उसके स्थान पर कंक्रीट की एक विशाल शूली (सलीबक्रास) खड़ी कर दी। साथ ही चर्च ने उस स्थल पर जेवियर का एक स्मारक खड़ा करने की तैयारी कर ली। स्मरण रहे कि जेवियर एक कुख्यात पुर्तगाली मिशनरी था। उसी ने हिन्दुओं का सामूहिक धर्मातरण करने के लिये गोवा में और पूर्वीतट पर अत्याचार दाये थे।

श्री मन्मथ पद्मनाभन् की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय स्सारक समिति का गठन किया गया। समूचे देश के प्रख्यात जन उसके पदाधिकारी और सदस्य बनाये गये। उसने अभियान में कूदने का निश्चय किया हजारों नवयुवक उस महान राष्ट्रीय प्रकल्प में तत्परता से जुड़ गये। स्वयंसेवकों ने पूर्ण समर्पित लगन और जतन से स्वामी विवेकानन्द के संजीवनी-सदृश सन्देश की मथनी द्वारा करोड़ों देशवासियों के हृदयों को मथ डाला। अभियान के अधीन स्मारक-प्रकल्प के लिए धन-संग्रह के लक्ष्य को भी पूरा करना था। लक्ष्य भी छोटा-मोटा नहीं था। संघ ने अभियान और स्मारक-प्रकल्प के लिये उच्च प्राथमिकता दी।

विधि का भी कैसा विधान ! किसे पता था कि १९६२ में चीनियों के हाथों राष्ट्र को अवमानना की कड़वी घूट पीनी थी। उसके तुरन्त बाद नैराश्य और विषाद से मूर्छित राष्ट्र को शताब्दी-

समारोह की संजीवनी मिलनी थी। इस समारोह ने राष्ट्र के समक्ष त्याग और शौर्य तथा स्वामी विवेकानन्द के जीवन और ध्येय में प्रतिष्ठित प्राचीन आदर्शों का अमृत-कलश प्रस्तुत किया।

तीन वर्ष बाद एक और अभियान छेड़ा गया। इस बार युवा छात्र समुदाय पर ध्यान केन्द्रित किया गया था। उन तक स्वामी जी का 'मानव-निर्माण' सन्देश पहुँचाया गया। एक और अनूठा प्रयास किया गया जिसके अन्तर्गत लाखों की संख्या में एक रुपये वाले चित्र बेचे गये।

स्मारक वस्तुत: भव्य स्मारक है। वास्तुकला का यह अनूठा मनोहारी नमूना अत्यल्प समय में बनाया गया।

स्वामी जी का अमर सन्देश विशेषत: युवा-वर्ग में दिनोदिन लोकप्रिय होता जा रहा है। इसे देखते हुए यह उचित ही है कि भारत सरकार ने अब स्वामी जी के जन्म-दिवस १२ जनवरी को 'युवा-दिवस' घोषित कर दिया है। इसे सम्पूर्ण देश में उत्साहपूर्वक मनाया जाता है।

आत्म विश्वास

विकास त्रिपाठी
(अष्टम–'ख')

आत्म विश्वास अर्थात् आत्मा पर विश्वास। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्वयं पर विश्वास करना ही आत्म विश्वास है। मानव के पास आत्म विश्वास एक मंत्र के रूप में है। जो व्यक्ति इसके रहस्य को समझने में समर्थ हो जाता है वह ही सच्चा मानव कहलाता है। आत्म विश्वास मानव के अंतमन की कस्तुरी है जिसकी सुगन्ध से वायुमण्डल सुगंधित हो जाता है। जिस प्रकार हिरन के गर्भ में कस्तूरी होती है। वह इस सुगन्ध को प्राप्त करने के लिये इधर–उधर भटकता रहता है परन्तु वह यह नहीं जानता कि सुगंध का भण्डार उसके गर्भ में ही स्थित है। उसी प्रकार मानव बाहरी आडंबरों में इतना खोया रहता है कि उसे स्वयं के विषय में कुछ ज्ञात ही नहीं रहता। जो व्यक्ति इस स्थित के ऊपर हो जाते हैं वे ही महापुरुष कहलाते हैं।

यदि नेपोलियन यह न कहता कि यह आल्प्स नहीं है तो क्या उसकी सेना उस पर्वत पर चढ़ पाती? परन्तु जब उन्हें विश्वास दिलाया गया कि यह आल्प्स नहीं है तो वे आशान्वित हो उस दुर्गम पर्वत को भी पार कर गये। क्या यह आत्म विश्वास नहीं है..........?

जब व्यक्ति आत्म विश्वासी हो जाता है तब वह सांसारिकता से ऊपर उठ जाता है। क्योंकि आत्म विश्वास ऐसा सागर है जिसमें डूबने पर बाहर की किसी भी शक्ति का प्रभाव नहीं पड़ता है।

आत्मा में विश्वास आत्म होता है,
असंभव कार्य भी जिससे संभव होता है।"

नेपोलियन की सेना आल्पस पर्वत को पार करने में अपनी हिम्मत हार रही थी। नैपोलियन से उन्हें साहस बधाते हुये कहा था–"यह आल्पह नहीं है। आप लोग बढ़िये।"

अमृत मिल जाये यदि मग में

—कृष्णकुमार गुप्त "निश्छल"

अमृत स्वयं के लिए नहीं—यही तो कवि की ब्राह्मी दृष्टि है, जिसे निश्छल जी ने शब्दबद्ध किया है —सम्पादक

जो विष मिले तुझे पीने को
पीकर प्यास बुझाता चल ।
अमृत मिल जाये जो मग में—
ठौर-ठौर छलकाता चल !!

जीवन "नीर भरी बदली है,"
होनी है बरसात कहीं ।
अर्थी सजती किसी आँगना—
द्वारे पर बारात कहीं ।

आँसू जितने मिले पोछ ले—
दुःख में भी मुस्काता चल !!

मानव के अन्तर में कितना
भेद भाव का भरा गरल ।
ऊँच नीच का भेद मानता
मगर नहीं ये गंगा जल ।

तू बनकर गंगा सा पावन,
पतितो को अपनाता चल !!

किसे पता है इस नगरी से-
कब या किसको है जाना ?
चाँदी-सोना महल दमहले-
संग न संभव ले जाना ।

लोभ मोह के, काम क्रोध के—
आकर्षण ठुकराता चल
जो विष मिले तुझे पीने को—
पीकर प्यास बुझाता चल !!

करें हम राष्ट्र हित नव सृजन

(प्रस्तुत लेख में राष्ट्रहित नव सृजन की प्रक्रिया का कोई उल्लेख न होते हुए भी किशोर भावनाओ की अल्हड़ ऊर्मियाँ लेखक को सम्भावनाओं की परिधि का संस्पर्श कराती हैं।) —संपादक

त्रिभुवन पाण्डेय कक्षा १२ क
(बौद्धिक प्रमुख) किशोर भारती

भारत ! मेरी मातृभूमि, पुण्यभूमि !

बार–बार अतीत मुझे गौरवान्वित करता है। विश्व के प्रमुख देशों में अपना वैशिष्ट्य स्थापित करने का मानव चरित्र की गुरुता को कर्मरुपेण व्याख्यायित करने का श्रेष्ठ प्रयत्न यहीं पर हुआ। परन्तु एकात्मता ही हमारा ईप्सित है, और जब विश्व में किसी ने कुछ हमसे माँगा, हमने उसे सहर्ष दिया।

काल परिवर्तन। निष्ठुरता ही जिसकी प्रकृति है वह कब से राग रखने लगा। फिर प्रारम्भ हुआ इसी काल चक्र में देश की आत्मा को खडित करने का प्रयत्न यह वास्तव में क्रूर इतिहास हमसे बदला ले रहा था, जिसे हमने स्वयं अपने हाथों रचा। मैं किसी वणिक की भाँति विगत को लाभ–तुला पर तौल नहीं रहा वरन् उसे भी उसी क्रूर काल की कसौटी पर कस रहा हूँ जिसने हमें विनष्ट करने की असफल चेष्टा की।

समय यह बता देता है कि जड़ता ही मरण है। आत्मा वास्तव में गत्वर है व यही जीवन का प्रतीक है। जड़ता ही रुढ़ि की माँ है। बाद में यही रुढ़ि विनाश पथ पर ले जाती है। वर्तमान में यही हो रहा है। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी प्रकृति होती है, अपनी दिशा होती है व अपनी आत्मा (चिति) होती है जो वास्तव में उसकी प्राणशक्ति होती है। भारत में क्या भविष्य सुरक्षित है ? उत्तर नकारात्मक है। क्योंकि हम भूल चुके हैं कि भारत की प्रकृति क्या है। वास्तव में पथ-भ्रष्ट लोगों द्वारा यह पतनोन्मुख तामसी वृत्ति की कार्यपालिका पूर्णतया अनुचित है। भीष्म पितामह का कथन 'राजा कालस्य कारणम्' को बदल कर अब 'कार्य-पालिका कालस्य कारणम्' कर देना चाहिये।

कितनी प्रवंचना है कि सबके मत का महत्व समान है। अर्थात् 'सब धान बाइस पसेरी' फिर चाहें वह 'बासमती' या 'काला नमक' जैसे उत्कृष्ट कोटि के हों या फिर 'मोटा सांवा'। यही अनुचित प्रक्रिया कई बार हमें पतन के गर्त में ढकेल देती है।

धर्म की अवमानना भी यहीं पर हम गाहे-बगाहे कर डालते हैं। मैं उदाहरण दूँ। हिटलर ने आक्रमण किया पेरिस पर। सारा देश मरणासन्न। किंकर्तव्यविमूढ़ता की इस दुर्दशा में वहाँ तत्कालीन प्रधान मंत्री मार्शल पेतां ने आत्मसमर्पण कर दिया। जनता भी विलासी व स्वकेंद्रित थी परिणामतः उसने अपनी सहमति दे डाली। परन्तु भावना व यथार्थ में यदि साम्य हो तो फिर बात ऐसी न होती। हुआ भी, सैनिक अधिकारी दिगॉल ने इसे अस्वीकार कर दिया। वह भाग गया लंदन। देश छोड़ दिया, परन्तु देश-प्रेम न छोड़ा अर्थात् स्नेह सूक्ष्म के प्रति था न कि स्थूल के प्रति। उसने वहाँ पर अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की, सरकार बनायी व कालांतर में सफल भी हुआ।

वह भी यदि आम जनता की तरह होता तो क्या वह सफल हो सकता था ? नहीं। धर्म पर वह अकेले चला व सफल हुआ। अतः विवेक हीन बहुमत राष्ट्रघाती होती है। यही अनिश्चय की पीड़ा यह देश

भोग रहा है। हमारे राष्ट्रनियामकों ने यहीं पर भूल की, धोखा खाया, पाकिस्तान बना, ३७० A, इनर लाइन परमिट की व्यवस्था करनी पड़ी।

वास्तव में राजनैतिक परिदृश्य ही नहीं आर्थिक सामाजिक अन्य क्षेत्रों में भी यही दुर्दशा है और इसी कारण हमारा देश भारत अपनी पतन की स्थिति को देखता जा रहा है। जिस आर्ष संस्कृति के बल पर हमने 'एतद्देश प्रसूतस्य' वाली घोषणा की थी वह न जाने कहाँ विलुप्त हो गयी।

वास्तव में अतीत से प्रेरणा लेकर हम चलें तो हमारे विकास की प्रक्रिया फिर तीव्र हो जाय। संस्कृति ही किसी देश का परिचय होता है। विशेष रूप से प्राचीन देश का। आप कल्पना करें उस क्षण की जब आपको दूसरे का परिचय पत्र लेना पड़े। यही अपने देश के साथ घटित हो रहा है। अब महाराणा प्रताप मार्ग को M P मार्ग कहना, क्या उस अवतार सम महापुरुष के अस्तित्व को वर्तमान के हत् चरित्र, कुमार्गी सांसदों के समकक्ष ला पटकना नहीं है? क्रांतिशिखर के रूप में स्थापित अमर हुतात्मा तात्याटोपे को T T कहना क्या उस अमर नायक की निंदा नहीं है? और यह बात स्मरणीय है कि जिस देश में महापुरुषों की निंदा होती है वह देश अनस्थिरता का ग्रास बन कर समाप्त हो जाता है। इसी कारण से स्वातंत्र्य वीर सावरकर ने कहा था कि, "मुझे विनायक राव दामोदर राव सावरकर कहा जाय न कि B D सावरकर, क्योंकि उपर्युक्त नाम मेरा परिचय देता है।"

हमारे देश को वर्तमान में एक बहुत ही बड़ी व्याधि ने घेर रखा है। वह व्याधि है देश की नीति के नियामकों की विलक्षण पाचनशक्ति। हम अपने मानापमान को भी उदरस्थ करने की प्रवृत्ति बनाकर विषपायी शंकर बनने का प्रयास कर रहे हैं, उधर महाविनाश का भस्मासुर हमारी ही तरफ हमारे देश को ताकते हुए भागता चला आ रहा है।

वास्तव में हमें विनाश-तंद्रा ने आ घेरा है। यह बात ध्यान देने योग्य हैं कि जब विनाश का तांडव समाप्त होता है तब मात्र अतीत के कुछ टुकड़े ही अवशेष होते हैं। इस भग्नता की दशा में इतिहास भी दुर्बल जानकर देश या समाज पर व्यंग्य करने से नहीं चूकता। कभी का चारण इतिहास फिर समालोचक बन बैठता है। हम जब अपने देश के लिये वर्तमान के गलियारों से भविष्य के मार्ग पर चलते है, सदा ही ठोकरें लगती है।

शक्ति का आह्वान करने वालो! जागो! अरे, जब तुम अशक्त हो तब तब तुम्हारी शक्ति-उपासना का क्या मोल? "युद्ध ही जीवन है" बात वास्तव में सत्य है। यदि हम अपने अंधे स्याह नेत्र पटल उभारें तो सत्यता स्वयं हमारे सामने होगी। आज 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का घोष करने वालों के ही देश में अनार्य संस्कृति पलती, पनपती जा रही है। अतः युद्ध करो।

राष्ट्र के विभाजन के बाद भी धर्म निरपेक्षता का आह्वान करके, धर्म की गरिमा को खण्डित करने वालों को इतिहास न छोड़ेगा। चाहे उस देश के कायर नागरिक उसे भले ही दें?

राष्ट्र की आत्मा जन है। जब वह आत्मा ही अधूरी हो तो शरीर क्या पूरा होगा? आज भूखी प्यासी जनता इसी आत्मा का प्रतिनिधित्व कर रही है। यह बात स्मरणीय है कि भूखा मनुष्य अपनी क्षुधा मिटाने के लिये कुछ भी पाप कर सकता है। विश्वामित्र ने अपनी भूख शांत करने के लिये हड्डियाँ चबायी थीं। और यह जन शक्ति क्या चबायेगी? यह जनशक्ति चबायेगी उन नीति नियामकों की वैभव-भरी जीवन-शैलियाँ जिन्होंने इसे भूखा नंगा छोड़ दिया। भारत अर्थात् प्रकाश (ज्ञान) में रत रहने वाला। परन्तु आज तो यह देश अपने नाम का महत्व ही खो बैठा है? खोये भी क्यों नहीं? आखिर इसका नाम India जो हो गया।

पेट की आग से भी अति भयानक होती है विक्षुब्ध चेतना। पूर्व व पश्चिमी अधकचरी संस्कृति का दुःखद सम्मिश्रण हमारी आत्मा को शांति न दे सकेगा। भला पयपान के बाद मदिरा पान का क्या महत्व है ?

हमें भारतीय संस्कृति का मूल रूप चाहिये। चाहे इस कार्य के हेतु कुछ भी बलिदान क्यों न करना पड़े। और ऐसा नहीं कि यह कार्य अतीव दुष्कर हो। महामनीषी पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने अपने एकात्म मानव वाद में इसी भारतीय संस्कृति को पुनः युगीन आवश्यकतानुरूप उजागर किया है। हमें उसे पढ़ कर, मथ कर अपनाना चाहिये। विकास का पथ खोजना चाहिये।

परन्तु हम तो मात्र प्रशंसक या आलोचक के रूप में ही स्वयं को समाप्त कर देते हैं। अतः अब समय आ गया है, कि राष्ट्र हित में हम आगे बढ़ें। हम महान् विभूतियों से प्रेरणा व ज्ञान अवश्य लें परन्तु अपनी शक्ति को मात्र प्रशंसा या आलोचना में समाप्त न कर दें।

और यही हमारी वृत्ति हमें प्रशंसा के लिये लालायित करती है, भले ही हम उसके योग्य न हों। यह प्रशंसा सुनने की या प्राप्त करने की प्रवृत्ति बड़ी ही आत्मघाती है। इसीलिए गिरते गिरते हम यहाँ तक गिर चुके हैं कि वर्तमान में अपनी प्रशंसा दूसरों से करवाने के लिये तमाम अनर्गल कार्य भी कर डालते हैं।

हमारा देश समस्यायों से घिरा है, निःसंदेह। परन्तु हम भी पेतां की तरह आत्म समर्पण न कर दें। प्रेरणा लें हग दिगॉल की तरह।

किसी भी कार्य का संपादन ही वास्तव में उस कार्य की गुरुता को परिलक्षित करता है। वास्तव में हम कभी भी किसी भी बुराई को या कुप्रथा को एक झटके में समाप्त नहीं कर सकते हैं। और उसे झटके में समाप्त करना भी नहीं चाहिए। क्योंकि क्रांति की प्रक्रिया और क्रांति का प्रयोग इतना उपयोगी नहीं। क्यों कि प्रायः क्रांति प्रतिक्रियावादी होती है, वह दूसरी तरह उसी बुराई के स्वरूप को विकसित कर देती है। रूस व फ्रांस में जारशाही व लुईशाही के विरोध में क्रांति हुई। फिर नई व्यवस्था आयी, वह भी विनष्ट कारी। फिर नयी आयी। वास्तव में इन प्रक्रियाओं के हस्तांतरण में जो निर्दोष रक्त बहता है वही क्रांति के स्वरूप को विकृत कर डालता है। वास्तव में लक्ष्य हमारा विकास है न कि क्रांति।

परन्तु इससे क्रांति की महत्ता को कोई भी आँच नहीं आती है। यह बात सत्य है कि विकास ही अंतिम सत्य है न कि क्रांति। परन्तु क्रांति एक साधन है और विकास साध्य फ्रांस व रूस में जब क्रांति हुई तो वहाँ की तत्कालीन मानसिकता इस भेद को समझ न पायी और क्रांति को ही साध्य मान बैठी। इसी कारण वहाँ पर निर्दोष लोगों की हत्यायें हुई। ऐसा नहीं कि हमारे देश में क्रांति न हुई हो। परन्तु जब भी क्रांति हुई एक नये लक्ष्य को लेकर।

पुराण कालीन महाराजा वेन को हटाने में या १८५७ की क्रांति। दोनों में क्रांति को एक साधन लिया गया, न कि साध्य। और इसी कारण दोनों में किसी भी निर्दोष का रक्त नहींबहा। बात साधारण है। नंद-वध या फिर महाराणा प्रताप का सिंहासन पर आरूढ़ होना भी एक क्रांति ही थी।

यह जो पुनर्जागरण की घटना या औद्योगिक क्रांति को क्रांति की संज्ञा दी जाती है वास्तव में यह गलत है।

अतः अब हमें तत्पर होना है क्योंकि हमें देश को विकास के पथ पर ले जाना है अतः करें हम राष्ट्र-हित नव सृजन का संकल्प।

विभिन्न भाषाओं में

"नये वर्ष की बधाई"

संकलित

संस्कृत – नव वर्ष: मंगलमय: अस्तु ।

हिन्दी – नव वर्ष मंगलमय हो ।

उर्दू – नया साल मुबारक हो ।

सिन्धी – नयो साल मुबारक ।

गुजराती – नयो वर्ष सफल धावो ।

पंजाबी – नवे साल दी बधाई होवे ।

उड़िया – नूतन वर्ष सुखरे जाऊँ ।

बंगाली – सुखी नूतन वत्सर ।

तमिल – बधु वर्ण बाझय ।

कन्नड – शुभ कोणा वासन बांगडी ।

नेपाली – ये साल रामरो भयो ।

अरबी – अलखाले नौ बेख्खिन ।

लौटिन – बी आइस अनुसति बुस ।

फ्रेंच – न्यू हेरा बाओ ।

जर्मन – ग्लूक सिंच न्यू जाहर ।

अंग्रेजी – हैप्पी न्यू ईयर टू यू ।

★ रिश्ता ★

– वीरेन्द्र नाथ, कक्षा १२ क

(बच्चों के सम्वेदन शील मन पर मां-बाप के आपसी व्यवहार का भी अत्यन्त सूक्ष्म प्रभाव पड़ता है। उनकी आपस की कटुता बच्चों के सम्वेदनशील मन को किस प्रकार आंदोलित करती है, यही बात 'इस कहानी में प्रस्तुत की गई है। – सम्पादक)

पाँच बजे का समय रहा होगा। विनय स्कूल से लौटकर आया। आते ही चाहा कि मम्मी से लिपट जाए तथा विद्यालय की एक-एक घटना सुना दे। वास्तविक बात यह थी कि आज विनय को अपनी कक्षा में खूब प्रोत्साहन मिला था। एक पद का अर्थ स्पष्ट करना था। विनय अपने पापा जी से पहले ही सीख चुका था। उसके पापा जी हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान एवं लेखक थे। उस पद का उन्होंने ऐसा अर्थ बताया था कि शिक्षक भी उसकी सराहना करते नहीं थके। विनय प्रसन्नता से फूला नहीं समा रहा था और चाहता था कि उसे उसकी मम्मी का भी प्रोत्साहन मिले। बालकों का यह स्वभाव होता है कि वे अपनी उपलब्धियों पर अनुकूल टिप्पणी और प्रशंसा चाहते हैं अन्यथा वे हतोत्साहित हो जाते हैं। उनके भीतर कुछ टूटने लगता है।

परन्तु मम्मी का चेहरा देखते ही वह उदास हो गया। उसे यह प्रतीत हुआ मानों मम्मी बहुत देर से रोती रही हैं। उनकी सूजी आँखें और उदास चेहरा। वह मम्मी को एकटक देखता ही रह गया। न मम्मी से लिपटा, न कुछ पूछा और न मम्मी ने ही अपनी ओर से कोई पहल की। एकान्त की इस खीझ ने दोनों को झकझोरा। परन्तु संवाद-हीनता की स्थिति पूर्ववत बनी रही। विनय का उत्साह ठंडा हो चुका था। जिस उत्साह के कारण दिनभर स्कूल में पढ़कर वह तरोताजा था, उसी के अभाव में अब थका सा, टूटा सा वह अपने कमरे की ओर बढ़ गया। उसने अनमने ढंग से अपने कपड़े बदले और बिना नाश्ता किये लेट गया।

एक ही बात उसके दिमाग में चक्कर काटने लगी–"आखिर मम्मी-पापा के मध्य अनबन का क्या कारण है? दिन-रात दोनों की बहस, चीख, तर्क-वितर्क का राज क्या हो सकता है?" वह विद्यालय से लौटता तो मम्मी प्रतीक्षा करती मिलती। पहले चुम्बन, फिर पीठ पर प्रेम का मधुर-स्पर्श और फिर ढ़ेर सारी बातें प्रेम प्यार की। वह प्रेम से नहा उठता। पापा जी बड़ी गर्म-जोशी से मिलते–"आ गया मेरा राजा बेटा, आ गया, मेरा विनय आ गया।" उसे सीने से लगा लेते फिर पिता-पुत्र में मधुर संवाद चलता। अक्सर पापा जी से बाते करते समय ही माँ आ जाती। दोनों के मध्य विनय बैठ जाता। इस प्रकार दोनों के प्यार का केन्द्र था विनय। समय लगातार अविरल गति से बढ़ रहा था। एक वर्ष कैसे बीत गया पता भी नहीं चला।

विनय की चेतना पूर्ण जाग्रत अवस्था में थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसका रोम-रोम चेतना का पुंज हो गया हो। एक रात वह कुछ देर से सोया। उसकी आँखें अभी लगी ही थीं कि चीख ने उसे जगा दिया।

— "मैं नहीं चाहता कि अब तुम इस घर में रहो। तुम्हारा मुँह भी मैं देखना नहीं चाहता। निकल जाओ इस घर से।" पापा का स्वर था।

— मैंने यह निर्णय पहले ही कर लिया है। तुम्हें कहने की जरूरत नहीं है।" मम्मी ने आखिरी वाक्य करीब-करीब चीखते हुये पूरा किया ।

— "तुमने स्कूल में मास्टरी क्या कर ली है जैसे जग जीत लिया है। तुम्हारे अहंकार को मैं सहन नहीं कर सकता।"

— छि: छि: शर्म नहीं आती तुम्हें यह कहते हुये। तुमने ही तो मुझे नौकरी के लिये विवश किया था ताकि समाज में मेरा भी स्टेटस हो, रुतबा हो और लोग कहें डा० माथुर की एम० ए० पास पत्नी कारमल में पढ़ाती है। प्लस टू की शिक्षिका है।"

— मेरे इसी प्रोत्साहन से तुम्हारा घमंड आसमान छूने लगा है।"

— "चुप रहो!" मम्मी ने चीखते हुये कहा। मुझे तुम्हारे साथ नहीं रहना। रोज-रोज ज़लील होना मुझे कतई मंजूर नहीं।"

विनय को लगा कि उसके कानों में पिघला सीसा डाला जा रहा है। उसने कान बन्द कर लिए। फिर एक दृश्य आँखों के आगे नाच गया।

कुछ दिन पहले उसके पापा के मित्र जगदीश जी आये थे। वे किसी बड़ी फर्म के मैनेजर हैं। उस दिन मम्मी-पापा हँस-हँसकर बात कर रहे थे। मै काफी प्रसन्न था। पूरे घर में हँसी खुशी का आलम था। उसे ऐसा लगा था कि यह व्यवहार सहज और स्थायी है।

परन्तु जगदीश अंकल उधर विदा हुये, इधर दोनों के चेहरे तन गये तथा वातावरण में एक अजीब सा तनाव फिर उभर आया। लगता नहीं था दोनों कुछ देर पहले परस्पर अनुरक्ति का कितना मनमोहक तराना छेड़ रहे थे? विनय ने सोचा-पापा-मम्मी अब नाटक करने लगे हैं। सफल नाटक। ऐसा नाटक जिसमें अभिनेता अपने असली रूप को भूल जाता है। जब भी कभी कोई मित्र आता है या शिक्षक आते हैं तो वे अपने पुरने दिनों में लौट आते हैं। उनके इस परिवर्तन से अब विनय को भी आश्चर्य नहीं होता था कि यह सब स्वाभाविक नहीं है। हाँ, वह चाहता अवश्य था कि यह दोनों का सहअभिनय वास्तवितका में बदल सके, स्थायी रह सके।

कभी-कभी इस अनबन और तनाव का केन्द्र विनय भी बनता। स्थिति दयनीय तब हो जाती जब दोनों का कोपभाजन वही बन जाता। कल की ही तो बात है। विनय ने मम्मी से जाकर कहा-"सभी आचार्य कहते हैं कि मै अपने पापा पर गया हूँ। उन्हीं के जैसा विद्वान बनूंगा। बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी की गाल पर तड़ातड़ थप्पड़ पड़ने लगा। विनय पिटता रहा, पिटता रहा। परन्तु एक बूँद भी आँसू नहीं बहा था। उसके मन में केवल यही मथता रहा कि "पापा जी की बडाई मम्मी के लिये असहनीय क्यों हो जाती है? क्या वह इस अहमियत को भूल जाये? पापा का उसके प्रति उमड़ता प्रेम भूल जाये? उसे विस्मृति की कब्र में दफन कर दे? नहीं ऐसा नहीं हो सकता है, हर्गिज नहीं हो सकता है।" वह दौड़ा-दौड़ा पापा के पास गया।

उनके पास जाते ही उसके धैर्य का बाँध टूट गया। वह अपने को कुछ कहे, इसके पहले ही वह रोने लगा। पापा ने उसे जी भर के रोने दिया तथा आकाश को साफ हो जाने दिया। फिर उसकी पीठ थपथपाई। ढाढस बँधाया फिर विनय ने धीरे से कहना सुरू किया। वह अपनी प्रशंसा सुनकर पुलकित हो उठे। परन्तु अनुराधा का नाम सुनते ही भड़क उठे। उन्होंने अपनी भड़कीली आवाज में कहा– 'बदतमीज, तुमको उस चुडैल के पास जाने के लिये किसने कहा था?" और फिर तड़ातड थप्पड़ की वर्षा चालू हो गई।

विनय यह समझ नहीं पा रहा था कि वह दोनों के क्रोध का केन्द्र विन्दु कैसे बन जाता है? तथा दोनों के क्रोध को उतारने का माध्यम भी। फिर वह मम्मी-पापा के बिना कैसे रहे? तथा उनके अभाव में कैसे

जिये ? वह यह भांप रहा था कि जब कभी भी उसके बारे में निर्णय यदि उसकी मम्मी की ओर से आता तो पापा उसका विरोध करते और पापा की ओर से आता तो मम्मी विरोध करती। इस प्रकार दोनों हालत में पिटता वही था एक बार उसके पापा ने उसे वाद-विवाद प्रतियोगिता के लिये तैयार करना चाहा तो यह सुनते ही मम्मी भड़क उठी और विनय पर उफन पडी।

—"उल्लू कहीं का वह तुम्हे क्या तैयार करेगा ? खुद कभी इनाम जीता है ?"

—"फिर तुम्हीं तैयारी करा दो न मम्मी।"

—"खबरदार, जो मुझसे कहा।"

इस तनाव में विनय ने प्रतियोगिता में भाग लेने का विचार ही छोड़ दिया। ऐसी विषम परिस्थिति से उसे जूझना पड़ता था।

इधर एक बात वह बड़े ध्यान से देख रहा है कि दोनों लोग लड़ने के लिये बराबर तैयार रहते हैं। कभी पडोसियों, कभी मित्र-मंडली, कभी विनय के शिक्षकोंआदि के आने के कारण स्थिति विपरीत हो जाती है। ऐसे में वे आदर्श पति पत्नी होने का नाटक करते, हैं लेकिन हर रात उनका बेड रूम कुरू क्षेत्र बन जाता। दोनों में वाक युद्ध चलता है। दोनों एक-दूसरे को जलील करने और हराने से बाज नहीं आते। बीच-बीच में विनय के बारे में छिटपुट बातें। विनय यह समझ चुका था कि नौका तट छोड़ चुकी है परन्तु उसे लौटाने की कोशिश से क्यों बाज आया जाये।

इसी हेर–फेर में विनय एक दिन अपने स्कूल गया। वह दिन उसके लिये एक महत्त्वपूर्ण दिन था क्योंकि उस दिन उसे वार्षिक परीक्षा का परिणाम प्राप्त होने वाला था। विद्यालय में विनय को अपना परिणाम मिला तो वह बहुत विस्मित तथा भयभीत हो गया क्योंकि वह अनुत्तीर्ण हो गया था। स्कूल से छुट्टी होने पर वह अनमने ढ़ंग से धीमे–धीमे चलता हुआ घर पहुँचा और अपने कमरे में जाकर कपड़े बदले। फिर वह खिड़की के पास जाकर शून्य में विचार करने लगा। शायद वह अपनी इस असफलता का कारण जानने को व्याकुल था। काफी विचार-मंथन के परिणामतः अपनी इस असफलता का कारण उसने मम्मी तथा पापा के आपसी कलह को ही माना। शायद यही यथार्थ में सत्य भी था। वह अपने मम्मी-पापा के इस कलह का कारण तथा निदान जानना चाहता था क्योंकि वह एक सुन्दर व्यवस्थित घर तथा आदर्शवादी मम्मी-पापा की कल्पना संजोये बैठा था। इसी उत्सुकता के कारण विनय इतना भावुक तथा दृढ़ हो गया कि वह अपने मम्मी-पापा से कारण पूछना चाहता था। परन्तु वह दोनों के उग्र रूप से बहुत भयभीत था।

उस दिन विनय बहुत उदास और परेशान था। इसी परेशानी, उदासी के कारण वह बिस्तर पर लेट गया। सूर्य अस्ताचल की ओर पहुँच गया था चारों ओर अंधकार सा छाने लगा था। कमरे में भी अंधकार काफी फैल चुका था फिर भी रोशनदान से आने वाली सूर्य की किरणें लाल-लाल व इन्द्रधनुषी थीं। जो कि एक कतार में अन्दर आ रही थीं। इसी प्रकाश में विनय की नजर कमरे की दीवार पर टँगी पापा की फोटो पर पड़ी। वह कुछ सोचकर उठा और उस फोटो के पास जाकर ही खड़ा हो गया। मानो वह उस तस्वीर से बातें करना चाहता हो। वह भावना के अथाह सागर में इस प्रकार डूब चुका था कि धैर्य का सहारा उसमें किंचित मात्र न था।

भावावेश की ऊँची–ऊँची उत्ताल तरंगों पर उतरते चढ़ते वह इतना आत्म-विभोर हो गया कि वह उस तस्वीर से कहने लगा–

'नही ! अपनी असफलताओं का कारण मैं नहीं हूं। पापा आप हैं, आप, हां आप ही मेरी असफलताओं का कारण हैं।

आप दोनों ही मेरे जीवन के दुश्मन हैं। आप लोगों ने ही मेरी जिंदगी खराब की है। आप लोगों ने ही मुझे बर्बाद किया है। छिः मुझे तो शर्म आती है ऐसे

माँ-बाप से । लानत है ! आप लोगों पर कि आप लोग इतने बड़े होते हुये भी बच्चों की तरह हर क्षण लड़ते रहते हैं। मगर मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं तो आप लोगों का बेटा हूँ न, गुलाम हूँ. नौकर हूँ कि जब चाहा अपनी खुशी का इजहार कर दिया और जब चाहा अपना गुस्सा मुझ पर उतार लिया । मैं सिवाय लात-जूते खाने वाले साधन के अलावा और क्या हूँ ?

भगवान ने शायद मुझे यहाँ इसीलिये भेजा है कि मैं आप लोगों का गुलाम बनकर रहूँ । पता नहीं क्या युग है ? एक बेटे से गुलाम बना दिया मुझे। मुझसे बेटा होने का अधिकार आप लोगों ने छीन लिया।

मैं पूछता हूँ कि जब आप लोगों को मैं पसन्द नहीं था तो मुझे जन्म हीं क्यों दिया ? क्यों मुझे इस घर में आप लोग लाये । मैं अपने आप को ऐसे माता-पिता पाकर कभी भी माफ नहीं कर सकूँगा । पापा I hate you hate ...... "

कहते-कहते विनय की आँखें सजल और लाल हो गयीं तथा वह प्रतिक्षण विक्षिप्त सा होने लगा था। परन्तु आज वह सारी वेदनाओं का एक-एक कर वर्णन करना चाहता था और वह लगातार कहता जा रहा था।

हे भगवन ? मुझे अपने माता-पिता से कोई मोह नहीं है तथा उन्हें भी मुझसे कोई प्यार नहीं है। इसीलिये हे ईश्वर ! कृपा कर सदा-सदा के लिये मुझे तुम उठा लो । मुझे इस पृथ्वी से उठा लो ।

अब मैं इस संसार में इस नरक में और नहीं रहना चाहता ।

तभी उसके माता-पिता जो कि दरवाजे पर खड़े होकर सब कुछ सुन रहे थे दौड़ कर उससे आ लिपटा । विनय ने दोनों की ओर देखा । दोनों की आँखों में आँसू भरे थे । तभी विनय ने कहा--

"मम्मी-पापा, I Love you"

– – –

जब तक तुम्हारे शरीर में जान है तुम दूसरों की सहायता करो । —अश्वघोष

जो बिना अध्ययन के केवल कल्पना का आश्रय लेता है उसके पंख अवश्य है किन्तु पग नहीं ।
—जुबर्ट

मानव का स्मृति–केन्द्र

– यशोवर्धन सिंह द्वादश–ख

[मानव-मस्तिष्क की जटिल संरचना में स्मृतियाँ कैसे संजोयी रहती हैं, यह बात स्पष्ट करने के प्रयास में किशोर लेखनी ने उन स्मृतियों के परि ज्ञान–कर्ता का परिचय तथा इसके महत्व को दर्शाया है।]

–सम्पादक

डा० पेनफील्ड अमेरिका के मांट्रियल न्यूरोला–जिकल इंस्टीट्यूट में मस्तिष्क रोग के चिकित्सक पेन फील्ड मिरगी के रोगियों का आपरेशन करते समय अक्सर मस्तिष्क सम्बन्धी प्रयोग भी किया करते थे। उनका लक्ष्य मुख्य रूप से मानव के स्मृति-ज्ञान से सम्बन्धित अंग का पता लगाना था।

अपने अथक प्रयासों के फलस्वरूप सन् १९५२–५३ में एक महिला के आपरेशन के दौरान उन्होंने मस्तिष्क में स्थित स्मृति-केन्द्र को खोज निकाला। इस महत्वपूर्ण खोज के लिये उन्हें नोबल पुरस्कार मिला।

मस्तिष्क में स्थित स्मृति-केन्द्र के भाग में किसी विशिष्ट बिन्दु पर विद्युत–प्रवाह करने से वहाँ अंकित स्मृतियाँ शब्दों के रूप में मुँह से निकल आती हैं। इस प्रकार स्मृति केन्द्र के क्षेत्र में ऐसे हजारों बिन्दु होते है, जहाँ जीवन में घटने वाली विभिन्न घटनाएँ उसी रूप मे अंकित होती हैं। स्मृति केन्द्र की तुलना ग्रामोफोन रिकार्ड से की जा सकती है। ग्रामोफोन की सुई रिकाड कि जिस लाइन पर रख देंगे, वहाँ अंकित शब्दों या गानों की धुन सुनाई देगी। ठीक वैसा ही स्मृति केन्द्र के साथ होता है। उसके जिस बिंदु पर आप विद्युत प्रवाह करेगें, वहाँ अंकित शब्द उत्तेजना पाकर मुख से निकलेंगे। मस्तिष्क के स्मृति केन्द्र में मनुष्य के जीवन में घटने वाली हर घटना अंकित होती है। घटना चाहे साधारण हो या असाधारण। हम कभी-कभी अपने जीवन में घटने वाली घटना पर ध्यान न देकर उसे भूल जाते हैं तथा किसी घटना को हम जीवन पर्यन्त याद रखते हैं किन्तु हमारा मस्तिष्क यह अन्तर नहीं रखता है। वह अपने अपने स्मृति पटल पर दोनों प्रकार की घटनाओं को समान रूप से अंकित करता है और उन्हें जीवन पर्यन्त सुरक्षित भी रखता है।

स्मृति केन्द्र में अंकित स्मृतियों में से कोई विशेष स्मृति उस समय याद आती है जब उससे मेल खाती कोई बात चल रही हो या घटना घटित हो रही हो। याद दिलाने का यह कार्य हमारे शरीर के अन्दर उत्पन्न प्राकृतिक संवेदन तरंगे मस्तिष्क के स्मृति केन्द्र में उस विशेष बिंदु को तरंगित करके करती है। परीक्षण के दौरान डा० पेनफील्ड ने यह कार्य विद्युत तरंगों से लिया था।

विचार करते समय भी संवेदन तरंगे उस खास विषय से सम्बन्धित स्मृतियाँ जिन-जिन बिंदुओं पर अंकित होती हैं, उन्हीं बिंदुओं को तरंगित कर विशेष विषय का तारतम्य बनाये रखती हैं। इन्हीं में से कभी कोई तरंग किसी अनचाहे स्मृति बिंदु को तरंगित कर बैठती है और विषय से हटकर कोई दूसरी ही बात याद आ जाती है, यही कारण है कभी-कभी विचार तंद्रा टूट जाती है और जेहन में तरह-तरह की बातें याद आने लगती हैं।

मस्तिष्क में जिस स्थान पर दृष्टि, श्रवण बातचीत आदि के केन्द्र होते हैं, उन्हीं के पास स्मृति केन्द्र भी होता है हमारी रोज की दिनचर्या से स्मृति केन्द्र का गहरा सम्बन्ध होता है, जब हम कोई घटना या वस्तु देखते हैं या कोई आवाज सुनते हैं, तो हमारे मस्तिष्क में जैव रासायनिक संकेत अंकित हो जाते हैं। इस प्रकार अंकित संकेत कभी नहीं मिटते हैं। जैसे-जैसे हमारा जीवन आगे बढ़ता है, स्मृतियों का भंडार भी बढ़ता जाता है।

जब हमें अपने जीवन में कोई नया अनुभव होता है, तब उससे सम्बन्धित स्मृति बाहर आती है। तब नयी और पुरानी स्मृतियों का आपस में तादात्म्य और सम्बन्ध जुड़ता है फलस्वरूप नये अनुभव का विकास होता है।

एक अत्यंत रोचक और व्यावहारिक उदाहरण लें। एक शिशु पहली बार एक कुत्ते को देखता है। इससे पहले कुत्ते के विषय में उसे कोई पूर्व अनुभव न होने के कारण उसके मन में कुत्ते के विषय कोई प्रतिक्रिया नहीं होती है किंतु अचानक वह कुत्ता उस शिशु पर झपटा है और वह डर कर रोने लगता है। कुछ देर बाद वह बच्चा इस घटना को भूल कर सामान्य हो जाता है। कुछ दिनों पश्चात शिशु को एक कुत्ता फिर से दिखाई देता है। यह कुत्ता हालांकि शिशु पर झपटता नहीं है और दूर खड़ा रहता है किन्तु शिशु उसे देखकर बुरी तरह रोने लगता है यह स्थित शिशु के मस्तिष्क में अंकित पूर्व स्मृति के जाग्रत होने के कारण उत्पन्न होती है।

महत्व— डा० पेनफील्ड की इस अद्भुत खोज से मानसिक रोगों के इलाज में एक नई क्रांति सी आ गई। जीवन में घटी किसी घटना से अथवा दुर्घटना वश मस्तिष्क को गहरा आघात लगता है यह बचपन में किन्हीं कडुवे अनुभवों से वास्ता पड़ता है तो ऐसे अनुभव स्मृति केन्द्र में छिपकर रहते हैं और धीरे-धीरे मानसिक प्रक्रिया विकृत होती रहती है, जो आगे चलकर मानसिक रोग का कारण बनती है। ऐसे रोगियों का इलाज उनके मस्तिष्क में स्थित स्मृति केन्द्र मे अंकित स्मृतियों को रिकार्ड कर उसका अध्ययन करके किया जाता है। इस से विभिन्न मानसिक रोगों का इलाज सफलता पूर्वक करने की दिशा में काफी बड़े पैमाने पर कार्य हो रहा है।

★ आह्वान ★

अरविन्द त्रिवेदी
(द्वादश–ख)

[भविष्य के प्रति उर्जस्वित भावना के स्वर, जिनमें वर्तमान की व्यथा भी झांक रही हैं।] –सम्पादक

धधक रहा है देश, वेश पहने रणवीर जवानों का,
प्रेम शांति अब नहीं, चाहिए तप्त लहू मर्दानों का।
चीख उठी मानवता सिसकी लेती है माँ की ममता,
बन्धुभाव घुट रहा बिलखती बेचारी बनकर समता।
रक्त देख अपने पुत्रों का जोश बढ़ा परवानों का ।।१।।
धधक रहा है देश, वेश पहने रणवीर जवानों का,
याद करो राणा की बेटी घास की रोटी खाती थी।
दुःख हमेशा मिले किन्तु वह देशगीत ही गाती थी,
याद करो चेतक ने थक कर अपने प्राण गंवाये थे।
हिन्दू गौरव शौर्य शक्ति के भगवान ध्वज फहराये थे,
लक्ष्मी बाई स्वयं बांध तलवार युद्ध में कूद पड़ी ।
मरते दम तक मरदानों सी अपनी रानी खूब लड़ी,
किन्तु रहा अब नहीं शेष कोई महत्व बलिदानों का ।।२।।
धधक रहा है देश, वेश पहने रणवीर जवानों का,
हिन्दी चीनी भाई-भाई का नारा था खूब दिया।
दुष्ट चीन ने लम्पटता से पीठ में छूरा घोंप दिया,
बेमानी हो गई शान्ति की नीति सोचने वालों की,
सफल हुए मंसूबे फिर से पंख नोचने वालो के;
हुआ नहीं व्यवहार सही भारत –नेता नादानों का ।।३।।
देश बांग्ला आज कर रहा खुले आम गद्दारी है,
मुसलमान को आज नहीं भारत की मिट्टी प्यारी है।

देना होगा आज हमें उत्तर प्रत्येक बहानों का,
धधक रहा है देश, वेश पहने रणवीर जवानों का ।। ४ ।।
प्रेम शांति अब नहीं चाहिए तप्त लहू मर्दानों का ।
वर्ष कई है बीत चुके कहने को हम आजाद हुये,
बार-बार विश्वासघात से हम सदैव बर्बाद हुये ।
लुटती हैं बहनों की अस्मत चढ़तीं बलि कुप्रथाओं पर,
नहीं लगा है कोई अंकुश अब तक इन विपदाओं पर ।
फूलों जैसे कोमल बालक कठिन परिश्रम करते हैं,
रुखी सूखी रोटी खाकर सबके सम्मुख झुकते हैं ।
रह न सकेगा गौरव उनको संस्कृति के प्रतिमानों का, ।।५ ।।
धधक रहा है देश, वेश पहने रणवीर जवानों का ।
बहुत देख लीं क्षमा दया अब तो आंखें पथराई हैं,
माँ के वक्ष स्थल पर दुश्मन खोद रहा अब खाई है।
उठो लाडलो माँ के पूतों फिर वीरों का वेष धरो,
अपनी प्यारी मातृभूमि को अरिजन के निःशेष करो।
लड़ो, दिखा दो तनकर तनका सुप्त सिंह अब खड़ा हुआ,
एक बार में बैरी देखो समर भूमि में पड़ा हुआ।
फिर करना तुम गर्व मान रखना तब निज अभिमानों का,
धधक रहा है.................................. ।

विश्व का प्रसिद्ध युद्ध

गुलाब-युद्ध (The War of Roses)

—आशुतोष तिवारी नवम 'क'

पन्द्रहवीं शताब्दी में ब्रिटेन में भयानक गृह युद्ध हुए। इनका प्रारम्भ तब हुआ जब ब्रिटेन के तत्कालीन शासक हेनरी षष्ठ (Henry VI) की मानसिक स्थिति खराब हो गयी और गद्दी पर बैठने के लिये दो राजवंशों 'लैनकास्टर' और 'यार्क' के बीच झगड़े हुये। इन युद्धों को 'गुलाब युद्ध' इसलिये कहते हैं क्योंकि दोनों वंशों के प्रतीक चिह्न गुलाब के फूल थे। लैनकास्टर का लाल गुलाब और यार्क का सफेद गुलाब। तीस वर्ष लम्बे इन युद्धों में अंतिम विजय लैनकास्टर के हेनरी ट्यूडर की हुई। उसने नये राजवंश की स्थापना की।

यह ब्रिटेन के सिंहासन के लिये लैन कास्टर और यार्क वंशियो के बीच एक संघर्ष था। लैन कास्टर वंशी एडवर्ड तृतीय के तीसरे पुत्र जान आफ गाउन्ट, ड्यूक आफ लैनकास्टर के वंशज थे। यार्कवंशी एडवर्ड तृतीय के चौथे पुत्र के वशंज थे। परन्तु विवाह सम्बन्ध के नाते, दूसरे पुत्र से प्राप्त अधिकार भी रखते थे। इस प्रकार इनका दावा लैन कास्टर वंश की अपेक्षा अधिक मजबूत था। परन्तु १३९९ में लैनकास्टर का वंश सिंहासनारूढ़ हो चुका था। कानून के अनुसार एडवर्ड तृतीय के अन्य सभी वंशजों के दावों को पृथक कर दिया गया था।

रिचर्ड–ड्यूक आफ यार्क दूसरे और चौथे पुत्र के वंशों का प्रतिनिधित्व करता था। लैनकास्टर वंश का प्रतिनिधि हेनरी षष्ठ एक निर्बल राजा था एडमंड ड्यूक आफ समरसैट ब्योफोर्ट वंश का प्रतिनिधि था। यह एडवर्ड तृतीय के तीसरे पुत्र का वंशज था। ड्यूक आफ यार्क ने हेनरी षष्ठ और ड्यूक आफ समर सैट के विरुद्ध दावा ठोंक दिया। इसी कारण युद्ध छिड़ गया।

गुलाब युद्ध की प्रमुख लड़ाइयाँ :

पहली लड़ाई सेंट एलबस पर मई १४५५ में हुई। यार्क, जीता, समरसैट मारा गया। १४५९ में ब्लोर हीथ की लड़ाई में लैनकास्टर वंशी फिर हारे। उसी वर्ष लुडलो की लड़ाई में यार्किस्ट हारे। जुलाई १४६० यार्किस्ट लौटे और नार्थम्पटन की लड़ाई में लैनकास्टर हारे। दिसम्बर १४६० यार्क और सैलिस्बरी को बंदी राजा की रानी ने वेक फील्ड (Wakefield) की लड़ाई में हराया और दोनों का कत्ल कर दिया। फरवरी १४६१ की दूसरी लड़ाई में बारविक हारा। फरवरी १४६१ मार्टिमर्स क्रास (Mortimer's Cross) की लड़ाई में यार्क-पुत्र ने लैनकास्टर वंशियो को हाराया। १४६१ एडवर्ड और वारविक ने लंदन पर कब्जा कर लिया। एडवर्ड स्वयं एडवर्ड चतुर्थ के नाम से राजा बना। इसी वर्ष टौटन की सबसे बड़ी लड़ाई हुयी। इसमें लैनकास्टर बुरी तरह से हारे। राजा रानी और प्रिंस भाग गये।

हैक्सम की लड़ाई में लैनकास्टर फिर बारविक से हारे। १४६५ में हेनरी षष्ठ फिर पकड़ा गया और

लंदन लाया गया। १४६९ ऐजकोट फील्ड की लड़ाई में वारविक ने एडवर्ड चतुर्थ को हराकर बंदी बना लिया। मार्च १४७० में लोसकोट फील्ड की लड़ाई; में वारविक हारकर फ्रांस भाग गया और लैनकेस्टर बंशियों से जा मिला। सितम्बर में इग्लैंड पर आक्रमण कर दिया। सेना के असहयोग से एडवर्ड बच कर फ्रांस भग पड़ा। वारविक हेनरी षष्ठ के नाम इग्लैंड का स्वामी बन बैठा। अप्रैल १४७१ की लड़ाई में वारविक मारा गया। मई माह में एडवर्ड ने ड्यूकस बरी की लड़ाई में रानी मार्गरेट को हराया। प्रिंस आफ वेल्ज़ मारा गया। बाद में हेनरी की भी जेल में मृत्यु हो गयी।

एडवर्ड ने १४८३ तक अपनी मृत्यु के समय तक शांति से राज्य किया। उसके बाद उसका १२ वर्षीय पुत्र एडवर्ड पञ्चक सिंहासन पर बैठा। किन्तु कुछ महीनों बाद उसके चाचा ने सिहांसन छीन लिया। उस बालक राजा तथा उसके भाई का कत्ल कर दिया गया। उसने रिचर्ड तृतीय के नाम से कई वर्षों तक शासन किया। इसके १४ वर्ष बाद अंतिम संग्राम हुआ। लैनकास्टर के अंतिम वंशज हेनरी ट्यूडर के फ्रांस के राजा की मदद् से रिचर्ड को हराया व मार दिया। उसने नये राजवंश ट्यूडर राज वंश की स्थापना की।

इन युद्धों में इग्लैंड में जागीरी प्रथा केरन प्रथा अर्थात् का नाश हुआ।

卐 कृषक 卐

सुभाष चन्द्र शर्मा आचार्य

भारतीय कृषक-जीवन पर एक मौलिक काव्यांजलि -सम्पादक

श्यामल तन मे उज्ज्वल मन है,
कर्म साधना आठों याम
हे ! कृषक तुम्हें शत शत प्रणाम

तारा मण्डल घड़ी तुम्हारी,
बिन चाबी गतिमान रहे।
हुआ सवेरा करो जागरण,
अरुणशिखा मतिमान कहे ।
पंचवटी सी पावन कुटिया,
गाँव पुण्य साकेत ललाम
हे! कृषक तुम्हें शत-शत प्रणाम

खाते चारा प्रेम परोसा,
पशु अपनी पशुता भूले ।
ब्रह्म 'मुहूरत' में प्रभु पूजा,
गले में लघु घंटा झूले ।
गौ की सेवा होती घर-घर,
यह गोकुल वृन्दावन धाम
हे ! कृषक तुम्हें शत-शत प्रणाम

गोद उतर पलना सुत सोवै,
कोयल सी गावे नारी ।
पंचम स्वर में चकिया गाजे,
कर चूड़ी सरगम न्यारी।
गेहूँ जीवन चूर्ण आतमा,
काल चक्र गति है अविराम
हे ! कृषक तुम्हें शत-शत प्रणाम

माटी में जीवन तलासते,
बखर, तिफारा कठा चले।
रोटी माठा लावै गोरी,
उड़ती चूनर गले मिले,
नारी लज्जा वस्त्र लपेटे,
चले कन्हैया ऊँगली थाम
हे ! कृषक तुम्हें शत–शत प्रणाम

वैज्ञानिक विश्वास छोड़कर,
तुमने लोक रीति को माना।
कर्म सहारे भाग्य बदल कर,
रोटी में अमृत पहचाना।
पंडित, मुखिया ओझा के स्वर
पूर्ण करे सब बिगरे काम
हे ! कृषक तुम्हें शत–शत प्रणाम

तुम कर्म युद्ध के महारथी,
जीवन रण में निर्भीक रहे।
हम कागज, कलम, कल्पना ले,
इस स्वप्न लोक में भटक रहे।
माया की छाया को ढूँढे,
रात, प्रात दोपहरी, शाम
हे ! कृषक तुम्हें शत–शत प्रणाम

आपस की क्या बैर बुराई,
है निजत्व का ज्ञान नहीं
पशुओं को भी शिक्षित करना,
ब्रह्म ज्ञान पहचान यही
सदियों से संस्कृति की रक्षा
प्रेम मिलन में राम–राम
हे ! कृषक तुम्हें शत-शत प्रणाम

तुलसी-महिमा

– गौरव सक्सेना

अष्टम ख

[वास्तव में तुलसी की महिमा को हृदय से अनुभव किया है इस बाल लेखक ने; किन्तु व्यवस्था और क्रम का निर्वाह करने में बाल-बुद्धि होने के कारण कुछ कमी रह गयी है। – सम्पादक]

कवि का रचना-संसार उसकी कृति होती है। वह अपनी कृति में अदृष्ट की समग्रता को समाहित करता है। वाल्मीकि, कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति एवं कल्हण की कृतियाँ मानव संस्कृति की अमर धरोहर हैं। हिन्दी के मूर्धन्य कवि 'तुलसीदास' की रचना 'राम चरित मानस' एक कविकृति से ऊपर उठकर धर्म-ग्रन्थ बन गया है और उसने जनमानस के हृदय में अपना स्थान भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि ग्रन्थ के रूप में स्थापित किया है।

तुलसी का काल मुगल सम्राट अकबर का यौवन काल था। उस समय भी उन्होंने अपना समन्वयवादी सन्देश जन-जन तक पहुँचाने के लिए राम-कथा को माध्यम बनाया। निर्वासित राजकुमार राम के रूप में उन्होंने महाराणा प्रताप को देखा। भारतीय तरुणियों के बल पूर्वक हरण के आधार पर सीता हरण की अवधारणा की। राम–रावण के युद्ध में भी प्रताप और अकबर के युद्ध की झाँकी सहज ही देखी जा सकती है।

'मानस' विचार, भाव एवं कला की अनूठी त्रिवेणी है। इसमें समाज, भक्ति, धर्म, अध्यात्म एवं राजनीति के यथार्थ एवं युग-बोध को अभिव्यक्ति दी गई हैं। रावण, शूर्पणखा, नारद, बिन्ध्याचल के तापस काम की मर्यादा को तोड़ देते हैं। अनेक बार क्षत्रियों का नाश करने के कारण परशुराम को अपनी वीरता पर अहंकार हो गया और वही लक्ष्मण से तर्क में बाल–हास का विषय बने।

व्यर्थ का पाण्डित्य दिखाने वाले राजाओं के अविवेक से समाज में भौतिकता का वातावरण बना था। जनता भुखमरी से त्रस्त थी। वर्णाश्रम व्यवस्था नष्ट हो गई थी। नव यौवन पत्नी के रूप-वैभव में पड़ कर अनेक युवक अपने माता–पिता की सेवा से विरत हो रहे थे। इन स्थितियों का वर्णन करते हुये तुलसी ने लिखा है।

जाके नख अरु जटा बिसाला।
सोई तापस प्रसिद्ध कलिकाला।।
मिथ्यारंभ दंभ रत जोई।
ताकहुँ संत कहइ सब कोई।।

परिणाम स्वरूप

कलि बारहिं बार दुकल परै।
बिनु अंन्न दुखी सब लोग मरै।।

नृप पाप परायण धर्म नहीं ।
करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं ।।

तथा

बरन धरम नहि आश्रम चारी ।
श्रुति विरोध रत सब नर नारी ।।

इसी प्रकार

नारि मुई गृह सम्पति नासी ।
मूड़ मुड़ाइ होहिं सन्यासी ।।
गुन मन्दिर सुन्दर पति त्यागी ।
भजहि नारि पर पुरुष अभागी ।।

और

सुत मानहिं मातुपिता तब लौं ।
अबलानन दीख नहीं जब लौं ।।

विविध लोक संघर्षो के विपरीत मानस में संत समाज, स्वस्थ परिवारएवं समता के माध्यम से आदर्श युग बोध का वर्णन भी है--

मुद मंगलमय संत समाजू ।
जो जग जंगम तीरथ राजू ।।

तथा

एक नारि व्रत सब भारी ।
ते मन वच क्रम पति हितकारी ।।

अपनी विवाहित कन्या सीता को पति की अनुगामनी देखकर पिता जनक का हृदय हर्ष सेविह्वल हो जाता है--

पुत्रि ! पवित्र किये कुल दोऊ ।
सुजस धवल जग कह सब कोऊ ।।

माता-पिता और गुरु की सेवा का पाठ मानस की आधार शिला है। रघुनाथ स्वयं उदाहरण प्रस्तुत करते हैं--

प्रात काल उठि कै रघुनाथा ।
मात-पिता गुरु नावहि माथा ।।

एक ओर जहां खलनायक रावण ने नारियों की निंदा करते हुये उनमें आठ अवगुण बताए हैं--

साहस अनृत चपलता माया ।
भय अविवेक असौच अदाया ॥

किन्तु महाकवि तुलसी ने इन अशिष्ट विचारों से भारतीय संस्कृति की रक्षा करते हुए नारी के देवी रूप को सराहा है--

अनुज बधू भगिनी सुतनारी ।
सुन सठ ये कन्या सम चारी ॥
इनहि कुदृष्टि विलोकइ जोई ।
ताहि बधे कछु पाप न होई ॥

रामचरित मानस के श्रीराम भक्ति, शील और सौन्दर्य के अवतार हैं । जब समाज में नैतिक पतन के फलस्वरूप गति अवरुद्ध होती है, तब ही राम जैसे परम पुरुष का जन्म जन कल्याण के लिये होता है--

जब-जब होइ धरम की हानी ।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥
तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा ।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥

मुसलमानों ने मन्दिरों को ढहा कर मूर्तियों को तोड़ कर, तलवार के दम पर अपने धर्म का प्रचार प्रसार किया । उसी समय नए-नए धार्मिक पंथों का उदय हो रहा था । बौद्ध, सिद्ध एवं नाथ योगियों में पंचमकारों (मानिक, मदिरा, मत्स्य, माँस, मैथुन) के प्रयोग ने हिन्दू धर्म के पतन का मार्ग प्रशस्त कर दिया था । तुलसी ने शैव, वैष्णव एवं पुष्टि मार्ग सम्प्रदायों में समन्वय स्थापित किया--

शिव द्रोही मम दास कहावा ।
सो नर मोहिं सपनेहु नहिं भावा ॥
शंकर विमुख भगति चह मोरी ।
सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥

अगुनहि सगुनहि नहि कछु भेदा ।
गावहिं श्रुति पुरान बुध वेदा ॥
अगुन अरुप अलख अज जोई ।
भगत प्रेम बस सगुन सो होई ॥

मानस ने ज्ञान भक्ति और कर्म का समन्वय दिखाते हुये स्पष्ट किया है कि धर्म ज्ञान और कर्म के बिना लूला लँगड़ा और भक्ति के बिना हृदय हीन एवं निष्प्राण है ।

रामचरित मानस में तुलसीदास ने द्वैत, अद्वैत, द्वैताद्वैत, निर्गुण-सगुण, विद्या-अविघार, माया-प्रकृति, जीव के भेद-अभेद के बीच समन्वय स्थापित कर सरल मानवीय अध्यात्म मार्ग प्रस्तुत किया--

ईश्वर अंस जीव अविनासी ।
चेतन अमल सहज सुखरासी ।।

• • • • •

सीय राम मय सब जग जानी ।
करहुँ प्रनाम जोरि जुगपानी ।।

मानस में तत्कालीन शासकों की तानाशाही एवं प्रजा की दीन दशा का यथार्थ वर्णन भी किया गया है--

परम स्वतंत्र न सिर पर कोई ।
भावहि मनहि करहु तुम सोई ।।

• • • • •

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी ।।

इन सबके उपचार स्वरूप महा कवि ने राम-राज के आदर्श की स्थापना की है। वे कहते हैं-

दैहिक दैविक भौतिक तापा ।
राम राज नहिं काहुहि ब्यापा ।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती ।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिनीती ।।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना ।
नहिं कोउ अवुध न लच्छन हीना ।।

रामचरित मानस में अनेक मर्म स्पर्शी प्रभावोत्पादक भावो, रसों का वर्णन है। प्रमुख स्थल राम का जनकपुरी की पुष्प वाटिका में सीता दर्शन, अयोध्या त्याग, भरत मिलाप, शबरी का आतिथ्य लक्ष्मण को शक्ति लगने पर राम विलाप, भरत की प्रतीक्षा, राम-रावण युद्ध, हनुमान द्वारा लंका दहन इत्यादि हैं।

पुष्प वाटिका की मनोहर श्रृंगार छटा क्षण भर के लिए तुलसीदास के भक्त होने में सन्देह उत्पन्न कर देती है। श्रृंगारी कवि से श्रेष्ठतर सौन्दर्य चेष्टाओं का मर्यादित वर्णन देखिए--

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि ।
कहत लखन सन रामु हृदय गुनि ।।

मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही ।
मनसा विश्व विजय करि लीन्ही ।।

० ० ० ०

जनु विरंचि सब रचि निपुनाई ।
विरचि विश्व कहुँ प्रकट देखाई ।।
सुन्दराता कहुँ सुन्दर करई ।
छवि गृह दीप सिखा जनु बरई ।।

अयोध्या के त्याग के समय सीता की मनोदशा का अत्यंत भावपूर्ण वधू-चित्र कवि ने प्रकट किया है । जिस कोमलांगी सीता के चरणों ने धरती नहीं छुई वह पति के साथ वन गमन को उद्यत है--

पलंग पीठि तजि गोद हिंडोरा ।
सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा ।।
सो बन बसिहि तात केहि भाँती ।
चित्र लिखित कपि देखि डेराती ।।
डरपहिं धीर गहन सुधि आए ।
मृग लोचनि तुम भीरु सुभाए ।।
हंस गवनि तुम नहिं वन जोगू ।
सुनि अपजस मोहिं देइहि लोगू ।।

एक सुन्दर राजकुमार का छोटे भाई और स्त्री को लेकर घर से निकलने और वन-वन फिरने से अधिक मर्मस्पर्शी दृश्य और क्या हो सकता है । वन पथ की ग्राम बधुओं के द्वारा पूछे जाने पर कि श्यामल, गौर किशोर तुम्हारे कौन हैं । प्रश्न का उत्तर सीता कुल वधू की भाँति सहज भारतीय परम्परा में देती है--

सहज सुभाय सुभग तनु गोरे ।
नाम लखन लघु देवर मोरे ।।
बहुरि बदन विधु अँचल ढांकी ।
पिय तन चितै भौंह करि बाँकी ।।
खंजन मंजु तिरीछै नैननि ।
निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि ।।

वही कोमलांगी सीता द्वारा हरण किये जाने पर अशोक वाटिका में श्यामल तन वाले राम के दर्शन के लिये विह्वल हैं । पंचवटी में सीता को न पाकर राम तो पशु-पक्षियों, भ्रमरों, तरुलता वल्लरियों से सीता को पूछते हैं--

हे खग मृग हे मधुकर स्त्रेनी ।
तुम देखी सीता मृगनयनी ।

रामचरित मानस शिल्प और भाषा की दृष्टि से एक सुदृढ़ रचना है। इसमें छप्पय तथा दोहा चौपाई आदि छंदों का प्रयोग किया गया है । महाकवि ने स्वयं ही लिखा है कि--

आखर अरथ अलंकृति नाना ।
छंद प्रबंध अनेक विधाना ।।
छंद सोरठा सुन्दर दोहा ।
सोइ वहु रंग कमल कुल सोहा ।।

रामचरित मानस की भाषा सर्व जन बोध्–गम्य प्रांजल सूक्ति प्रधान अवधी है। मानस की अमर सूक्तियाँ महा कवि के गूढ़ व्यावहारिक चिंतन को उजागर करती हैं--

सठ सुधरहिं सत संगति पाई ।
पारस परस कुधातु सुहाई ।।
धीरज धरम मित्र अरु नारी ।
आपत काल परखिये चारी ।।
सुरनर मुनि सबकी यह रीति ।
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ।।
छुद्र नदी भरि चल उतराई ।
जस थोरेहु धन खल बौराई ।।
जे कामी लोलुप जग माहीं ।
कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं ।।
भनिति भदेस वस्तु भलिवरनी ।
राम कथा जग मंगल करनी ।।

मानस लोक कल्याण का ब्रह्माण्ड है । उसमें 'सत्यं शिवं सुन्दरम' साकार हो उठा है। "स्वान्तः सुखाय" रघुनाथ-गाथा सर्वजन सुखाय हो गयी । तुलसी की काव्य रचना का उद्देश्य ही लोक कल्याण है--

कीरति भनिति भूति भलि सोई ।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई ।।

रामचरित मानस के महत्व को शब्दों के कलेवर में नहीं बाँधा जा सकता है। इसकी महत्ता का बोध कराने के लिये इतना ही पर्याप्त है कि– तब से अनवरत रूप से प्रत्येक वर्ष प्रत्येक गली, नुक्कड़, चौराहे पर विशाल जन समूहों के बीच अत्याचारी रावण मारा जाता है। यह कथा मात्र राम की कथा नहीं है। बल्कि--

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि

का सार है।

सुपथ पर प्रभु हमको ले चलो

– त्रिवेणी नारायण जायसवाल द्वादश ख

[एक वैदिक शैली में की गयी भावना-सम्पन्न प्रार्थना, जिसे किशोर कवि ने बड़े प्रयास पूर्वक निबाहा है। – संम्पदक]

दिव्य–गुण–धारी जग के जनक,
दुरित–दल सकल भगा दो दूर।
किंतु जो करे आतम कल्याण,
उसी को भर दो प्रभु ! भरपूर ॥१॥

सुपथ पर प्रभु ! हमको ले चलो,
प्राप्त हो संतत ध्रुव कल्याण।
सकल कृतियाँ हैं तुमको विदित,
पाप–दल को कर दो म्रियमाण ॥२॥

पुण्य की प्रभा चमकने लगे,
पाप का हो न लेश भी शेष।
भक्ति में नमन तुम्हें भरपूर,
सहस्रों बार परम प्राणेश ॥३॥

असत से सत, तम से नव ज्योति,
मृत्यु से अमर तत्व की ओर ।
हमें प्रतिपल प्रभुवर ! ले चलो,
दिखाओ अरूणा करूणा कोर ॥४॥

दिवस के प्रथम, रात्रि से पूर्व,
भक्ति से स्वार्थ–त्याग के साथ।
आ रहें है प्रतिदिन ले भेंट,
तुम्हारी चरण-शरण में नाथ ॥५॥

चलें हम कभी न सत्पथ छोड़
विभव युत होकर तजें न त्याग।
हमारे अन्दर रहे न शत्रु,
सुकृत में रहे हमारा भाग ॥६॥

सर्वदर्शक प्रभु खल-बल-दलन,
विभव सम्पन्न इन्द्र अधिराज ।
दिशा-विदिशाओं में सर्वत्र,
हमें कर दो निर्भय निर्व्याज ।।७।।

निखिल बल अधिपति ! मैंने आज,
वृद्ध का आश्रय लकुटि समान ।
तुम्हारा अवलम्बन है लिया,
शरण में रक्खो, हे भगवान ।।८।।

मनुज अपने घर में ज्यों रहे,
चरें गौएँ ज्यों जौ का खेत ।
हृदय में रम जाओं त्यों नाथ,
बना लो अपना इसे निकेत ।।९।।

वरूण ! हम अविवेकी दिन-रात,
किया करते हैं जो व्रत-भङ्ग ।
समझकर अपनी संतति पिता !
उबारो हमें क्षमा के संग ।।१०।।

परम ऐश्वर्ययुक्त हे इन्द्र !
हमें दो ऐसा धन स्पृहणीय ।
बनें हम जिससे चिन्तनशील,
बना लो मुझको सदा स्वकीय ।।११।।

मचलता मेरा मानस आज,
पिता ! पाने को तेरा धाम ।
अरे वह तेरा अद्‌भुत धाम,
जहाँ है जीवन का विश्राम ।।१२।।

तुम्हारे वत्सल रस से भीग,
हृदय की करूण कामना कान्त ।
खोजने चली विवश हो तुम्हें,
रहेगी कब तक भव में भ्रान्त ।।१३।।

दूर-से-दूर भले तुम रहो,
खींच लायेगी किंतु समीप ।
विरत कब तक चातक से जलद,
स्वाति से मुक्ता-भरिता सीप ? ।।१४।।

संत तुकाराम

अमित पुरुषोत्तम केन्दुरकर
अष्टम 'क'

महाराष्ट्र की पावन भूमि ने अनेक संत-शिरोमणियों को जन्म दिया है जिसमें कि समर्थ गुरु रामदास, संत ज्ञानेश्वर, संत एकनाथ, संत नामदेव, गोरा-कुम्भार आदि सम्मिलित हैं। इस संतमाला में संत तुकाराम भी एक हैं।

संत तुकराम ने अपना जीवन अपने आराध्य विट्ठल तथा परोपकार के लिये समर्पित कर दिया। अपने जीवन में इन्होंने अनेक विपत्तियों का उत्तर शांति हाइफन पूर्वक तथा अत्यंत सहिष्णुता पूर्वक दिया।

संत तुकाराम का जन्म महाराष्ट्र में पुणे के पास एक गाँव देहू में सन् १६०८ ई० में हुआ। इनके पिता का नाम श्रीवाल्होवा तथा माता का नाम कनकाई था।

तुकाराम तीक्ष्ण बुद्धि एवं सुन्दर देह यष्टि के धनी थे। माता-पिता की आज्ञा-पालन, अतिथि का आदर-सत्कार, भगवद् भक्ति, गरीबों तथा असहायों के प्रति दयाभाव इत्यादि गुण उन्हें माता-पिता से विरासत में मिले थे।

इनके सद्‌गुणों को प्रदर्शित करने वाली कुछ घटनायें प्रस्तुत हैं–

अपार करूणा

गाँव के सभी बच्चे खुश थे कि आज उन्हें गन्ने खाने को मिल रहे हैं। तुकाराम ने अपने खेत से गन्ने की फसल काटी व गाँव भर के बच्चों में बाँटते हुए सिर्फ एक ही गन्ना लेकर घर पर आये। उनकी पत्नी ने क्रोध से पति की पीठ पर गन्ना मार दिया जिससे उसके चार टुकड़े हो गये। इस पर तुकाराम आनंदित होकर कहने लगे, "हे पांडुरंग, तुम तो दया एवं करूणा के सागर हो, तुम्हारी महिमा अपरम्पार है। मैं तो एक ही गन्ना घर पर लाया था लेकिन तुमने उसके चार कर दिये।"

तुकाराम की कीर्ति से ब्राह्मण उनसे ईर्ष्या करने लगे। धर्माधिकारी रामेश्वर भट्ट ने तुकाराम से अभंग रचना रोक देने को कहा। तुकाराम ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि वे ईश्वर की प्रेरणा से ही संत नामदेव के इस अपूर्ण कार्य को पूर्ण कर रहे हैं। परन्तु रामेश्वर भट्ट ने उनेक द्वारा लिखित सभी अभंग को इंद्रायणी नदी में डुबोने की कठोर आज्ञा दी।

आज्ञानुसार उन्होंने अपने संपूर्ण कात्य को इंद्रायणी नदी को समर्पित कर दिया एवम् उसके तट पर निश्चल हो कर बैठ गये। कहते है कि बारह दिनों बाद तुकाराम को भगवान विट्ठल ने दर्शन देकर कहा, "हे तुका, निश्चित हो जाओ। तुम्हारे द्वारा समर्पित सभी अभंग कल सूर्योदय के समय पानी पर तैरने लगेंगे।" और चमत्कार कि तेरहवें दिन सभी अभंग इंद्रायणी के जल पर तैर रहे थे।

लोक कल्याण के लिये जन्म लेने वाली इस महान आत्मा ने संसार को अपने अभंगों की अभंगों की अमूल्य निधि दी। एक दिन उन्होंने अपने भक्तों से कहा

"अब मेरे जीवन का उद्देश्य पूर्ण हुआ। अब मैं चलूंगा।" वे घर जा कर अपनी पत्नी से बोले, "मैं स्वर्ग को जा रहा हूँ। तुम्हारी इच्छा हो तो मैं तुम्हें भी साथ ले चलूंगा। क्या तुम चलने को तैयार हो?" पत्नी ने कहा, "बच्चों, रिश्तेदारों और सभी बंधनों को तोड़ कर मैं आपके साथ कैसे आ सकती हूँ।"

तुकाराम ने इंद्रायणी में प्रवेश किया मानो वे स्नान को ही जा रहे हों। वे आगे ही बढ़ते गये और अन्त में ओझल हो गये।

सन् १६५० में ४२ वर्ष की अल्पायु में उन्होंने नश्वर देह को त्याग दिया और अपने आराध्य बिट्ठल से एकरूप हो गये।

मँहगाई की महिमा

— निश्चल मेहरोत्रा द्वादश 'क'

मँहगायी आज का युग-बोध हो गया है। इसीलिए किशोर कलम इसी को अपना वर्ण्य विषय बना बैठी।

—सम्पादक

मँहगाई ऐसी बढ़ी, जैसे द्रुपद सुता का चीर।
लुटा सभी कुछ, हो गए फटका चन्द फकीर
फटका चन्द फकीर, दाम बिन खाते टक्कर।
अब न मिले त्यौहारों पर भी घी औ शक्कर
कहँ 'निश्चल' कविराय कहाँ से आवे चावल।
कपड़ा का लफड़ा है तन पर बाँधो टॉवल
गल्ला हल्ला में फँसा, दाल खेलती चाल।
शक्कर का चक्कर बुरा घी का पड़ा अकाल।
घी का पड़ा अकाल, साग में आग लगी है।
गुड़ बारह का किलो खाँड़ पाताल भगी है।
कह 'निश्चल' कविराय करो मत कुछ भी चर्चा
बर्तन गिरवी धरो, चलाओ घर का खर्चा।

पर्यावरण एवं प्रदूषण

—यशवंत देशमुख 'द्वादश ख'

जन जाग्रति निबन्ध लेखन प्रतियोगिता के स्नातक वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले चि० यशवंत राव देशमुख एक चिंतन शील किशोर हैं। नये-नये विषयों पर सोचना और जानकारी प्राप्त करना उनका सहज स्वभाव है। इस प्रतिभा के प्रगतिशील भविष्य के लिये मेरी शुभ कामनायें —सम्पादक

प्रातः काल का मनोरम दृश्य—हृदय को अनजाने एकाग्रचित्त कर देने वाला। स्वच्छ निश्छल निर्मल गंगा तट। कल-कल कर प्रवाहित होता जल। अन्तः करण तक उतर जाने वाली, विचित्र किन्तु अद्भुत आत्मिक शान्ति देने वाली भौतिक शक्ति। धीरे-धीरे प्रारम्भ होता पक्षियों का कलरव, घूँघट उठाये कमलों पर रसिक भौंरों का गुंजन। पूर्व में जन्म लेता अरूणाभ दिवाकर। मष्तिष्क को सम्मोहित करता हृदय और हृदय को सुदूर अलौकिक आनन्द में ले जाता यह अद्भुत दृश्य। भक्त-जन; गंगा में समाने को उतावले। डुबकी लगाते, निष्पाप ऊपर आते। निर्मल जल, निर्मल हृदय। सब अञ्जलि में जल लिये सूर्योपासना करते हुये। रोम-रोम को सहला कर स्निग्धता उत्पन्न करती शीतल मन्द बयार। अद्भुत सौन्दर्य, सम्मोहक सौंदर्य, पारलौकिक सौंदर्य।

एकाएक स्वप्न टूटा। अब आजकल ऐसे दृश्य स्वप्नों में ही दृष्टिगोचर होते हैं या फिर कोई पचासों साल पुरानी कविताओं में इनका चित्रण होता है। आज का प्रातः काल भी लोगों के लिये, गोधूलि के समान बन जाता है। गंगा तट के लिये अब स्वच्छ निर्मल नहीं, प्रदूषित, मलिन आदि शब्दों का प्रयोग होता है। अद्भुत शान्ति तो अब निद्रा में भी नहीं मिलती और प्रातः की शुरूआत ही मिल के सायरन से होती है। आत्मा भौतिकता के नीचे पिस गई है और जब भौतिक उथल-पुथल हो तो आत्मिक शान्ति स्वप्न में भी नहीं आती। पक्षियों के कलरव के स्थान पर जब वाहनों की सुमधुर ध्वनि कर्णपट पर गुँजित होती है तभी लगता है कि प्रातः काल हो गया। कमल देखने के लिये बोटैनिकल गार्डेन जाना पड़ता है और भौंरे तो अब पुस्तकों के चित्रों में ही दिखते हैं। पूर्व में अब रक्ताभ नहीं, मलिन दिवाकर जन्म लेता है। मष्तिष्क को अशान्ति एवं हृदय को असीम दुःख में ले जाता यह दृश्य। गंगा में पवित्र होना तो दूर अब भक्तजन गंगा में डुबकी लगाने से पूर्व यह सोचते हैं कि कहीं चर्मरोग न हो जाये। प्रदूषित जल, आतंकित हृदय। आचमन किसे करें, कारखानों की उगली कालिमा में दिवाकर का अस्तित्व अदृश्य होता प्रतीत होता है। शीतल मंद बयार तो अब इत्र छिड़कने पर भी नहीं आती। आयेगी भी कैसे ? रासायनिकता कभी वास्तविकता बन सकी है क्या ? निकलने वाली "अद्भुत सुगंध" आपके घ्राणांगों में झञ्झावात उत्पन्न कर देगी और आप नाक पर कपड़ा रखकर साँस लेने पर मजबूर हो जायेंगे।

यह दृश्य शायद इक्कीसवीं सदी का मापदण्ड है। इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ? आज युद्ध से भी अधिक विभीषिका पर्यावरण प्रदूषण ने उत्पन्न कर दी है। लोग तरह-२ के प्रदूषणों का नाम देते हैं यथा जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, रेडियोएक्टिव प्रदूषण और आज कल दो नये प्रकार के प्रदूषण जन्म ले रहे हैं—जनसंख्या प्रदूषण और ध्वनि

प्रदूषण । गहन चिन्तन करने पर एक और प्रदूषण का पता चलता है जो आज के समाज को घुन की तरह खाये जा रहा है वह है मानसिक प्रदूषण ।

आखिर ये प्रदूषण है क्या ? मानव समाज की गंदगी या अति भौतिकतावाद का परिणाम या दूसरे पहलू पर, यह मानव की वैज्ञानिक उन्नति का "प्रमाण पत्र" कहा जा सकता है । आखिर क्यों आजकल यह वादविवाद का केन्द्र बन रहा है ? इसका कारण है वातावरण । मनुष्य वातावरण में ही जीवित रह सकता है । वैसे भी मनुष्य को पंचतत्वों से बना माना जाता है । और वह जीवित भी वहीं रहता है जहाँ पंचतत्व अर्थात्–वायु, मृदा, अग्नि, जल एवं आकाश हो । वह इसी पंचतत्व में जन्म लेता है और इसी में विलीन हो जाता है । हमने जब स्वयं ही प्रदूषण उत्पन्न किया तो पंचतत्व का सूत्र गड़बड़ा गया है । परिणाम यह कि मानव का भौतिक जीवन क्लिष्ट हो गया । अब क्लिष्ट जीवन में समस्यायें तो उत्पन्न होती हैं और समस्याओं पर हल्ला मचाना मनुष्य का जन्मसिद्ध स्वभाव है । हमारी आदत है आग लगने पर कुँआ खोदने की । यह आग लगी ही इसलिए कि हम अपनी पुरा भारतीय संस्कृति छोड़कर पश्चिमी भौतिकता के पीछे भागे जब कि पश्चिामी देश हमारी संस्कृति के पीछे भाग रहे हैं, शोध कर रहे है, लाभ उठा रहे हैं ।

एक समय था जब हमारी संस्कृति, हमारा विज्ञान चरमोत्कर्ष की भी पराकाष्ठा पर था । उसी समय हमारे मनीषियों ने गहन चिन्तन कर के उस उत्कृष्ट विज्ञान को सरलतम रूप में धर्म का नाम देकर हमारे जीवन में उतार दिया था । हमें दुःख होगा लेकिन कटु सत्य यही है कि आज उत्कृष्ट विज्ञान के सरलतम रूप को हम 'देहाती, शब्द से सम्बोधित करते है । आज हमारी ही संस्कृति पर विदेशों में शोध हो रहे हैं और जब पश्चिम में हमारी संस्कृति का वैज्ञानिक निष्कर्ष आता है । तो वह हमारे भारतीय समाज के लिए "फैशनेबल" बन जाता है । इससे बड़ा दुर्भाग्य नहीं हो सकता है । अपनी संस्कृति का इससे बड़ा तिरस्कार व उपेक्षा का उदाहरण भी और कोई नहीं हो सकता ।

बात प्रारम्भ करें वायु और जल प्रदूषण से । इसका सबसे बड़ा कारण औद्योगिक कारखाने है, यांत्रिक उपकरण हैं । और ये कारखाने पश्चिमी औद्योगिक क्राँति के परिणाम हैं । अब ये पश्चिमी देश हमारी संस्कृति के पीछे भाग रहे हैं । क्यों ? इसलिए कि हमारे यहाँ कभी बड़ी कार्यशाला को महत्व न देकर कुटीर उद्योगों को ही बढ़ावा दिया जाता था । लेकिन आज हम बड़े उद्योगों को अपना रहे हैं और पश्चिमी देश कुटीर उद्योगों पर बल दे रहे है क्योंकि उनके यहाँ से उत्पन्न प्रदूषण के कारण उत्तरी ध्रुव पर 'ओजोन' की सतह पर छेद हो गया है । यही 'ओजोन' की सतह सूर्य से आने वाले हानिकारक विकिरण को रोकती है लेकिन जब इसी में छेद होने लगा तो पृथ्वी के नष्ट होने की आशंका होने लगी है । और पश्चिमी देश तुरन्त अपने उद्योग धन्धे कम करके कुटीर उद्योग की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करने लगे । बात सिर्फ इतनी बड़ी ही नही वरन् छोटी–२ बातों पर हमारी संस्कृति में जो नियम बनाये गये हैं उन पर शोध करके उनकी वैज्ञानिक पुष्टि कर दी गई है । यथा हवन हेतु यह पुष्टि की गई है कि इसका धुँआ हमारे वातावरण को शुद्ध करता है और हानिकारक कीटाणुओं का विनाश करता है । और तो और वेद मंत्रों के उच्चारण से जो तरंगें उत्पन्न होती हैं वे ध्वनि प्रदूषण उत्पन्न करने वाली तरंगों को समाप्त करती हैं । कृषि में यह सिद्ध किया गया है कि रासायनिक खादों की अपेक्षा नैसर्गिक खाद अधिक लाभप्रद है । इसीलिए हमारे गाँवों में आज भी लोग शौच निवारण हेतु खेतों में जाते है । आज के ऊर्जा के स्रोत भी कम प्रदूषित नहीं है । रूस में चेरनोबिल परमाणु घर दुर्घटना और भोपाल गैस त्रासदी इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं । हमारी संस्कृति में ऊर्जा

का स्रोत वह गोभक (गोबर) माना जाता है जिसे हम हेय दृष्टि से देखते हैं। गोभक से सम्बन्धित परीक्षणों में दो तथ्य सामने आये हैं जो सचमुच चौंकाने वाले हैं। पहला यह कि सूखे गोभक को जलाने से वायु की हानिकारक गैसें नष्ट होती हैं दूसरा यह कि गोभक लेप रेडियो धर्मिता का प्रभाव कम कर देता है। लेकिन वाह रे हम ! गोभक कण्डों से चूल्हा जलाने वालों को हम देहाती कहते है। माँगलिक कार्यों पर जब घर में भीड़ होती है और वातावरण में रेडियो धर्मिता बढ़ जाती है ऐसे समय में घर में गोभम लेप करने वाले को हम देहाती कहते हैं। स्वयं को ज्ञानी समझते हैं। वास्तविकता यह है कि वे हमसे ज्यादा व्यवहारिक शिक्षित हैं। यही चीजें जब पशिचम से फैशन के रूप में भारत आयेंगी तो हम उन्हें स्वीकार करने में गर्व अनुभव करेगें। इससे बड़ा दुर्भाग्य किसी संस्कृति का और क्या हो सकता है ?

आज लोग शहर के प्रदूषित वातावरण को छोड़ कर ग्रामीण स्वच्छ जीवन में जाने हेतु तरसते हैं। आज के शहरी स्वप्न ग्रामीण जीवन में ही सत्य सिद्ध हो रहे हैं। अभी न जाने हमारी संस्कृति अपने भीतर प्रदूषण समस्या को हल करने के कितने उपाय लिये बैठी है जिन पर शोध की आवश्यकता है। आज आवश्यकता है ऐसे युवा वैज्ञानिकों की जो शोधकर के अपने देशवासियों के चक्षु खोल सकें। आज आवश्यकता है इस प्रदूषण के जड़ से समाप्त करने की। आज प्रदूषण कम करने के जितने उपाय किये जा रहे है वे काफी नहीं हैं। हमें अपनी संस्कृति में वापस आना ही होगा। आज नहीं तो कल। वही इस समस्या का समाधान है। नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब जीवनदायिनी पृथ्वी बंजर होगी। नदियों में जल के स्थान पर तेजाब बह रहा होगा, वायु इतनी दूषित होगी कि प्राणशक्ति का अस्तित्व ही नहीं होगा। सर्वत्र अन्धकार होगा। यदा कदा तेजाबी बादलों में फँसे सूर्य की मलीन किरणें निस्तेज धरा पर गिरेगी और तब दिखेगा नर कंकालों का ढेर, जो मानव सभ्यता की उन्नति पर अट्टहास कर रहा होगा या दूसरे शब्दों में आत्मायें इस सुन्दर वसुन्धरा के तिल-तिल कर तड़प-तड़प कर नष्ट होने पर चीत्कार कर रही होंगी। चीत्कार जो व्यर्थ होगी। चीत्कार जिसे सुनने के लिए कोई जीवित न होगा। चीत्कार जो स्वयं में गुंजित हो शनैः शनैः समाप्त हो जायेगी।

क्या आप जानते हैं ?

—आनन्द कुमार श्रीवास्तव अष्टम 'ख'

१— सबसे अधिक चमकीला ग्रह कौन- सा है ?
२— भारत के किस राज्य में एक भी हिन्दू मन्दिर नहीं है ?
३— सील तथा ह्वेल की आयु कितने वर्ष होती है ?
४— नाखून के काटने पर नाखून दर्द क्यों नहीं करता है ?
५— ऐसे नगर का नाम बताइये, जहाँ वसन्त जैसा तापमान रहता है ?
६— वह कौन-सा देश है जिसकी सीमा सबसे अधिक देश को छूती है ?
७— क्रिकेट का बल्ला किस वृक्ष की लकड़ी का बना होता है ?
८— विश्व का सबसे महंगा शहर कौन सा है ?
९— उस वैज्ञानिक के नाम बताइये जिसने एक ही वर्ष में तीन आविष्कार किये ?
१०— यूनाइटेड किंगडम के डाक टिकटों की क्या विशेषता है ?
११— बाँस का वृक्ष एक दिन में कितना बढ़ जाता है ?
१२— एवरेस्ट को नेपाली लोग किस दूसरे नाम से जानते हैं ?
१३— विश्व के सबसे ऊँची मीनार कौन है तथा कहाँ स्थित है ?
१४— भारत में कुम्भ-मेला किन-किन स्थानों पर लगता है ?
१५— मैराथन दौड़ कितनी लम्बी होती है ?
१६— विश्व के किस क्रिकेट खिलाड़ी को सभी क्रम में बल्लेबाजी करने का अवसर प्राप्त है ?
१७— टर्की की मुद्रा का क्या नाम है ?
१८— पृथ्वी का द्रव्यमान कितना होता है ?
१९— विश्व की सबसे बड़ी चट्टान कौन है तथा कहाँ स्थित है ?
२०— 'सारे जहाँ से अच्छा' के कवि कौन है ?

उत्तर

(१) बुध ग्रह (२) लक्षद्वीप में (३) ५०० वर्ष (४) रक्त प्रवाह न होने के कारण (५) क्यूरो (इक्वेडोर) (६) चीन (१३ देशों की) (७) विलोट्री वृक्ष की लकड़ी से (८) ओस्लो (नार्वे) (९) माइकल फैराडे (१०) किसी देश का नाम नहीं है। (११) १६ इन्च बढ़ जाता है (१२) सगरमाथा (१३) इफैलटावर (फ्रांस) (१४) इलाहाबाद, हरीद्वार, नासिक, उज्जैन (१५) 45.195 K.M (१६) वीनूमांकड (भारत) (१७) लीरा (१८) २ किलोवाट (१९) ग्रेट बेरियर रीफ (आस्ट्रेलिया) (२०) कवि इकबाल।

राम-जन्मभूमि का उद्धार

अनुभव वर्मा
नवम 'ख'

वोट की राजनीति ने राम-जन्म-भूमि को एक विवाद बना दिया है। यह विवाद तुष्टीकरण का परिणाम है। सच तो यह है सत्य को सत्य के रूप में स्वीकार पाना उन लोगों के वंश की बात नहीं है, जो किसी न किसी रूप में राजनीति के किसी न किसी खेमे से प्रतिबद्ध हैं। बाबर एक आततायी और आक्रमणकारी था। उसे इसी रूप में मानना चाहिये। उसके स्मारक स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। जो ऐसा करते हैं उनके भारतीय होने पर शक होना स्वाभाविक है। इसी भावना को इस लेख में व्यक्त किया गया है। — सम्पादक

जिस दिन मुगल आक्रामक बाबर ने प्रथमतः १५५८ में अयोध्या में श्री राम स्थान 'श्री राम-जन्म-भूमि' के पवित्र स्थल पर संदिर का ध्वंस करके मस्जिद नुमा निर्माण खड़ा कर दिया था, तब से अब तक उसकी मुक्ति और पुनरुद्धार राष्ट्रीय सम्मान-रक्षा-संग्राम का सनातन बिन्दु बना हुआ है। श्रीराम मात्र कुछ लोगों के पूजनीय पौराणिक देवता नहीं हैं। वे तो भारत की पावन भूमि में जन्मे सर्वांगपूर्ण व्यक्तित्व के सर्वोच्च गुणों से युक्त सर्वोच्च आदर्श 'मर्यादा पुरुषोत्तम' हैं। उनकी जन्म-भूमि पर बने पावन मंदिर के विध्वंस के समय से अब तक जाति, रंग, भाषा और प्रदेश के बन्धनों को तोड़कर ७६ भयंकर युद्ध लड़े जा चुके हैं और राष्ट्रीय श्रद्धा के उस साझे बिन्दु का उद्धार करने के यज्ञ में लाखों लोग अपने प्राणों की आहुति दे चुके हैं। एक प्रकार से तो वह शत्रु की दासता को मिटाने के देश-मुक्ति-संग्राम का प्रतीक बन गया है।

यह स्वाभाविक ही था कि १९४७ में स्वाधीनता पाने के तुरंत पश्चात राष्ट्र ने रामजन्म-भूमि के उद्धार का संघर्ष प्रारम्भ कर दिया। इसके फलस्वरूप २२–२३ दिसम्बर १९४७ की रात्रि को श्री राम विग्रह की प्रतिष्ठा करके उस स्थल को पुनः पवित्र किया गया। किन्तु राजनेताओं ने सांप्रदायिक तुष्टीकरण की अपनी नीति के अनुसार वहां ताला लगा दिया, पुलिस का संतरी बिठा दिया और केवल एक पुजारी द्वारा दैनिक पूजा अर्चना की अनुमति दी। हिन्दू मात्र को वहाँ श्री राम की पूजा करने का अधिकार नहीं था।

बिहार में सीता माता के जन्म स्थान सीतामढ़ी से रामजानकी रथ यात्रा प्रारम्भ हुई और उसने समूचे उत्तर प्रदेश और बिहार में सारे मार्ग पर हजारों-लाखों लोगों को जागृति–संदेश दिया। जब रथ अयोध्या पहुँचा तो वहां तो जैसे मानवता का सागर ही उमड़ पड़ा। देश के कोने-२ से पहुँचे सैकड़ों धर्माचार्यों ने ७ अक्टूबर, १९८४ को पवित्र सरयू नदी के तट पर एकत्रित अपार जनसमूह को शपथ दिलाई "रुकेंगे तभी जब

श्री राम जन्म–स्थल को मुक्त करा लेंगे।"

वहाँ से रथ यात्रा १४ अक्टूबर १९८४ को लखनऊ पहुँची और उसने राजनीतिज्ञों दुर्ग का द्वार खटखटाया तथा न्याय की माँग की। बाद में ६ राम-जानकी रथों ने १०८ दिन तक समूचे उत्तर प्रदेश की यात्रा की। उसके फलस्वरूप अपूर्व और अपार हिन्दू उन्मेष और उत्थान हुआ। शांतिपूर्ण और संवैधानिक प्रयास चलते रहे। उनमें संसद-सदस्यों से ताला हटाने का अनुरोध किया गया।

किन्तु पुनः सरकार ने न्यासियों को बड़े पैमाने पर मंदिर के जीर्णोद्धार की अनुमति नहीं दी। वाली के बेगम जैसी ढुलमुल सरकार सम्प्रदायवादी मुस्लिम नेतृत्व के आगे घुटने टेकती रही है। इससे बाबरी मस्जिद संघर्ष समिति का साहस बढ़ा है और वह चिल्ल-पौं मचाकर विष-वमन करने लगी। किन्तु प्रत्यक्ष है कि राष्ट्र अब इस संबन्ध में और द्वैधवृत्ति को सहन नहीं करेगा। प्रत्यक्ष को प्रमाण क्या। २९ मार्च १९८७ को अभूतपूर्व "उत्तर प्रदेश बंद" हुआ. ५ अप्रैल १९८७ को रामनवमी के दिन ५,००,००० से भी अधिक भक्तगणों ने पुनः मुक्ति-शपथ ली, प्रान्तव्यापी विद्यालय–बंद और साधु-संन्यासियों की चुनौती के कारण पुलिस ने रोके हुये राम-जानकी-रथों को मुक्त किया। ये सब घटनाएँ यही दर्शाती हैं कि समस्या अब वाद-विवाद अथवा समझौते का विषय नहीं रही। संघर्ष चल रहा है और वह तब तक चलता रहेगा, जब तक सोमनाथ की भाँति अयोध्या पुनः राष्ट्र-गौरव का प्रतीक नहीं बन जाती।

वृक्ष के उद्‌गार

प्रशान्त त्रिवेदी
नवम 'ख'

(वन-पवन के उमहत्व को समझाती हुई बाल कवि की लेखनी।
सम्पादक)

मैं पेड़ हूँ, मुझे मत काटो।
मेरी तरह जग में खुशियाँ बाँटो।।
मेरी पत्ती–डाली, मेरे फूल–फल।
काम ही आयेंगे, आज नहीं तो कल।।

परहित ही होता है जग में जीवन तेरा,
मेरे ही फलों से शोभित उपवन मेरा।
मैं निस्वार्थ जगत को देता रहता जीवन,
मेरा है कृतज्ञ धरती का कण–कण।।

देता हूँ मानव को सुख शांति छाया,
सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हमारी ही माया।
पर्यावरण प्रदूषण से आज सब परेशान,
खतरे में है विश्व, खतरे में सबकी जान।।

स्टूडेण्ट (STUDENT)

– अमित जैन एकादश 'ख'

(एक प्रचलित अंग्रेजी शब्द का कितना अर्थपूर्ण विश्लेषण किया है, कि ोर लेखक ने, इस लघु लेख में देखिए। – सम्पादक

मैं आप लोगों का ध्यान 'Student' शब्द की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। सभी विद्यार्थियों के मन पर इस की मोहर लगी रहती है। मैं इस शब्द के गूढ़ रहस्यों से आपको परिचित कराना चाहता हूँ। वैसे तो इस शब्द का प्रयोग प्रतिदिन सभी करते हैं, किन्तु इस शब्द की व्याख्या अन्य प्रकार से भी की जा सकती है।

'S' यह अक्षर **student** शब्द में प्रथम स्थान पर है इसका अर्थ **Social–worker** होता है। प्रत्येक विद्यार्थी का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने समाज की भलाई के लिये प्रतिदिन अधिक से अधिक समय दे।

दूसरा वर्ण जो **T** है इसका अर्थ **Truth** (सच्चाई) होता है। विद्यार्थी में इसका होना अनिवार्य है। विद्यार्थियों को सच्चाई के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिये।

'U' तीसरा वर्ण है। **U** से **under-standing** बनता है प्रत्येक विद्यार्थी के अन्दर समझदारी होनी चाहिये जो कार्य वह करता है, उसको समझ कर करे।

'D' चौथा वर्ण है। इससे Discipline बनता है यह विद्यार्थी के लिये महत्वपूर्ण है। यदि विद्यार्थी अनुशासन का पालन नही करता है तो उसका सब जगह अनादर होता है।

'E' पाँचवा वर्ण है। **E** से **Educated** समझना चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी में होना अति आवश्यक है। विद्यार्थी के अन्दर अच्छी योग्यता होनी ही चाहिए।

'N' छठा वर्ण है। **N** से **Natural** बनता है। इसका अर्थ है सबके सहज व्यवहार करना चाहिए, उसमें कृत्रिमता न हो।

'T' सातवाँ वर्ण है। **T** से **Try** बनता है। प्रत्येक विद्यार्थी को अपने-अपने कार्यों में प्रयत्नशील रहना चाहिए इस पर सभी की उन्नति निर्भर है।

जिस विद्यार्थी में उपयुक्त सात गुण हैं वही वास्तव में सच्चा **Student** कहलाने योग्य है। हम सबको प्रयास-पूर्वक उपर्युक्त गुण अपने अन्दर समाहित करने चाहिए।

हमारी भारतीय संस्कृति

– ऋषेन्द्र मौर्य एकादश 'ख'

['संस्कृति' जैसे गूढ़ विषय को सरल ढंग से प्रस्तुत करने का एक बाल प्रयास । सम्पादक]

जिस समय विश्व के अन्य देशों में बर्बरता व्याप्त थी । उस समय हमारे भारत वर्ष में सभ्यता के सूर्य का प्रकाश पूर्ण प्रखरता से फैल चुका था । सदियों से भारतीय संस्कृति की पवित्र धारा अक्षुण्यथी और अबाध गति से बही जा रही है ।

भारतीय संस्कृति के स्वरूप व गरिमा का वर्णन करने से पहले "संस्कृति" शब्द का तात्पर्य जान लें ।

"संस्कृति" शब्द संस्कार से बना है जिसका अर्थ होता है परिष्कार । यह परिष्कार व्यक्ति व दोनों से सम्बन्धित है । सम्पूर्ण समाज के परिष्कार के प्रयास का लेखा ही संस्कृति के इतिहास की रचना करता है । बाबू गुलाबराय के शब्दों में– "जलवायु के अनुकूल रहन-सहन की विधियों व विचार-परम्पराओं से समाज के लोगों के दृढ़ मूल हो जाने से यही उस समाज के संस्कार बन जाते हैं । यही उसकी संस्कृति है ।" अर्थात् मानव अपने उत्कर्ष के लिए जो भी प्रयास करता आया है–उसी की समग्र गाथा संस्कृति है ।

कुछ लोग संस्कृति को देश, काल की सीमा रेखाओं के द्वारा विभाजित करने का प्रयास करते हैं किन्तु मानव संस्कृति अविभाज्य है । संस्कृति को सीमाओं में बाँधना मानव की सबसे बड़ी भूल है । यहाँ विभिन्न संस्कृतियों में आपस में विरोधाभास न होना बताया है । वैसे तो सभी देशों की संस्कृतियों का मूलाधार एक ही है किन्तु विशिष्ट देशों की संस्कृति कुछ में विशिष्टिताएँ होती हैं ।

इनमें भारतीय संस्कृति अग्रगण्य है । हर दृष्टि से हर क्षेत्र में यह अन्य संस्कृतियों से श्रेष्ठ है । इसकी जड़ें अतीत की अत्यधिक गहराई में बैठी हैं । यह विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है । यह अनेक विशिष्टिओं से परिपूर्ण हैं जिनमें प्रमुख हैं–प्राचीनता, शाश्वतता आत्मसात्ता आदि ।

भारतीय संस्कृतिकी धारा में यद्यपि समय–समय पर नए-नए तत्व समावेशित किये गये हैं किन्तु उनका मूल व आन्तरिक रूप सदैव एक ही रहा है । सदियों से भारतीय संस्कृति की आत्मा वही रही है । यह भारतीय संस्कृति की अपनी विशेषता है जो अन्य देशों के इतिहास में दुर्लभ है । इसके कारण ही भारत का अतीत उसके वर्तमान में जीवित है । शायद इसीलिए इकबाल ने कहा है–

"ईरान मिस्र रूमा सब मिट गये जहाँ से ।
बाकी मगर है अब भी नामों निशा हमारा ।।

भारतीय संस्कृति के अतिरिक्त अन्य किसी संस्कृति में धर्म के इतने उदार व व्यापक स्वरूप की प्रतिष्ठा कहीं नहीं है । हमारी संस्कृति में धर्म का मर्म मानवता की पुष्टि करना है । इसी दृष्टिकोण से हमारे यहाँ धर्म के दस लक्षण बताए गये हैं ।

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।

अर्थात् धैर्यशीलता, क्षमाशीलता, दम्भ, हीनता चोरी न करना, पवित्रता इन्द्रियों को वश में रखना, विवेक, ज्ञान, सत्यनिष्ठा, क्रोध न करना आदि धर्म के दस लक्षण हैं ।

धर्म का ऐसे उत्कृष्ट स्वरूप के दर्शन भला अन्यत्र कैसे हो सकते हैं ?

भारतीय संस्कृति की चौथी विशेषता है–समन्वय आत्मसात करने की क्षमता। भारतीय संस्कृति समन्वय मूलक है। हठवादिता या अहं तो इसमें लेशमात्र भी नहीं है। जिस प्रकार सागर बूँदों को समाहित कर लेता, उसी प्रकार हमारी भारतीय संस्कृति ने भी प्राचीनकाल से अब तक अनेक संस्कृतियों को अपने में समाहित कर लिया। यूनानी, शक, हूण, कुषाण, अंग्रेज पुर्तगाली, फ्रांसीसी, मुगल, पठान आदि ने जाने कितनी जातियाँ अपनी संस्कृति के प्रसार की आशा के साथ किन्तु आयीं भारतीय संस्कृति के विराट स्वरूप के महासिंधु में एक बूँद के रूप में ऐसी समा गई कि उनका एक भी स्वतंत्र चिह्न इस देश में दृष्टिगत नहीं होता। कुछ संस्कृतियों का तो अब पता भी नहीं है।

भारतीय संस्कृति की महती विशेषता है– सर्वांगीण आनन्द की भावना। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में चार पुरुषार्थ ही मानव जीवन के अभीष्ट माने गये हैं। इनके बिना कोई मनुष्य सुखी नहीं हो सकता।

धर्मार्थ काममोक्षाणाम् यस्यै कोऽपि न विद्यते।
अजामलस्तनस्वे जन्म तेषां निरर्थकः।।

हमारी संस्कृति आध्यात्मिक शक्ति का पर्याय है। वस्तुतः आध्यात्मिकता सांसारिकता या परित्याग का नाम न होकर पूर्ण मानवता की अवधारणा का नाम है। देव व दानवों के पौराणिक आख्यानों के प्रस्तुतीकरण का एक मात्र उद्देश्य मानव असत् से बचने तथा देवत्व व सत्य के प्रति अनुरक्त होने की प्रेरणा प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त सहिष्णुता, सहानुभूति, संतोष, सद्भावना, सर्वहितानुरक्ति आदि सद्गुण भारतीय संस्कृति को अन्य संस्कृतियों से श्रेष्ठ स्थान प्रदान करते हैं।

यह सत्य है कि भारतीय संस्कृति विविधताओं व सांस्कृतिक रूढ़ता से भरी पड़ी है। किन्तु इसके कुछ ऐसे सुदृढ़ आधार हैं जो भारत को अपनी सांस्कृतिक एकता के कारण विशेष गरिमा प्रदानकरते हैं बल्कि वे भारतीय सांस्कृतिक अखण्डता के प्रतीक हैं। उदारणार्थ–

"गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिंधु कावेरी जलेंऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।"

वैसे आज हम जिस भारतीय संस्कृति को देख रहे हैं, वह आर्य व आर्येतर बहुविधि जातियों की साधनाओं के सम्मिश्रण का फल है। हमारी यह संस्कृति अनेक पुनीत धाराओं के संगम से मिलकर बनी है जिनमें असंख्य दिव्य तत्त्व समाहित हैं। अन्ततः हम कह सकते हैं कि प्राचीन विश्व संस्कृतियों में प्रथम भारतीय संस्कृति भारत व भारतीयों के गौरव के साथ सम्पूर्ण विश्व के लिये प्रेरणा का स्रोत है।

एक और बीरबल

– दिव्य मिश्र अष्टम 'क'

लेखक ने हास्य लेख के रूप में बीरबल के समान हाजिर जवाब जर्मनी का एक उदाहरण प्रस्तुत किया है।

जर्मनी के टिल स्पीगल सौ वर्ष पूर्व एक गरीब किसान के घर जन्में थे। उनके किस्सों को आधुनिक जर्मनी के महान साहित्यकार एरिक कैस्नर ने लिपिबद्ध किया है। उनमें से एक घटना निम्नलिखित है–

एक बार ऐर्फुट विश्वविद्यालय के अध्यक्ष एवं शिक्षाशास्त्रियों ने उनकी लोकप्रियता से चिढ़कर उन्हें नीचा दिखाने की कोशिश की। उन्होंने एक गधा लाकर उनके सामने खड़ा कर दिया और कहा "क्या आप इसे पढ़ा सकते हैं?" टिल ने उत्तर दिया, "क्यों नहीं, परन्तु ५०० सिक्के मेहनताना लगेगा।"

धन मिलने के पश्चात् टिल ने उस गधे को कई दिन तक भूखा रखा। बीच-बीच में उसके सामने एक किताब रख देते जिसके पृष्ठों में जई के बीज रखे होते। गधा जई के बीज पृष्ठ खोल कर निकाल लेता। टिल ने अब विश्वविद्यालय के अध्यक्ष को बुलाया और कहा–

"आप गधे को किताब पढ़ाकर देखिये।"

गधे के सामने किताब रखी गई उसने पृष्ठ पलट कर जई के बीज ढूँढने आरम्भ कर दिये। उसे बीज नहीं मिले तो वह जोर-जोर से रेंकने लगा, "ढेंचू-ढेंचू।"

टिल ने कहा, 'देखिये उसने दो अक्षर सीख लिये हैं अब कल से मैं उसे अगला पाठ पढ़ाऊँगा।"

[संघ–प्रमुख विभूतियों की दृष्टि में]

– **रवि कुमार गुप्त** अष्टम 'ख'

जब मैं संघ शिविर देखने गया तो आपके अनुशासन और छुआछूत से सर्वथा मुक्त व्यवहार ने मुझे बहुत प्रभावित किया।

–महात्मा गांधी (संघ कार्यक्रम, दिल्ली १६–८–१९४७)

स्वयंसेवकों में पूर्ण बराबरी आपसी भाईचारे का व्यवहार देखकर मैं बहुत चकित हुआ। उन्हें यह जानने की इच्छा भी नहीं थी कि दूसरे किस जाति के हैं।

–बाबासाहेब अम्बेदकर (पूना शिविर मई–१९३९)

आर. एस. एस. पर मुसलमानों के प्रति हिंसा और घृणा फैलाने के आरोप सर्वथा झूठ हैं। मुसलमानों को आर. एस. एस. से परस्पर प्रेम, सहयोग और संगठन की शिक्षा लेनी चाहिए।

–डा० जाकिर हुसैन

आज जो सामाजिक परिवर्तन होता दिखाई दे रहा है, उसकी अग्रिम पंक्ति में आपका क्रांतिकारी संगठन है। आप ही जातिवाद समाप्त करने और गरीबों के आँसू पोछने का कार्य कर सकते हैं।

–जय प्रकाश नारायण (संघ कार्यक्रम, पटना ३–११–१९७७)

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ निःस्वार्थ सेवा के लिये देश भर में घर-घर जाना पहचाना जाता है।

– कोका सुब्बाराव भू. पू० मुख्य-न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय भारत (२५-८-१९६८)

यहीं हम अपने मन और बुद्धि को पूर्णतः सन्तुष्ट हुआ पाते हैं तथा अपने सिर को ऊँचा उठा हुआ अनुभव करते हैं।

– यू. हिप्सनराय (नेता, खासी जनजाति)– बनवासी कल्याण आश्रम

भारत का (आपातकाल में) भूमिगत आंदोलन संसार की एक मात्र गैर-वामपंथी क्रांतिकारी शक्ति है। उसमें रा० स्व० सं० के लाखों स्वयंसेवकों की भूमिका प्रमुख है। उनका एकमात्र लक्ष्य भारत में लोकतंत्र की पुनः स्थापना है।

– इकोनोमिस्ट, लंदन–४–१२–१९७६

इंदिरा गांधी की हत्या से पूर्व और बाद में रा० स्व० सं० ने पंजाब, दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर हिन्दू सिख एकता बनाये रखने में आदर करने योग्य भूमिका निभायी।

– सरदार खुशवन्त सिंह (रविवारीय स्तम्भ से)

हिन्दू राष्ट्र का अर्थ चिन्तन

– प्रशान्त कटियार नवम 'क'

हिन्दू राष्ट्र जीवन के सम्बंध में जहाँ अनेक भ्रान्तियाँ है वहीं एक भ्रांति यह भी है कि यहाँ के जीवन में आर्थिक पहलू उपेक्षित और अधूरा है। जबकि वास्तविकता यह है कि व्यक्ति और समाज-जीवन की समग्रता का विचार यदि किसी राष्ट्र या समाज ने किया है तो वह है हिन्दू राष्ट्र और हिन्दू समाज।

अंग्रेजों की दासता तो अब दूर हो गयी किन्तु दरिद्रता तो आज स्वतन्त्रता के ४३ वर्ष बाद भी दूर नहीं हो पायी है। यदि यह दूर हो गयी तो सब ठीक हो सकता है। वास्तव में इस प्रश्न पर बहुत गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। इस दिशा में सोचने की दो बातें हैं–

१ – क्या भारत वर्ष में प्रारम्भ से ही दरिद्रता रही है?

२ – क्या दरिद्रता हमारी सांस्कृतिक भूमिका के कारण पैदा हुई?

इतिहास का अध्ययन करने से पता चलता है कि वे दोनों ही बातें असत्य हैं। इसका प्रमाण हमें प्राचीन काल में समय-समय पर आये विदेशी यात्रियों के वर्णनों में उपलब्ध है। हमने पूर्व समाज रचना के मूलाधार को पुनः पकड़ा है। वह मूलाधार है भारत भूमि, जो अपनी मातृभूमि है। कहा जाता है, स्वतन्त्रता मिले ४०-४१ साल हो गये किन्तु दरिद्रता हटने का नाम ही नहीं ले रही है। यह दोष भारतीय समाज रचना या तत्त्व ज्ञान का नहीं माना जा सकता।

हमारे जीवन का लक्ष्य है–

भगवान की प्राप्ति के लिए मनुष्यत्व का विकास। उसी के साधन के रूप में समृद्धि का निर्माण करना चाहिये। हमारे यहाँ मनुष्य के जीवन के चार लक्ष्य बताये गये हैं– धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष। उसमें अर्थ का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसके भी पहले कर्त्तव्य है। यह अनावश्यक नहीं कि समाज के सभी लाखों-करोड़ों लोग नाक पकड़कर आध्यात्मिकता की ओर बढ़ चलें। लोगों में विभिन्नता होती है। भगवान कृष्ण ने कहा है–

'बलं बलवतां चाहं कामराग विवर्धितम्।
धर्मा विरूद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।।

अर्थात् ऐसा काम जो धर्म के विरुद्ध नहीं है, मैं ही हूँ।

पश्चिम में इसके बिलकुल विपरीत है। वहाँ कर्तव्य रूप धर्म का विचार नहीं है। उनके सामने केवल दो पुरूषार्थ हैं– अर्थ और काम। उनके सामने केवल अपने शरीर के भोग का विचार ही प्रधान रहता है। इसी लिये उनके यहाँ और अपने यहाँ समाज के संगठन की रचना में जमीन–आसमान का अन्तर है। जब कभी उनमें मनुष्यता जागृत होती है तो क्षोभ का अतिरेक होता है। वे आत्महत्या करते हैं, पागल हो जाते हैं।

इसके विपरीत अपने देश में मनुष्यत्व का विकास और उससे भी रहकर देवत्व के विकास करने के लिये कहा गया–

"आतमानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धि तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।"

हमारे पतन का मूलकारण वह समाज रचना नहीं अपितु हमारी गुलामी थी। अतः जब व्यक्ति-जीवन की योजना समाज हित की दृष्टि से होती है, तो समृद्धि अपने आप आती है, दारिद्रय दूर हो जाता है और तभी जन–जन को सुख-शांति प्राप्त होती है।

आई किस ढंग की है देश में स्वतन्त्रता

अर्जुनसिंह नवम 'ख'

(कवि परिस्थितियों का प्रस्तुतकर्ता होता है। बाल भावनाओं ने वर्तमान को कैसी मार्मिकता से उभारा है, दोनों शीर्षकों में देखिये।) –सं०

आई किस ढंग की है देश में स्वतन्त्रता,
आई किस ढंग से है देश में स्वतन्त्रता।
भारतीय भावना को भिन्न-भिन्न भाँति से जो,
भेदती है छेदती है कौन सरकार है॥

सभी भ्रष्टाचारी कह रहे एक दूसरे को,
सभी एक दूसरे को कह रहे लबार से हैं।
कौन भूखे प्राणियों को खाने का पदार्थ कहे,
कौन कुविचार का करा रहा प्रचार है॥

कौन मद-मस्त हुआ हाला और प्याला बीच,
देश को बनाये भुखमरी का शिकार है।
कौन जो मनुष्य जाति का कलंक देश द्रोही
राजा करता है न्याय नीति का विकार है॥

शान्ति सन्देशों उपदेशों की कहानी मात्र,
घूमती मदोन्मत्त फूहड़ उद्दण्डता।
आई किस ढंग की है देश में स्वतन्त्रता,
आई किस ढंग से है देश में स्वतन्त्रता॥

भ्रष्टाचार

भ्रष्ट भाव नाव में है बैठा आज लोकतन्त्र,
जल भी है भ्रष्ट तो हिलोरें क्यों आयेंगी।
भ्रष्ट जल बीच बैठी भ्रष्ट पनडुब्बी जब।
तो लाख कोशिशों के बाद डूब क्यों न जायेगी॥

शिक्षालय केन्द्र आज बने व्यवसाय-पैंठ,
तो कैसे गुरु शिष्य की परम्परा सुहायेगी।
पैसे की खनक जब गूँज रही चारों ओर,
तो वीणा की झनक कैसे कानों तक आयेगी॥

–०◡०–

युवा पीढ़ी और नैतिकता

महेन्द्र सिंह सेंगर अष्टम 'ख'

[नैतिकता जैसे गम्भीर विषय पर एक बाल-अभिव्यक्ति ।] —सं०

नैतिकता का क्षेत्र व्यापक है। जीवन का भवन नैतिकता की नींव पर टिका हुआ है। परिवार, विद्यालय, समाज, राष्ट्र और विश्व को हर क्षेत्र में नैतिकता की आवश्यकता। नैतिकता ही इनकी आधार शिला भी है।

स्वतन्त्रता मनुष्य के लिए वरदान है किन्तु निरंकुशता अभिशाप है। प्रकृति स्वतन्त्र है पर नियमों की अवहेलना नहीं करती। हिमालय उड़कर कानपुर महानगर को कुचल तो नहीं देता, अग्नि का काम जलना और जलाना है वह सर्वत्र इसी धर्म का पालन करती है। यही नियमबद्धता नैतिकता है। प्रकृति हमें प्रतिपल नैतिकता में रहने की प्रेरणा देती है और बताती है कि नैतिकता ही जीवन है।

"नैतिक" शब्द "नीति" शब्द से बना है अतः नैतिक शिक्षा से तात्पर्य है नीति की शिक्षा। नीति शब्द का अर्थ आचरण और व्यवहार है अतः नैतिकता का अर्थ हुआ नीति अर्थात सदाचार तथा अनुशासन। नैतिकता ही युवा पीढ़ी को सदाचारी सयमी और दयालु बनाती है।

नैतिकता की परिभाषा— नैतिकता की परिभाषा विभिन्न प्रकार से दी जा सकती है। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में नैतिकता की परिभाषा इस प्रकार है।

"जिस शिक्षा के द्वारा चरित्र का निर्माण होता है मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है और बुद्धि का विकास होता हैं वही नैतिकता कहलाती है।"

युवा पीढ़ी में नैतिकता— नैतिकता मानव मात्र का आभूषण हैं अतः युवा पीढ़ी में नैतिकता की अत्यन्त आवश्यकता है। नैतिकता के द्वारा ही युवक उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं और ज्ञान प्राप्ति का आधार भी नैतिकता ही है। हमारे यहाँ कहा गया है कि "श्रद्धावान लभते ज्ञानं" जो श्रद्धावान होगा वह अशिष्ट नहीं हो सकता। नैतिक होना ही तो श्रद्धावान होना है।

युवा पीढ़ी के द्वारा ही समाज उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकता है यदि युवा पीढ़ी में ही नैतिकता का ह्रास हो जायेगा तो समाज का क्या होगा? नींव कच्ची होने पर भव्य अट्टालिकायें धराशायी हो सकती हैं अतः हमें राष्ट्र और समाज को ध्वस्त होने से बचाने के लिए युवा पीढ़ी को सुधारने का प्रयास करना होगा।

अनैतिकता के कारण—पीढ़ी में अनैनिकता के विभिन्न कारण हैं—अनुशासन हीनता, पारिवारिक कारण, सामाजिक कारण, राजनैतिक कारण, शैक्षिक कारण।

युवा पीढ़ी में अनैतिकता का प्रमुख कारण अनुशासन हीनता है। मुनि विद्यानन्द ने अनुशासन के सम्बन्ध में कहा है कि— "अनुशासन की लगाम घोड़े के मुँह में लगी है इसके सहारे वह ठीक चलता हैं। बिना अंकुश का हाथी और बिना अनुशासन का समाज विनाश की ओर जाता है।"

परिवार जीवन की प्रथम पाठशाल है। इसी पाठशाला में बालक जीवन का प्रारम्भिक पाठ पढ़ता है।

माता-पिता, भाई-बहिन का आचरण भी उसे प्रभावित करता है अतः यह ठीक ही कहा जाता है कि–

आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम् ।
आचारात् कीर्तिमाप्नोति पुरुषः प्रत्य चेह च ।।

परिवार के बाद मनुष्य विद्यालय में प्रवेश करता है विद्यालय में ही वह अनुशासन और नैतिकता सीखता है क्योंकि कहा भी गया है ।–

"The school is your learning temple
There is the knowledge is like a candle"

इस भयंकर समस्या का समाधान करने के लिए बहुत से उपाय काम में लाये जा सकते हैं । सर्वप्रथम सामाजिक जीवन में सुधार लाना चाहिए । एक ऐसे स्वस्थ समाज का निर्माण करें जिससे प्रत्येक परिवार की समस्यायें पूरी हो सकें, केवल योग्य और चरित्रवान शिक्षकों को ही नियुक्त करना चाहिए क्योंकि कहा गया है कि–

If wealth is lost nothing is lost
If health is lost something is lost
If character is lost everything is last"

अत: युवा पीढ़ी में नैतिकता की अत्यन्त आवश्यकता है । अन्त में निष्कर्ष निकलता है कि युवा पीढ़ी के द्वारा ही समाज उन्नति कर सकता है अत: युवा पीढ़ी के लिए नैतिकता अनिवार्य है ।

-:○:-

"भीख माँगता हूँ"

गोपाल मिश्र एकादश 'ख'

प्रस्तुत कविता यद्यपि तुकबन्दी जैसी ही है, फिर भी एक किशोर मन की संस्कारित माँग वरेण्य है । –सम्पादक

अखण्ड विश्व शान्ति की, प्रेमपूर्ण क्रान्ति की, भीख माँगता हूँ ।

प्रीति की प्रतीति हो, कहीं नहीं अनीति हो, मनुष्यता अभीत हो ये सीख माँगता हूँ ।
न गर्जना हो तोप की, हो न विस्फोट भी, न हिंसा प्राणियों की हो ये भीख माँगता हूँ ।

अखण्ड विश्व शान्ति की, प्रेमपूर्ण क्रान्ति की, भीख माँगता हूँ ।।

सभी में प्रेम भाव हो, न आपसी दुराव हो, कहीं नहीं अभाव हो, ये भीख माँगता हूँ ।
सिर फिरा समय न हो, सिर चढा अनय न हो, मृत्यु का भी भय न हो, ये भीख माँगता हूँ ।

अखण्ड विश्व शान्ति की, प्रेमपूर्ण क्रान्ति की, भीख माँगता हूँ ।।

म्लान हो न कोई और नम न हों नयन, हर जगह खिले कुसुम, ये भीख माँगता हूँ ।
ज्योति का प्रसार हो, सुधर्म का प्रचार हो, फिर से रामराज्य हो, ये भीख माँगता हूँ ।

अखण्ड विश्व शान्ति की, प्रेमपूर्ण क्रान्ति की, ये भीख माँगता हूँ ।।

–०◯०–

सफलता का रहस्य

— **विश्वम्भर दयाल** नवम 'क'

(मानव जीवन की सफलता के लिए केवल अर्थ व भौतिक साधन ही पर्याप्त नहीं है, अपितु अनेक मानवीय गुणो की भी आवश्यकता है जिनका उल्लेख प्रस्तुत लेख का विषय है।)

—सम्पादक

सफलता और असफलता जीवन में अपना एक अलग प्रकार का महत्व रखती हैं अपने लक्ष्य को सम्मुख कर जो जीवन-पथ पर बढ़ता है सफलतायें उसके चरण चूमती हैं। जिस मनुष्य का जीवन असफलताओं से भरा होता है वह अपनी बुद्धि, विवेक खो बैठता है। ऐसा उसके जीवन में इसलिये होता है क्योंकि वह कुछ निश्चित बिन्दुओं को लक्ष्य बनाकर जीवन-पथ पर नहीं चलता।

सफलता की कुंजी है— "अपने लक्ष्य का निर्धारण कर उसकी प्राप्ति के लिये दिन-रात एक कर देना।"

अपने द्वारा निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिये कुछ निश्चित आधार बिन्दु हैं जिनका पालन करना आवश्यक है। उनमें सर्व प्रथम है—

प्रचण्ड मनोबल— संसार में मनोबल प्रथम है। वह जाग उठे तो असहाय और अवश प्राणी भी असंभव होने वाले काम कर दिखाते हैं तथा मनुष्य अप्रत्याशित सफलतायें प्राप्त कर लेता है।

प्रचण्ड मनोबल से सम्बन्धित यह कहानी अत्यन्त प्रसिद्ध है—

"विराट् नगर के राजा सुकीर्ति के पास लौहश्रृंग नामक हाथी था। वह इस प्रकार प्रशिक्षित था कि युद्धकाल में अपनी क्रुद्धावस्था में प्रचण्ड हुंकार भरता हुआ सशस्त्र सेनाओं में घुसता था तथा देखते ही देखते विपक्षियों के पाँव उखड़ जाते थे।

वृद्धावस्था में वह मात्र हाथी शाला की शोभा बन कर रह गया। उसकी ओर ध्यान भी कम दिया जाने लगा। बहुत प्यासा होने और कई दिनों तक पानी न मिलने के कारण एक बार लौहश्रृंग भागकर उस पुराने तालाब में गया जहाँ उसे प्रायः ले जाया जाता था। भरपेट पानी पीकर प्यास बुझाई और गहरे जल में स्नान के लिये चल पड़ा। दुर्भाग्य से उस तालाब में कीचड़ बहुत था और वृद्ध हाथी उसमें फँस गया। जितना ही वह निकलने का प्रयास करता उतना ही फँसता जाता और आखिर गरदन तक कीचड़ में फँस गया।

राजा सुकीर्ति के पास यह समाचार पहुँचने पर हाथी को निकलवाने के कई प्रयास किये गये। जब सारे प्रयास असफल हो गये तब एक चतुर सैनिक ने युक्ति सुझायी।

युक्ति के अनुरूप सैनिकों को युद्ध की वेश-भूषा पहनायी गयी। वे वाद्ययन्त्र मँगाये गये जो युद्ध के समय उपयोग में लाये जाते थे। युद्ध के नगाड़े बजाये जाने लगे और सैनिक इस प्रकार कूच करने लगे कि जैसे वे शत्रुओं की ओर से उसकी ओर बढ़ रहे हों। यह दृश्य देखकर लौहश्रृंग में न जाने कैसे यौवन काल का जोश आ गया। उसने जोर से चिग्घाड़ लगायी तथा शत्रु सैनिकों की ओर आक्रमण करने के लिये पूरी शक्ति से कण्ठ तक फँसे हुये कीचड़ को रौंदता हुआ तालाब के तट पर जा पहुँचा और शत्रु सैनिकों पर टूट पड़ने के लिये दौड़ने लगा। बड़ी मुश्किल से उसे नियंत्रित किया

गया ।"

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि मनोबल सफलता का द्वार है ।

"सलाह उनसे पूछो जिन्होंने कोई मंजिल पकड़ी और दृढ़ता पूर्वक चलते रहकर सफलता पाई ।"

संकल्प शक्ति– कोई भी व्यक्ति अपनी संकल्प शक्ति का सुनियोजन कर असाध्य कार्य भी संपादित कर सकता है ।

संकल्प शक्ति के साथ प्रगति का इतिहास जुड़ा है । एक कोशीय अमीबा की पृथ्वी पर उत्पत्ति हुई । एक से बहुत होने की संकल्प शक्ति ने उनके आकार और आकृति में परिवर्तन प्रारम्भ कर दिया । अनेक जलचरों की सृष्टि इसी क्रम में हुई । इतने पर भी प्रगति का क्रम रुका नहीं । वे जलचर ही क्रमशः थलचर और नभचर की स्थिति में विकसित परिवर्तित होते गये । यह क्रम मनुष्य की सर्वांगीण विकसित सीमा तक जा पहुँचा । इतने पर भी इस उपक्रम का अन्त न हुआ । मनुष्य वनस्पति और प्राणि जगत का भाग्य विधाता कहा जाता है । अब उसने प्रकृति का अधिष्ठाता बनने की बात भी ठानी है । वैज्ञानिक शोधों की प्रक्रिया इसी कारण तीव्र से तीव्रतर होती चली जा रही है । यह संकल्प शक्ति का ही परिणाम है ।

दृढ़ इच्छा शक्ति– श्रेष्ठ इच्छायें एवं आकांक्षाएँ तो न केवल आवश्यक हैं वरन श्रेयस्कर भी हैं । इसके विपरीत अनुपयुक्त कल्पनाओं एवं आकांक्षाओं के कारण मनुष्य का बहुमूल्य समय श्रम और कौशल बर्बाद होता रहता है । दृढ़ इच्छा शक्ति का भारतीय संस्कृति में प्रमुख स्थान है ।

किसी भी कार्य की पूर्ण सफलता हेतु दृढ़ इच्छा शक्ति की आवश्यकता है ।

विवेकानन्द को मिली सफलतायें उसकी दृढ़ इच्छा शक्ति का परिणाम थीं ।

सत्य प्रेम– सत्य की महत्ता अपरिमित है । अन्तिम विजय सत्य की ही होती है । महाराजा हरिश्चन्द्र की सत्यवादिता की महत्ता का वर्णन निम्नांकित दोहे में मिलता है –

"चन्द्र टरै, सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार ।
पै राजा हरिश्चन्द्र का टरै न सत्य विचार ।।"

संक्षेप में सत्य से निम्नलिखित लाभ होते हैं ।

(१) संसार में सफलता प्राप्त करने का श्रेष्ठ साधन-सत्य–भाषण ।

(२) मनुष्य के चरित्र का विकास ।

(३) आत्मा को सुख और अपूर्व शांति की प्राप्ति ।

(४) समाज, देश और संसार में प्रतिष्ठा ।

आज्ञापालन-कर्त्तव्यनिष्ठा का विकास– आज्ञा-पालन का मानव जीवन में बड़ा महत्त्व है । श्रेष्ठ जनों की आज्ञापालन से व्यक्ति में कर्त्तव्य निष्ठा का विकास होता है और उसमें उत्तरदायित्व निभाने की भावना उत्पन्न होती है । एकलव्य, कैसा बिआंका, श्रीराम आदि अनेक महा पुरुष आज्ञापालन के उच्च आदर्श हैं ।

साहस– साहस का अर्थ निर्भीकता या दृढ़ता है । साहस व्यक्ति का एक प्रमुख मानवीय गुण है । साहस का अभाव या भय मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है । महात्मा गांधी कहा करते थे– "साहस ही सच्ची वीरता है, और भय से बढ़कर कायरता नहीं है । कायरता तो मृत्यु के समान है ।

पंच तन्त्र में भी कहा गया है– "ईश्वर उसी की सहायता करता है जो दृढ़ निश्चय कर के शिखर पर चढ़ता है ।"

आत्मत्याग की भावना– आत्मत्याग की भावना का होना भी मनुष्य में नितान्त आवश्यक है । त्याग का अर्थ दूसरों के हित के लिये अपनी प्रत्येक वस्तु को छोड़ देना है लेकिन 'त्याग करना" कहना जितना सरल है उसका पालन करना उतना ही कठिन है । महात्मा दधीचि, हातिमताई और सरदार भगत सिंह का नाम दुनिया में इसी भावना के कारण अमर है ।

सहयोग का अर्थ एक-दूसरे की सहायता करना हैं सहयोग से कठिन से कठिन कार्य सरल बन जाते हैं । सहयोग एकता की स्थापना करता है और एकता ही मानव जाति की प्रगति एवं कल्याण की आधार शिला है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज के अन्दर ही उसका विकास होता है । अतः जीवन में सफलता और

मानव के उत्थान और कल्याण के लिये सहयोग एक प्रमुख मानवीय गुण है। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर और गांधी जी इसके परम उदाहरण हैं।

अनुशासन– अनुशासन का शाब्दिक अर्थ है– शासन का अनुगमन। लेकिन अनुशासन का यह अर्थ कदापि नहीं कि हम दूसरे के उचित या अनुचित संकेतों पर नाचते रहें। अनुशासन का अर्थ तो नियमों का ठीक प्रकार से पालन करना और संयम से रहना है। संयमित जीवन एक प्रमुख मानवीय गुण है। अनुशासन ही मनुष्य में दया, क्षमा, श्रद्धा, परोपकार आदि मानवीय गुणों का विकास करता है।

क्षमाशीलता– प्रत्येक मनुष्य को सदैव ही दूसरों को क्षमा करने के लिये तत्पर रहना चाहिये। लेकिन क्षमा करना साहसी व्यक्ति का ही कार्य है।

क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो,
उसको क्या, जो दंतहीन, विषरहित, विनीत सरल हो।
– रामधारी सिंह 'दिनकर'

स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता– स्वावलम्बन को हम आत्म निभरता भी कह सकते है। स्वावलम्वन या आत्मनिर्भरता सफलता की सीढी है।

समय पालन– मानव जीवन में समय की महत्ता अपरिमित है। समय पालन अनुशासन की आधारशिला है। बीता हुआ समय कभी लौटकर वापस नहीं आता।

परोपकार– यह सूक्ति प्रचलित है कि "परहित सरिस धर्म नहिं भाई, अर्थात् परोपकार के समान दूसरा कोई धर्म नहीं है। परोपकार अपने लाभ या अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए नहीं किया जाता।

श्रमनिष्ठा-कर्मयोग– श्रम निष्ठा से अभिप्राय परिश्रम शीलता है। आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। परिश्रम के समान मनुष्य का को कोई मित्र नही तुलसी दास जी ने भी कर्म की महिमा पर प्रकाश डालते हुये लिखा है–

कर्म प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा।

सहानुभूति– "सहानुभूति दूसरे व्यक्तियों की संवेदना तथा संवेग को देखकर तुरन्त अनुभव करने की प्रवृत्ति है।" सहानुभूति का बड़ा महत्त्व है। सहानुभूति एक प्रकार की कोमल मानसिक भावना है जो किसी दु:खी व्यक्ति को देखकर मन में उत्पन्न होती है। सहानुभूति पशुओं के समुदायों में तथा मानव समाज में एकता और सहिष्णुता स्थापित करती है।

दयालुता– सफलता के लिये जीवन के प्रत्येक पग पर दया भाव आवश्यक है। दयालुता ही हमें ईश्वर तुल्य बनाती है। किसी को कष्ट न पहुंचाना असहायों के प्रति दयाभाव रखना, अहिंसा का पालन दयालुता के ही अंग हैं।

ईमानदारी– ईमानदारी का गुण मानवीय गुणों में सर्वोपरि है। ईमानदारी व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करती है। इससे उसमें सदाचार, सहनशीलता, दृढता, निर्भीकता, दयालुता तथा विनम्रता आदि गुणों का विकास होता है।

विनम्रता– विनम्र शब्द का अभिप्राय यह है कि दूसरों के प्रति ऐसा सद्व्यवहार किया जाये जिसमें सहिष्णुता, प्रेम, सहानुभूति, आत्म-सम्मान तथा शालीनता निहित हो तथा क्रोध का भाव नाम मात्र के लिये भी न हो।" समस्त मानवीय गुणों की आधारशिला विनम्रता पर ही टिकी है।

इन मूल बिन्दुओं का पालन करने से मानव सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच सकता है। सफलता का वास्तविक रहस्य दृढ़ इच्छा शक्ति संकल्प-शक्ति तथा प्रचण्ड मनोबल में निहित है। भारतीय संस्कृति में संकल्ह का अत्यन्त महत्व है। "किसी भी धर्मकृत्य में सर्व प्रथम संकल्प पढ़ा जाता है।" परमाणु नाभिक की तरह अपने अन्दर असीम सामर्थ्य सँजोए हुये हैं जिसे संकल्प शक्ति कहते हैं। हमें अपनी संकल्प शक्ति, जगाने भर की है।

गंगोत्री से बदरीनाथ तक की यात्रा का वर्णन

— धनंजय पाण्डेय द० 'ख'

(एक सरल और रोचक यात्रा वर्णन किशोर–कलम से । – सम्पादक)

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष हम सभी लोग गर्मियों का अवकाश व्यतीत करने के लिये उत्तराखण्ड की ओर गये।

हम सभी लोगों ने यह यात्रा १६ मई से प्रारम्भ की और रात्रि लगभग ८.३० बजे हम लोग कार द्वारा उत्तर काशी पहुँचे । सभी लोगों ने रात्रि विश्राम व भोजन उत्तर काशी में ही किया ।

प्रातः उठकर हम लोगों ने आगे बढ़ने के लिये यात्रा पुनः प्रारम्भ की और हमारी कार भटवाड़ी से होती हुई गङ्गनानी में जाकर रुकी ।

गङ्गनानी में पराशर आश्रम में जाकर हम लोगों ने गर्म कुण्ड में स्नान किया और वहाँ पर स्थित मन्दिर के दर्शन किये । इसी मन्दिर में पुराण प्रसिद्ध "वेदव्यास" के पिता श्री पाराशर जी ने घोर तपस्या की थी और इसी स्थान को उन्होंने गंगोत्री माना था ।

यह सब जानकारी ग्रहण करने के बाद हम सभी ने गंगोत्री के लिये प्रस्थान किया । गंगोत्री से पहले हम सभी को अनेक स्थान मार्ग में मिलते गये । जैसे-हर्रसिल झाला, लंका आदि ।

हरसिल में सेब के बाग व्यापारिक स्तर पर लगे हुये हैं और यहाँ पर बहुत बड़ी सैनिक छावनी भी है । इसीलिये देश भर में इसका महत्व है । हम सभी दोपहर १२ बजे गंगोत्री पहुँचे । पहुँचने के पश्चात् हम सभी ने भागीरथी (गंगा जी) में स्नान किया और गंगा मन्दिर के दर्शन किये ।

गंगोत्री का मन्दिर समुद्र तल से ३१४० मी० ऊँचाई पर है । इस मन्दिर का निर्माण गोरखा सरदार 'अमर सिंह थापा" ने करवाया था । मन्दिर का जीर्णोद्धार जयपुर दरबार ने किया था ।

मन्दिर से थोड़ी दूर भागीरथी शिला स्थित है । जिस पर बैठकर राजा भागीरथ ने तपस्या की थी और भारत जैसे महान देश में भागीरथी को अवतरित किया था ।

हम सभी ने गंगोत्री से १८ कि० मी० दूर 'गोमुख' नामक स्थान के दर्शन करने के लिये प्रस्थान किया ।

'गोमुख' तक सभी लोगों को सड़क न होने के कारण पैदल जाना था । हम सभी ने गोमुख के लिये ३ बजे से चलना प्रारम्भ किया और रात्रि ८ बजे भोजवासा नामक स्थान पर रात्रि–विश्राम किया ।

सुबह हम सभी ने जलपान करने के पश्चात् गोमुख के लिये पुनः पैदल यात्रा प्रारम्भ कर दी और १० बजे हम सभी गोमुख पहुँच गये । यहाँ पर हम सभी को बरफ की ऊँची-ऊँची चोटियाँ दिखायी दे रहीं थीं । इन्हीं बरफ की चोटियों से गंगा का उद्‌गम हो रहा था । जिस चोटी से गंगा जी का उद्‌गम हो रहा था उस चोटी की लम्बाई २४ कि० मी० और चौ० ६ कि. मी. है । जिसके कारण इसे ग्लेशियर कहते हैं । इसी बरफ की चोटी पर नन्दन बन तपोवन स्थित है ।

गंगा जी का उद्‌गम देखने के बाद हम सभी ने भोजवासा के लिये प्रस्थान किया और दोपहर १२.३० बजे

हम सभी "भोजवासा" आ गये ।

भोजन इत्यादि करने के बाद हम सभी ने अपनी पैदल यात्रा गंगोत्री के लिये शुरू कर दी और शाम ६ बजे गंगोत्री पहुँच गये । रात्रि विश्राम गंगोत्री में ही किया ।

प्रातः शीघ्र उठकर जलपान किया और कार से सभी लोग उत्तर काशी के लिये चल दिये । उत्तरकाशी में भोजन करने के पश्चात् केदारनाथ जी की ओर चल दिये । आगे चलने पर टिहरी नामक स्थान पर पहुँचे ।

टिहरी में भारत सरकार की ओर से एक बाँध बनाया जा रहा है जिससे बिजली उत्पन्न की जायेगी । इस टिहरी बाँध परियोजना पर ३०० रु० खर्च हो रहे हैं । इस समय यह बाँध सारे देश में विवाद का विषय बना हुआ है ।

टिहरी के आगे चलने पर देव प्रयाग नामक स्थान आता है । जहाँ पर भागीरथी और अलकनंदा नामक नदियों का संगम होता है ।

हम सभी को गुप्तकाशी तक पहुँचने में ही काफी रात हो गयी । इस कारण सभी ने रात्रि विश्राम व भोजन गुप्तकाशी में ही किया और वहाँ पर स्थित मन्दिर के दर्शन किये ।

बताया जाता है कि गुप्तकाशी में भगवान शंकर ने पार्वती जी के साथ उस समय निवास किया था जिस समय पाण्डु पुत्र युद्ध के पश्चात् भगवान शंकर के दर्शन करना चाहते थे ।

हम सभी दोपहर ११ बजे गौरीकुण्ड पहुँचे । गौरी कुण्ड में स्थित गर्म कुण्ड में स्नान किया और भोजन करने के पश्चात् अपनी पैदल यात्रा शुरू कर दी ।

गौरीकुण्ड से केदार नाथ की दूरी १४ कि० मी० है जिसमें कि बीच में रुकने के केवल दो स्थान हैं। एक स्थान की दूरी गौरीकुण्ड से ६ कि० मी० है। जिसका नाम "रामबाड़ा" है और दूसरा स्थान "गरुड़ चट्टी" जिसकी कुल दूरी गौरीकुण्ड से ११ कि० मी० है।

हम सभी शाम ५.३० बजे भगवान शंकर के पवित्र स्थल पर १४ कि० मी० पैदल चलने के पश्चात् पहुँचे ।

सभी लोगों ने रात्रि ८ बजे आरती में भाग लिया और भगवान शिव के दर्शन किये ।

केदारनाथ की ऊँचाई समुद्रतल से ११७८५ फीट है । यह मन्दिर पाँडवो ने बनाया था । इस मन्दिर के बरामदे में पाँचों पाण्डवों की मूर्तियाँ स्थापित हैं । यह मन्दिर भगवान शिव के द्वादश ज्योर्तिलिंगों में से एक है ।

मन्दिर के पास ही आदि शंकराचार्य जी की समाधि बनी हुई है । कहा जाता है कि आद्य शंकराचार्य जी यहाँ आकर रुके थे ।

मन्दिर से थोड़ी दूर पर बर्फानी जल की झील है । वहीं से मन्दाकिनी नदी का उद्गम होता है ।

हम सभी ने सुबह होते ही मन्दिर में पूजा की और गौरीकुण्ड के लिये वहाँ से प्रस्थान किया । सभी लोग गौरीकुण्ड अपराह्न २ बजे आ गये ।

केदारनाथ जी का मुकुट उस समय ऊखीमठ आ जाता है जब केदारनाथ में सर्दी पड़नी शुरू हो जाती है और अन्तिम पूजा करने के पश्चात् वहाँ के कपाट बन्द हो जाते हैं । तब श्रद्धालुगण ऊखीमठ आकर केदारनाथ जी के दर्शन करते हैं ।

केदारनाथ जी के दर्शन करने के पश्चात् हम सभी ने बदरीनाथ जाने का निश्चय किया ।

हम सभी ने बदरीनाथ के लिये अपनी यात्रा अपराह्न २ बजे प्रारम्भ की और रात्रि तक हम सभी केवल जोशीमठ तक ही पहुँच सके । हम सभी ने रात्रि बिश्राम और भोजन जोशीमठ में ही किया । जोशीमठ से बदरीनाथ जी की दूरी केवल ४६ कि० मी० है ।

अगले दिन हम सभी कार द्वारा बदरीनाथ पहुँचे । बदरीनाथ जी की वर्तमान मूर्ति पौराणिक काल की बनी मूर्ति है जिसे नारद जी पूजते थे तथा जिसे बौद्ध लोगों ने अलकनन्दा में डाल दिया था ।

आठवीं शताब्दी में आदि शकराचार्य जी ने दक्षिण भारत से यहाँ आकर वह मूर्ति नारद कुण्ड से निकालकर तप्त कुण्ड के पास गरुड़ कोटि नाम की गुफा में स्थापित की और तभी से बदरीनाथ जी की पूजा दक्षिण भारत के नम्बूदरी जाति के ब्राह्मण करते आ रहे

हैं, जिन्हें रावल भी कहते हैं।

भगवान का वर्तमान मन्दिर गढ़वाल नरेश ने विक्रमीय पन्द्रहवीं शताब्दी में बनवाया था। बदरीनाथ जी पर सोने का कलश या छत्र है वह इन्दौर की प्रसिद्ध रानी अहिल्या बाई का चढ़ाया हुआ है। बदरीनाथ जी की दैनिक पूजा श्री नारद जी पंचरात्री तथा वैखानस पद्धति से की जाती है।

जोशीमठ भगवान शंकर जी के ४ मठों में से एक हैं जहाँ पर श्री बदरीनाथ जी की गद्दी है। शीतकाल में श्री बदरीनाथ जी की चल मूर्ति लाकर इसी में छः महीने तक पूजी जाती है।

बदरीनाथ पहुँचने से पहले दो स्थान और पड़ते हैं जो कि 'हेम कुण्ड साहब और फूलों की घाटी' कहलाते हैं।

'हेमकुण्ड साहब' पहुँचने के लिये गोविन्द घाट से पैदल २३ कि० मी० तक जाना पड़ता है जहाँ पर गुरुद्वारा स्थित है और यह सिखों का प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है।

हेमकुण्ड से १५ कि० मी० आगे और जाना पड़ता है। जिसको "फूलों की घाटी" कहते हैं। कहा जाता है कि यहीं से लक्ष्मण जी के लिये संजीवनी बूटी हनुमान जी ले गये थे। फूलों की घाटी की खोज सन् १९३१ में अंग्रेज व्यक्ति वायस स्मिथ ने की थी।

बदरीनाथ के दर्शन के पश्चात् हम सभी लोग गोचर में आकर रुके। सभी ने रात्रि विश्राम और भोजन गोचर में किया।

सुबह हम सभी देहरादून (घर) के लिये चल पड़े और दोपहर १ बजे देहरादून आ पहुँचे।

इस प्रकार से हमारी यह यात्रा पूरे एक सप्ताह चली जिससे हमको अनेक अनुभवों के साथ-साथ घूमने का भी अवसर प्राप्त हुआ।

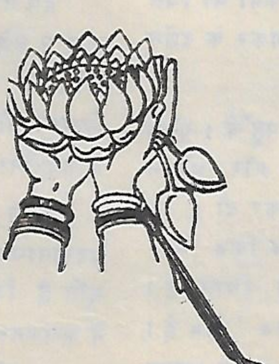

हमारा N. C. C. कैम्प

वीरेन्द्र नाथ (द्वादश क)

[यात्रा संस्मरण के रूप में लिखे गये इस लेख में यद्यपि संस्मरणात्मक शैली का निर्वाह नहीं हुआ है फिर भी कैम्प से सम्बन्धित जानकारियों के कारण इसकी उपयोगिता भी है।] —सम्पादक

हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी हमारा एन. सी. सी. कैम्प हर्सिल में लगा था। यह स्थान ऋषिकेश से २५० किमी. दूर पहाड़ों पर बसा हुआ उत्तरकाशी जिले का एक छोटा सा कस्बा है। यह समुद्रतल से २६२० मीटर (८६४२ फुट) ऊँचा है। इस कैम्प के लिये हमारे विद्यालय से तीन कैडेट चुने गये थे--आलोक तिवारी, निश्चल मेहरोत्रा और मैं।

दिनांक २६-५-८९ को मैं विद्यालय (छात्रावास) से प्रात: ८.०० बजे अपने गन्तव्य पर पहुँचने के लिये स्टेशन रवाना हो गया। वहाँ पर मुझे राजीव और आलोक दोनों मिले। इन लोगों से मिलने पर मुझे पता लगा कि ५९ बटालियन से इस कैम्प में जाने वाले कैडेटों में एक कैडेट राजीव शर्मा और शामिल किया गया है।

स्टेशन पर ही फतेहपुर से आने वाले ५ कैडेट तथा हवलदार आर० एस० राठौर से भेंट हुई। इस प्रकार हम लोगों की संख्या नौ हो गई। उन्नाव में हमें ३ कैडेट और मिले। इस प्रकार लखनऊ पहुँचते-पहुँचते हमारी संख्या १२ हो गई। वहाँ दोपहर विश्राम करने के बाद हम लोग रात्रि ८.३० बजे हरिद्वार जाने के लिये दून एक्सप्रेस से रवाना हुये। रिजर्वेशन नहीं होने के कारण हम लोगों को भारी संकट का सामना करना पड़ा।

दिनांक २७-५-८९ को प्रात: ९.३० बजे हम लोग हरिद्वार पहुँचे। उसी ट्रेन से पश्चिम बंगाल के कैडेट भी आ रहे थे। स्टेशन पर उतरने के बाद हमारा उनसे भी परिचय हुआ। वे कैडेट दार्जिलिंग तथा कलिंगपोंग जिले से आये थे। हरिद्वार में हम लोगों ने स्टेशन पर ही स्नान किया फिर पास के बाजार में खाना खाया। दोपहर १२.०० बजे हम लोग हरिद्वार-ऋषिकेश पैसेन्जर ट्रेन से ऋषिकेश के लिये चले। हरिद्वार से हम मोतीचूर और रायवाला जंक्शन होते हुये १.०० बजे ऋषिकेश पहुँचे।

रास्ते में पटरी के दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़, चीड़, तथा देवदार के वृक्ष, निकट बहता झरना एव हरे भरे कलापूर्ण ढंग से लगाये गये वृक्ष ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानो वे प्रकृति रूपी दुल्हन के आभूषण हों। इस सौन्दर्य की मात्र अनुभूति ही सम्भव है, उसे लिपिबद्ध नहीं किया जा सकता है। ऋषिकेश स्टेशन पर हम सभी कैडेटों के लिये एन० सी० सी० की ओर से स्वागत द्वार लगा था, परन्तु वहाँ कोई व्यक्ति नहीं था। थोड़ी देर तक इन्तजार करने के पश्चात वहाँ पर सेना की एक ट्रक आई जिसने हम लोगों को स्नातकोत्तर महाविद्यालय पहुँचाया।

हम लोगों के रहने व खाने-पीने की व्यवस्था यहीं की गई थी। वहाँ उतरने पर परम्परानुसार हमारा सामान चैक किया गया। पश्चिम बंगाल के सभी १५

कैडेटों के पास से कुल ७ खुकरी, ४ चाकू आदि बरामद किये गये जोकि वहीं कार्यालय में जमा करा लिये गये। तत्पश्चात हमें उस कैम्प के प्रतिबन्धित क्षेत्रों की जानकारी दी गई तथा वहाँ के कर्मचारियों से भी परिचय कराया गया। इसके बाद हमें हमारा रहने वाला कमरा दिखा दिया गया। उस सामान्य कमरे में हम लोग कुल मिलाकर ७२ कैडेट थे।

हम लोगों को रात में सोते समय बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा। यहाँ पर ठण्डक बहुत बढ़ गयी थी। रात्रि में हम लोगों ने तीन-तीन कम्बल ओढ़े।

दिनांक 2८-५-८९ को प्रात: ४.०० बजे मेरी नींद खुली। वातावरण में बहुत आर्द्रता थी। अत: ठण्ड बहुत लग रही थी। कमरे में अधिकांश कैडेट दैनिक क्रियाओं से निबृत्त होकर अपना सामान पैक कर रहे थे। कुछ कैडेट सो रहे थे तथा कुछ अपने अलग-अलग कामों में व्यस्त थे। मैंने भी दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर एन० सी० सी० वेश पहना तथा सो रहे कैडेटों को जगाया।

नाश्ता करने के बाद हमें ऋषिकेश से बस द्वारा हर्सिल जाते समय कैम्प के सभी अफसर, सभी कर्मचारी भावभीनी विदाई दे रहे थे। यहाँ से हमसभी कैडेट ४ बसों द्वारा भेजे गये। हमलोग Batch No. 7 में थे। इस Batch में कुल १४७ कैडेट थे। ये भसी कैडेट उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, राजस्थाल, महाराष्ट्र तथा उड़ीसा से आये थे।

ऋषिकेश से आगे जाने के लिये पूरा रास्ता पहाड़ी है। पहाड़ पर स्थित होने पर भी यहाँ सड़कें पक्की तथा बहुत चौड़ी-चौड़ी हैं। सड़कों के एक ओर पहाड़ तो दूसरी ओर ५००-६०० मीटर गहरी खाई दिखाई पड़ती थी। प्रात: ८ बजे हमलोग नरेन्द्र नगर पहुँचे। जो कि ऋषिकेश से १२ Km. दूर है। नरेन्द्र नगर जाने के लिये ऋषिकेश से चलने पर चार पहाड़ पार करने पड़ते हैं। यह एक छोटा सा कस्बा है। यहाँ पर होटल, दुकाने सभी साधन उपलब्ध हैं। परन्तु यहाँ पर सामान कुछ महंगे हो जाते हैं। नरेन्द्र नगर से ५ किमी० आगे चलने पर एक गाँव अरघवाला मिला। यहाँ पर बहुत से भोजनालय, ढाबे, होटल इत्यादि हैं। हमलोग ८.४५ बजे अरघवाला पहुँचे।

अरघवाला से चलने पर २८ कि. मी. पर ''चम्बा'' नामक एक स्थान मिला। यहाँ पर भी बाजार तथा सभी साधन उपलब्ध हैं। चम्बा जाने के लिये अरघवाला से दो पहाड़ पार करने पड़ते हैं। चम्बा से टिहरी १८ किमी. है तथा टिहरी से भल्ड़ियाना १६ किमी. है। हमलोग ११ बजे भल्ड़ियाना पहुँचे। यहाँ से धरासू २३ किमी. है। दोपहर बारह बजे हमलोग चिन्दाली साँड़ नामक स्थान पर पहुँचे। यहाँ पर बस आधे घंटे रूकी। यहाँ पर हमलोगों ने पैकेट-लन्च लिया। थोड़ी दुर रुकने के बाद दोपहर १२·३० बजे हमलोग पुन: आगे चले।

यहाँ से उत्तरकाशी 2० किमी है। दोपहर १.३५ बजे हमलोग उत्तरकाशी पहुँचे। यहाँ पर होटल, ढाबे, दुकानें, दवाखाना आदि सभी हैं। परन्तु सभी चीजें बहुत महंगी हैं। यहाँ से ३ किमी० आगे गणेशपुर नामक एक ग्राम है। यहाँ से मनेरी बाँध ५ किमी० तथा भटवाड़ी ११ किमी. है। २·४५ बजे हमलोग भटवाड़ी पहुँचे। भटवाड़ी से गंगनानी ग्यारह किमी० तथा गंगोत्री ६८ कि०मी० है। भटवाड़ी से हर्सिल चौदह किमी० है।

हर्सिल में हमारे Tracking Camp का मुख्य और Base कैम्प लगा हुआ था। हर्सिल चरों ओर पहाड़ों से घिरा, पहाड़ों पर बसा एक छोट सा शहर है। जो ऋषिकेश से 2५० किमी० दूर है तथा समुद्रतल से 2६2० मीटर (८६४2 फुट) ऊँचा है।

हर्सिल में हमारे Tracking Camp का Base कैम्प लगा हुआ था। इस कैम्प का यह कार्य था कि वह हमें

आगे की Tracking हेतु ऐसे ढंग से तैयार करें कि हमें किसी भी प्रकार का शारीकि, मानसिक कष्ट न हो।

हम लोग हर्सिल में १८-५-८९, १९-५-८९ तथा ३०-५-८९ के रात तक रहे। हमें एक दिन में सुबह तथा शाम दो बार पहाड़ों पर चढ़ने का ढंग तथा सावधानियाँ बताई गयीं तथा लगभग ५०० मीटर की ऊँचाई तक चढ़ाया भी गया। इसी प्रकार हमें ३०-५-८९ के सुबह ८.०० बजे से बारह बजे तक पहाड़ों पर ७ कि. मी० चलाया गया। शाम को हम लोंगों को रबर के जूते तथा बड़ा सामान रखने के लिये हैवर-सेक दिया गया। "हैवर सेक" का अर्थ है—"पीठ्ठू" या पीठ पर सामान लादने के लिये बड़ा थैला।

दिनाङ्क ३१-५-८९ को प्रात: १०.०० बजे हमलोग हर्सिल से चले। रास्ते के लिये हम लोगों को पैकेट लंच दिया गया। यहाँ से आगे हमलोगों को अपना सारा सामान लादकर पैदल ही चढ़ना तथा चलना था। रास्ते में हमलोगों ने ७ किमी० पर प्रथम विश्राम, ९ किमी० बाद दूसरा विश्राम तथा ११ किमी० बाद अंतिम विश्राम करते हुये दोपहर दो बजे लंका पहुँचे।

लंका में हमारे Tracking का Ist Staging Camp लगा हुआ था। लंका पहुँचने पर वहाँ के Camp Commander साहब ने हम लोगों का स्वागत किया तथा वहाँ के नियमों बातावरण, तथा व्यवस्था सम्बन्धी बातों की जानकारी दी। जब हम लोग लंका आते समय दूसरा विश्राम कर रहे थे तब हमें गोमुख से लौटता हुआ ५ वाँ दल मिला था। हमलोगों से इस दल के कैडेट बहुत अनुशासित तथा जोशपूर्वक मिले। वो लोग हमलोगों से हाथ मिलाकर 'Best of luck' कह रहे थे। हमलोग भी "धन्यवाद" कहते हुये आगे बढ़ रहे थ। रास्ते में हमें जितनी भी निजी या यात्री बसें, कारें इत्यादि मिल रही थी, उनमें बैठे सभी पुरुष, स्त्री, लड़के, लड़कियाँ हाथ हिलाकर हमारा उत्साहवर्द्धन कर रहे थे। हमलोग भी उनकी बधाई का उत्तर देते हुये लगातार आगे बढ़ रहे थे।

रास्ते में हमलोगों ने "भारत माता की जय", "हम सब एक है", "शिवाजी महाराज की जय" "Mother chamunda Happy-Happy" के नारे भी बुलंद किये। लंका पहुँचने पर हमें नास्ता दिया गया। फिर हमें विश्राम हमलोगों को यहाँ पर किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई।

दिनांक १-६-८९ को हम लोगों ने लंका से गंगोत्री के लिये प्रस्थान किया। लंका से गंगोत्री ११ किमी. है। यह सफर हम लोगों ने ५ घण्टे में पूरा किया। रास्ते में तीन स्थानों पर विश्राम करके हम शाम ४.०० बजे गंगोत्री पहुँचे। गंगोत्री पहुँचने पर हमें वहाँ के नियमों, व्यवस्थाओं तथा वहाँ के लोगों के बारे में विस्तार से बताया गया।

दिनांक २-६-८९ को सुबह १०.०० बजे हम लोग गंगोत्री से ९ किमी. आगे चीरबासा के लिये चले। गंगोत्री से चीरबासा के लिये जाने वाला रास्ता कुछ स्थानों पर जान लेवा है। यहाँ पर ९ किमी. का रास्ता केवल चढ़ाई ही है। अत: हम लोग इस यात्रा में एक-एक किमी. पर विश्राम करते थे। गंगोत्री से आगे पूरी पर्वत-शृंखलायें एकदम सुनसान हैं। यहाँ पर किसी भी प्रकार की दुकानें आदि नहीं हैं। गंगोत्री से आगे जाने जाने के लिये एक मात्र साधन खच्चर है, परन्तु हम लोगों को पैदल चलना ही उपयुक्त लगा।

शाम ३.०० बजे हम लोग चीरबासा पहुँचे। यहाँ पर वातावरण एकदम शान्त, स्निग्ध तथा मनोहारी था। पहाड़ों से लगातार टकराते हुये कल-कल निनाद करती हुई भागीरथी सतत प्रवाहित हो रही थी। एक-दम स्वच्छ जल, तेज धार बाली भागीरथी वास्तव में जीवनदायिनी, की ही प्रति रूप परिलक्षित हो रही थी।

चीरबासा में केवल चीड़ के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष हैं। यहाँ पर चीड़ के अलावा किसी भी प्रकार की वनस्पति नहीं उगती है। यह इतनी ऊँचाई पर स्थित है कि आकाश में उड़ते हुये बादलों के ढेर भी हमसे ऐसे टकरा रहे थे, मानो सड़क पर चलते समय बगल से राहगीर गुजर रहे हों। यहाँ पर संध्या ६.०० बजे से ही बादल बर्फ में परिवर्तित होना प्रारम्भ कर देते हैं और सात बजते-बजते यहाँ पर वायुमण्डल में आक्सीजन की कमी होने लगती हैं तथा बर्फ की परत दर परत जम जाती है।

दिनांक ३-६-८९ को प्रात: ६.३० पर हम लोग गोमुख के लिये चले। हम लोगों के साथ यहाँ से एक वायरलेस-मैन भी था, ताकि रास्ते में किसी भी प्रकार की दुर्घटना या आवश्यकता हेतु वायरलेस द्वारा तुरन्त सूचना की जा सके और ३० मिनट पर चीरबासा के Camp Commander साहब को कैडेटों की स्थिति का परिचय कराया जा सके। चीरबासा से गोमुख ९ किमी. है। रास्ते में ५ किमी. चलने पर एक स्थान 'भोजवासा' मिला। यहाँ पर केवल भोजपत्र के पेड़ हैं। गंगोत्री के बाद वहीं पर ठहरने के लिये एक छोटा सा अतिथि-घर बना है। भोजवासा से आगे चलने पर बहुत ही दुर्गम व खतरनाक रास्तों से आकर जाना पड़ता है।

इनके खतरों का एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि दिनांक ३०-५-८९ से ३-६-८९ तक उस रास्ते से पुणे की एक वयस्क लड़की, एक विदेशी दम्पत्ति अपने छोटे पुत्र सहित तथा दो अन्य व्यक्ति दुर्घटनाग्रस्त होकर काल-कवलित हो चुके थे। परन्तु प्रभु की कृपा से हमारे N. C. C. Camp में गये कुल १२०० कैडेटों में से किसी भी कैडेट पर काल ने अपना आक्रोश नहीं व्यक्त किया। इतना ही नहीं गंगोत्री के निवासियों से पता चला कि गत वर्ष इसी मार्ग पर ३१ मोतें हो चुकी थीं। दोपहर १० बजे हम लोग गोमुख पहुँचे। गोमुख से आधा किमी. पहले हरे पानी का एक शांत, गहरा पहाड़ों से घिरा तथा गहरा तालाब है। गोमुख से ११ किमी. आगे एक और स्थान है-"तपोवन"।

गोमुख में जब हम लोग पहुँचे तब वहाँ चारों ओर बर्फ ही बर्फ जमी थी। गोमुख में गंगा की धारा के दोनों ओर ऊँची-ऊँची हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलायें हैं जोकि हमें बरबस महादेवी वर्मा की 'हिमालय से' कविता की याद दिला देती है।

यहाँ तीन ओर पहाड़ हैं तथा एक ओर नदी का मार्ग है। यहाँ पर धारा से बाईं ओर के पहाड़ मटमैले बर्फ के तथा अन्य दो पर्वत श्वेत बर्फ के हैं। यहाँ पर हम लोगों ने स्नान किया। फिर हम वापस शाम ४.०० बजे चीरबासा स्थित अपने कैम्प में आ गये।

दिनांक ४-६-८९ को सुबह ७.३० बजे नाश्ता करने के बाद टेन्ट की सज्जा, व्यवस्था (Kit-lay-out) प्रतियोगिता हुई। जिसमें राजस्थान प्रथम, उ०प्र० द्वितीय तथा अन्य सभी तृतीय स्थान पर रहे। फिर Cultural Competitions हुआ, जिसमें उत्तर प्रदेश प्रथम तथा पश्चिम बंगाल द्वितीय स्थान पर रहा। प्रात: १०.०० बजे हम लोग वहाँ से वापस गंगोत्री के लिये चले। हम लोग ९ किमी. चलकर गंगोत्री शाम ४.०० बजे पहुँचे। उस दिन हम लोगों ने रात्रि विश्राम गंगोत्री में ही किया।

दिनांक ५-६-८९ को प्रात: ९.०० बजे आलोक के पैर के अँगूठे में मोच आ गई। हम लोग बहुत दु:खी हुये परन्तु फिर उसे कार द्वारा हर्सिल भेज दिया गया। हम लोगों ने १०.०० बजे लंका के लिये प्रस्थान किया। १० किमी. का रास्ता तय करके शाम ४.३० बजे हम-लोग लंका पहुँचे। दिनांक ८-६-८९ को प्रात:काल ही अपने सामान सहित, बस द्वारा ऋषिकेश के लिये चल दिये, करीब चार बजे वहाँ पहुँचे। अधिक थके होने के कारण हम जल्दी ही सो गये।

दिनांक ९-६-८९ को हम लोग प्रात: पाँच बजे

जगे तो हमें पता चजा कि हरिद्वार के सभी कैडेट अपने-अपने घर चले गये क्योंकि उन्हें कमाण्डर साहब की अनुमति मिल गई थी। हम लोगों ने भी ऋषिकेश स्टेशन से दो बजे दोपहर में आने वाली पैसेन्जर से हरिद्वार जाने की योजना बनायी फिर प्रात: सात बजे ऋषिकेश घूमने गये।

ऋषिकेश में हम लोगों ने एक टैक्सी किराये पर ली तथा ९ कैडेट लसमें सवार होकर ऋषिकेश घूमने गये। यहाँ हम लोगों ने लक्ष्मण झूला, शिवानन्द झूला तथा अन्य कई मन्दिरों में जाकर भगवान के दर्शन किये। दूकानों से थोड़ा बहुत-सामान भी क्रय किया फिर ग्यारह बजे वापस पं० ललित मोहन स्नातकोत्तर महाविद्यालय आ गये जहाँ हमारा कैम्प लगा हुआ था, यहाँ पर हम-लोग भोजन करने के पश्चात अपना सामान लेकर ऋषिकेश स्टेशन जाने के लिये N. C. C, की गाड़ी का इन्तजार करने लगे। नियमत: गाड़ी द्वारा पहले हम-लोग जाने के अधिकारी थे, परन्तु वहाँ पर हम लोगों के साथ पक्षपात किया गया और हमें सबसे बाद में लगभग २-१५ बजे गाड़ी से स्टेशन लाया गया तब तक पैसेन्जर जा चुकी थी। वहाँ से सभी कैडेट भी जा चुके थे। केवल उत्तर प्रदेश के कैडेट रह गये थे। अगली ट्रेन शाम चार बजे की थी। हम लोगों ने फैसला किया कि यदि हम सभी अभी बस से हरिद्वार पहुँच जायें तो तीन-चार घण्टे का समय हमलोगों को हरिद्वार घूमने के लिये मिल सकता है। अस्तु हम लोग हरिद्वार बसस्टैण्ड गये तो हमें ज्ञात हुआ कि वहाँ पहले से ही बहुत भीड़ है।

जैसे-तैसे हम लोग कानपुर वापस आ गये। इस प्रकार हमारा N. C. C. कैम्प अत्यधिक सफल, सुरक्षित, मनोरंजक तथा प्रेरणादायक रहा। हमलोगों को इस कैम्प में बहुत लाभ मिला। हमें N. C. C. कैम्प में देश के विभिन्न कोनों से आये कैडेटों के साथ घुलने-मिलने का अवसर मिला। हम उनकी भाषा, पहनावा, खान-पान, स्वभाव तथा रहन-सहन से भी परिचित हुये। हमें इस कैम्प का एक प्रमाण-पत्र भी दिया गया। इस कैम्प द्वारा हमें बहुत सी महत्वपूर्ण जानकारियाँ भी मिलीं। N. C. C. के ध्येय-वाक्य "एकता और अनुशासन" को भी अपने जीवन में उतारने का अवसर मिला।

-:○o○:-

चुनौती

साहस तो सपूतों का कभी चुक न सकेगा।
दीवानों का है कारवाँ ये रुक न सकेगा।
करके कलम स्वयं ही शीश फेंक दें भले-
लेकिन ये असम्भव है, कभी झुक न सकेगा।।

हर समस्या तो मुझे मेहमान है।
कर रहा जी खोल कर सम्मान है।
कुछ न कुछ अनुभूति मिल जाती नई-
वेदना तो वक्त का वरदान है।।

रे मानव तेरे कदम किधर ?

सौरभ शुक्ल नवम 'ख'

(आज के युग में मनुष्य को उसके कदमों को सही दिशा की प्रेरणा देना प्रस्तुत कविता का अभिप्राय है ।)

—सम्पादक

खोजना क्या चाहते हो,
क्या रहा बाहर तुहारी पहुँच से अब ।

तुम स्वयम् स्व संचालक, तुम स्वयं ही स्व निर्माता ।
अथ स्वयं इति की उपाधि, के स्वयं तुम अधिष्ठाता ।
अब रहा क्या शेष, जिससे कल्पना का ज्ञान होवे ।
कौन है अवशेष, जिससे खोज का उत्थान होवे ।

हर जगह तेरी नजर है, हर जगह का तू विधाता ।
देख तेरी शक्तियों से कौन है, अब पार पाता ।
तू वरुण यम अग्नि वायु का, स्वयं मालिक बना है ।
देख तेरी शक्तियों का, क्षितिज में परचम तना है ।

है कहाँ वह 'शब्द' जिसका, अर्थ अब भी जानना है ।
है कहाँ वह क्षेत्र निज, झण्डा जहाँ अब तानना है ।
अब पराजय शब्द की भी तो पराजय हो गयी है ।
किन्तु तेरी विजय की क्या इतिश्री भी हो गयी है ।

अब स्वयं को नष्ट करने की कला यह कौन है ।
अब स्व संस्कृति नष्ट करने को चला फिर कौन है ।
क्या तुम्हारी परम उन्नति का यही अभीष्ट है ।
यह प्रदूषित मनः स्थल ही तुम्हारा इष्ट है ।

-:◌o◌:-

"भारत के महान शहीद"

– रवीश सिंह राजपूत दशम

(वीर भूमि भारत में वीरता, त्याग और बलिदान के दर्शन तो पग-पग पर होते हैं। प्रस्तुत लेख में कुछ ऐसे ही महापुरुषों का उल्लेख हैं जो कालजयी बन गये हैं।) – सम्पादक

"शहीदों की चिताओं पर लगगे हर वरस मेले।
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशाँ होगा।"

"ब्रिटिश शासकों की कूटनीतिक चालों के कारण जिन सपूतों ने हँसते-हँसते अपने देश की आन-बान और शान पर अपने जीवन का सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। उन्हें भुलाया नहीं जा सकता। इनमें हजारों नाम ऐसे हैं, जिन्हें हम जानते ही नहीं हैं। यहाँ मैं कुछ ऐसे ही अमर शहीदों के सम्बन्ध में कुछ बताना चाहता हूँ।

मातृवेद संस्था नामक क्रान्तिकारी संगठन के सक्रिय कार्यकर्त्ता असफाक उल्ला खान को १९ अगस्त १९२५ में घटित काकोरी डाकगाड़ी डकैती केस के अभियोग में बन्दी बनाया गया तथा १८ दिसम्बर १९२७ को फाँसी पर चढ़ा दिया गया।

अशफाक उल्ला खान [१८ दिसम्बर १९२७]

भारत की स्वतंत्रता के लिये जीवन पर्यन्त संघर्षरत रहे तथा 'स्वराज्य सेना' में प्रमुख भूमिका अदा। की ब्रिटिश सैनिक गाड़ी को उलटने के लिये २३ अक्टूबर १९४२ की रात में रेल की पटरियाँ हटाते हुए गिरफ्तार हुए तथा २१ जनवरी १९४३ को फाँसी के तख्ते पर चढ़कर शहीद हो गये।

– हेम कलानी

राजनीतिक कार्यकलापों में प्रमुख रूप से भाग लिया तथा अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने के लिये शारीरिक विकास और सैनिक शिक्षा देने के उद्देश्य से देश भक्त नवयुवकों की एक संस्था बनाई। २२ जून १८९७ को प्लेग कमिश्नर रैंड पर हमला किया अपने भाइयों–बाल कृष्ण चापेकर व वासुदेव चापेकर के साथ गिरफ्तार हुए तथा १८ अप्रैल १८९८ को फाँसी के तख्ते पर चढ़कर शहीद हो गए। १२ मई १८९९ को बाल कृष्ण चापेकर को फाँसी पर लटकाया गया तथा ८ मई १८९९ को भी वासुदेव चापेकर को भी फाँसी पर लटका दिया। इस प्रकार तीनों भाई स्वतंत्रता की बलिवेदी पर चढ़कर शहीद हो गये।

– दामोदर चापेकर एवं उनके भाई

ये क्रान्तिकारी दल के सदस्य थे १३ मार्च १९३३ को हबीबगंज में हुई डाक की डकैती में भाग लिया था। गिरफ्तार होने पर हत्या तथा डकैती के आरोप में मौत की सजा हुयी। २ जुलाई १९३४ को सिलहट जेल में फाँसी के तख्ते पर चढ़कर शहीद हो गये।

– असित भट्टाचार्य

सविनय अवज्ञा आंदोलन १९३० में भाग लिया शोलापुर में थानों पर हुए हमले का अभियोग लगाकर बन्दी बनाया गया तथा १२ जनवरी १९३१ में यरवदा जेल में फाँसी दे दी गयी।

– जगन्नाथ शिन्दे

बम्बई प्रेसीडेन्ट में रामोशी जनजाति के लोगों की सशस्त्र सेना बनाकर ब्रिटिश सरकार का विरोध करने के कारण ३ जुलाई १८७९ को गिरफ्तार हुये तथा बन्दी होकर काले पानी की सजा में अदन गये जहाँ उन्होंने आमरण अनशन करके १७ फरवरी १८३६ को प्राण त्याग दिए।

– वासुदेव फड़के

"भारत माता की जय"

विश्व में प्रथम

प्रणय यादव
नवम (ख)

१– विश्व की सबसे लंबी सुरंग सिम्पलन (इटली और स्विटजरलैण्ड के बीच, ५५६ गज लम्बी)
२– विश्व का सबसे बड़ा प्लेटफार्म– स्टोर विकर
३– विश्व की सबसे बड़ी सड़क सुरंग– माउण्ट ब्लाक (फ्रांस से इटली ७२ मील)
४– विश्व का सबसे बड़ा महल– वेटिकन (इटली)
५– विश्व का सबसे बड़ा पुल– महात्मा गांधी सेतु
६– विश्व का सबसे ऊँचा झरना– वेनजुयला
७– विश्व का सबसे ऊँचा पठार– तिब्बत
८– विश्व की सबसे लम्बी नहर– स्वोलीन नहर
९– विश्व की सबसे बड़ी सेना– मुक्ति सेना (चीन)
१०– विश्व का सबसे बड़ा संग्राहलय– एलवर्ट संग्राहलय
११– विश्व का सबसे धनी व्यक्ति– एडलीस फोर्ड, (अमेरिका)
१२– विश्व का सबसे बड़ा बन्दरगाह– हार्वर न्यूयार्क
१३– विश्व की सबसे बड़ा स्टेडियम– एस्ट्राहीव स्टेडियम
१४– विश्व का सबसे बड़ी लाइब्रेयरी– मास्को की लेमिन लाइब्रेयरी (पुस्तक-दो करोड़)
१५– विश्व की सबसे ऊँची इमारत– सियर्स टावर (सकागो)
१६– विश्व का ऐसा देश जहाँ सर्प नहीं– हवाई द्वीप
१७– संसार का सबसे प्राचीन विश्वविद्यालय– पाविया विश्वविद्यालय (इटली)
१८– विश्व का कौन सा व्यक्ति केवल सर्प का भोजन करता है।– योगीन (आस्ट्रेलिया)
१९– विश्व का सबसे छोटा बंदर–विमोगार्मी सेट का बन्दर (७५० ग्राम) अमेजन नदी के तट पर।
२०– कम्यूटर की खोज किसने की– १५० वर्ष पूर्व चार्ल्स वैवेज।
२१– आधुनिक कम्यूटर किसने बनाया– १९४० के शुरू में हावर्ड

प्राचीन भारत में गणतंत्र

— ब्रजेश कुमार नवम 'ख'

(स्वाधीनता के पश्चात् भारत में गणतन्त्र की स्थापना कोई नयी बात नहीं है। अति प्राचीन काल से अपने देश के यह शासन प्रणाली विद्यमान थी।) — सम्पादक

पं॰ जवाहरलाल नेहरू ने गणतन्त्रात्मक शासन को भारत के लिये एक नयी बात बताया था, पर वास्तव में यह भारत के लिये एक नयी चीज नहीं थी। आज से लगगग दो हजार वर्ष पूर्व उत्तर भारत में वैशाली नामक राज्य एक गणतंत्र था। यह वास्तव में एक आदर्श गणतंत्र था।

वहाँ पर जनता द्वारा निर्वाचित एक सदस्य राज्य करता था। वहाँ की जमीन सोना बिखेरती थी। राज्य धन-धान्य से परिपूर्ण था और वहाँ की जनता समृद्ध थी।

वैशाली नगर ही राज्य की राजधानी था। कहा जाता है कि उस नगर की स्थापना वैशाल नाम के एक राजकुमार ने की थी। वह राजा इक्ष्वाकु का बेटा था।

वैशाली बीस मील की परिधि में फैला एक सुन्दर नगर था। नगर की सुरक्षा के लिए चारो ओर एक दीवार बनी हुयी थी। दीवार में केवल तीन दरवाजे थे। तीनों पर हर वक्त कड़ा पहरा रहता था।

वैशाली के निवासी सज्जन और उदार स्वभाव के थे। वे सब से दोस्ती और प्रेम का व्यवहार करते थे। आपसी एकता उनकी शक्ति थी। वे अपने कानून स्वयं बनाते थे और उनका उचित रीति से पालन करते थे। वे इतने ताकतवर दिलेर और एकजुट थे कि किसी भी राज्य की हिम्मत उन पर हमला करने की नहीं होती थी।

आस-पास के दूसरे राजा वैशाली की आर्थिक समृद्धि को देखकर जलते थे और इस ताक में रहते थे कि वैशाली को जीतकर वहाँ के लोगों को गुलाम बनाया जाय। वे किसी भी खतरे का सामना करने को तैयार रहते थे। नगर के कई महत्वपूर्ण स्थानों पर युद्ध के नगाड़े रखे थे। समय-समय पर इन नगाड़ों को बजाया जाता था और इनकी आवाज सुनकर लोग एक जगह इकट्ठा हो जाते थे और लड़ाई की तैयारियाँ भी शुरू कर देते थे।

गंगा के दूसरी ओर मगध नामक राज्य था, जिस पर सम्राट अजातशत्रु शासन करता था। वह शक्तिशाली और निर्दयी शासक था। वह वैशाली पर अपना अधिकार करना चाहता था, पर वहाँ के निवासियों की अनोखी एकता और शक्ति को देखकर उन पर आक्रमण करने की हिम्मत नहीं कर पाता था।

उसने अपने एक चालाक और चतुर मंत्री वास्यकार से मिलकर एक योजना बनाई। वास्यकार को उसने योजनानुसार गधे पर बैठाकर, उसे पाटलिपुत्र से निकाल दिया।

वास्यकार वैशाली पहुँचा और वहाँ के नायक को बताया कि मगध के राजा ने उसे नाराज होकर देश से निकाल दिया है अब वह शरण लेने के लिए वैशाली आया है।

वैशाली के लोगों ने उस पर विश्वास कर लिया और उसे काम करने के लिये एक महत्त्वपूर्ण पद दे दिया। वास्यकार की बुद्धि बहुत तेज थी। उसने कड़ी मेहनत से काम किया और धीरे-धीरे उन्नति करता हुआ वैशाली का मुख्य न्यायाधीश बन गया।

वास्यकार वैशाली का जाना-माना नागरिक हो गया। वह आजादी से लोगों के बीच उठता-बैठता और सबके साथ अदब कायदे से पेश आता। लोग उसे पसंद करते और विश्वास करते थे।

वास्यकार ने धीरे–धीरे चालाकी से वैशाली के लोगों में दुश्मनी और फूट का बीज इस तरह बोया कि लोगों की शक्ति और एकता नष्ट हो गई।

अजातशत्रु इसी घडी का इन्तजार कर रहा था। उसने एक विशाल सेना के साथ रात में गंगा को पार किया और वैशाली के दरवाजे तक आ पहुँचा। वास्यकर ने चुपके से एक दरवाजा खुलवा दिया। अजात शत्रु की सेना नगर के अन्दर आ गयी। कुछ लोगों ने अजात शत्रु की सेना से युद्ध भी किया, पर वे परास्त हो गये। वास्यकर ने सेना का स्वागत किया। वैशाली पर अजात शत्रु का अधिकार हो गया। उसने लिच्छिवियों को अपना दास बनाकर, वैशाली में अनेक कर लगाये और वहाँ अपने कानून लागू किये।

इस प्रकार एक समृद्ध गणतन्त्र का नाश हो गया।

आज हमारे देश की भी वैसी ही हालत हो गई है, जैसी वास्यकार ने वैशाली की की थी। क्या हम अपने प्यारे देश को बर्बाद होता देखना चाहेंगे? और क्या अपने आप को दास कहलवाना पसंद करेंगे? यदि नहीं तो हमें अपने देश को वास्यकर जैसे लोगों के चंगुल से मुक्त करना होगा। और यदि हाँ तो आगे का मालिक भगवान होगा।

एंटी बायोटिक की खोज

– राजीव रंजन पाण्डेय 'राज' द्वादश 'ख'

(पूरा विश्व आज वैज्ञानिक दौड़ में शामिल है। नित नये अविष्कार हो रहे हैं। जीवन के हर क्षेत्र को इन वैज्ञानिक आविष्कारों ने प्रभावित किया है। इन आविष्कारों की जानकारी हमारे विद्यार्थियों को भी होनी चाहिए। इस दृष्टि से यह लेख उपयोगी है। – सम्पादक)

आधुनिक चिकित्सा के बढ़ते कदमों में एंटी बायोटिक की खोज निसंदेह एक लम्बी छलांग है। सबसे पहली एंटीबायोटिक पेनिसिलीन थी, जिसकी अलेग्जेंडर फ्लेमिंग ने सन् १९२८ में खोज की थी। उन्होंने ने ही सर्व प्रथम देखा कि स्टेफिलो कोकाई नामक बैक्टीरिया की कल्चर प्लेट में जब हरे रंग की फफूंद उग जाती है, तो बैक्टीरिया की वृद्धि रुक जाती है, लेकिन पेनिसिलीन को इसके फफूंद से सन् १९४० में अलग किया गया और उसके गुणों का विस्तार से अध्ययन किया गया। प्रारंभ में पेनिसिलीन इतनी दुर्लभ थी कि रोगी को दिये जाने के बाद यह औषधि उसके मूत्र से वापिस निकाल ली जाती थी, ताकि उसका पुनः प्रयोग किया जा सके। आज पेनिसिलीन बहुत ही कम मूल्य पर उपलब्ध हो जाती है।

बैक्टीरिया एक कोशकीय वनस्पति वर्ग से संबंध रखने वाला जीव होता है। कुछ बैक्टीरिया रोग पैदा करते हैं। इनके आधार पर एंटीबायोटिक्स दो मुख्य भागों में बांटे जा सकते हैं। एक तो वे, जो केवल कुछ प्रकार के बैक्टीरिया पर ही प्रभाव डालते हैं। इनको नैरो स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिक कहते हैं। इस वर्ग में पेनिसिलीन मुख्य है। दूसरे जो विभिन्न प्रकार के बहुत से बैक्टीरिया पर प्रभाव डालते हैं, इनको ब्रॉड स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिक कहा जाता है। जिनमें टेट्रासाइक्लिन और क्लोरोमाइसिटीन मुख्य है।

यदि हम शब्द 'एंटीबायोटिक' के ऊपर ध्यान दें तो हमें 'एंटी' का अर्थ होता है किसी के विरोध में तथा 'बायोट' का अर्थ जीवन है। इन दोनों को मिलाकर एंटीबायोटिक कहा जाता है। ये दवाएं कुछ विशेष प्रकार के जीवाणुओं के जीवन को नष्ट करने के लिये उपयोग में लाई जाती हैं। एक वैज्ञानिक ने इसकी परिभाषा यों दी है– "एंटीबायोटिक वे औषधियाँ हैं, जो अपनी जीवन-रक्षा के लिये दूसरों का जीवन नष्ट करती हैं।"

वैक्समैन नामक वैज्ञानिक के कथनानुसार ये वे रासायनिक पदार्थ हैं जो जीवाणुओं से बने हैं और इनमें बैक्टीरिया या जीवाणु की वृद्धि रोकने की शक्ति है। परन्तु हम चाहें कि किसी भी एंटीबायोटिक प्रयोग करें तो यह संभव नहीं है। इनका कार्यक्षेत्र बड़ा ही सीमित होता है। एक विशेष प्रकार एंटीबायोटिक किसी विशेष प्रकार के रोग के लिये ही उपयोगी होगा। ऐसा नहीं होता कि वह किसी भी बैक्टीरिया से हुये रोग को ठीक कर दे।

यह आश्चर्य जनक सत्य है कि बैक्टीरिया द्वारा जनित रोग का इलाज भी बैक्टीरिया से बने एंटीबायोटिक द्वारा होता है। बैक्टीरिया द्वारा अनेक खतरनाक बीमारियाँ फैलायी जाती हैं। इनके कारण गंभीर बीमारियां हो जाती हैं, जिनसे मृत्यु भी हो सकती है।

पहले तो पेनिसिलीन को द्रव के रूप में प्राप्त किया गया। पर शीघ्र ही वैज्ञानिकों का यह प्रयास सफल हुआ कि वे प्रयोगशाला में इसे सिंथेटिक माध्यम में बना सकें। सिन्थेटिक शब्द मानवीकृत अथवा कृत्रिम के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। पेनिसीलिन के आरंभिक दिनों में अनेक कमियाँ सामने आयीं। एक तो यह दवा गुर्दों द्वारा शीघ्र ही शरीर के बाहर निकाल दी जाती है। जब अपने पूरे समय तक औषधि शरीर में उपस्थित ही नहीं रहेगी, तो उसे क्रिया करने का अवसर ही नहीं मिलेगा। अतः इसकी खुराकें जल्दी-जल्दी देनी पड़ती थीं। इसके अतिरिक्त एक अवगुण यह है कि घोल के रूप में पेनिसिलीन एक अस्थाई यौगिक का कार्य करती है। अम्लों के कारण भी इसकी क्रियाशीलता जाती रहती है। पेनिसिलीन अस्थाई होती है। अतः इसे शुद्ध करने में अत्यन्त कठिनाई का सामना करना पड़ा क्योंकि यह ठीक प्रकार से शुद्ध हो ही नहीं पाती थी। बाद में इसमें कुछ सफलता मिली। अंत में नई विधियों से शुद्ध और अधिक मात्रा में पेनिसिलीन बनाई गयी। इस सफलता ने अनेक वैज्ञानिकों तथा अनुसंधान केन्द्रों का ध्यान अपनी ओर खींचा, उस समय द्वितीय विश्व-युद्ध हो रहा था। ऐसी विशेष परिस्थितियों के कारण जबकि इस प्रकार की दवायें बड़ी आवश्यक सिद्ध हो सकती थीं, सबका ध्यान उठना स्वाभाविक ही था। उन दिनों पेनिसिलीन को बड़े व्यापारिक स्तर पर बनाने के प्रयत्न प्रारम्भ किये गये। इस तरह के प्रयत्न ब्रिटेन और अमरीका ने सम्मिलित रूप से किये थे।

एंटीबायोटिक केवल पेनिसिलीन को ही नहीं कहा जाता। अन्य एंटीबायोटिक कुछ बीमारियों में पेनिसि-लीन से भी अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं। आज सैकड़ों एंटीबायोटिक मानव ने खोज निकाले हैं। जैसे पेनिसिलियम, पेनिसिलियम नोटेटम नामक बैक्टीरिया से, ग्रामिसाइडिन बेसिलस ब्रेविस से, टाइटोथ्राइसिन भी बेसिलस ब्रेविस से स्ट्रेप्टोमाइसीन स्ट्रेप्टोमाइसजि ग्रीसियस से, बेसिट्रासिन बेसिलस सबटिलिस से तथा औरियोमाइसिन स्ट्रेप्टोमाइसीज नामक जीवाणु से प्राप्त होता है। पहला सिंथेटिक एंटीबायटिक क्लोरम फेनिकाल था।

एंटीबायोटिक की खोज से चिकित्सकों को संक्रमण (Infection) रोकने में बड़ी सहायता मिली है। इनकी मदद से शल्य चिकित्सा को और अधिक सुरक्षित बनाया जा सका है।

एक तेजस्वी महापुरुष

"नेताजी सुभाष चन्द्र बोस"

– वेद प्रकाश सिंह सप्तम् 'ख'

(राष्ट्र को स्वतन्त्रता के लिए जिन महाबिभूतियों ने अपने पृष्ठों की आहुतियाँ दी हैं उन्हे याद करना हमारा परम कर्त्तव्य है।) – सम्पादक

राय बहादुर जानकी नाथ गम्भीर प्रकृति के व्यक्ति थे। उनकी धर्म-पत्नी थी, प्रभावती देवी। रायबहादुर जितने भौतिक वादी थे, उनकी धर्म पत्नी उतनी ही धर्म-परायण थी। उन्ही के कोख से एक बालक का जन्म हुआ।

बालक के जन्म के कुछ दिन बाद एक प्रसिद्ध ज्योतिषी से बालक की जन्मपत्री तैयार करायी गयी। ज्योतिषी ने प्रभावती से कहा आपका लाल एक अवतार हैं इसका जन्म यूँ ही नहीं हुआ है। वरन किसी विशेष उद्देश्य से हुआ। यह उसे अवश्य पूर्ण करेगा।

'इसके हृदय में सागर जैसी गहरायी होगी तो हिमालय जैसी बुलन्दी भी होगी। सादगी जीवन निर्वाह करेगा लेकिन इसमें विचार शीलता की भी पराकाष्ठा होगी। ज्योतिषी ने बालक का नाम 'सुभाष चन्द्र' कह कर उठते-उठते उसने बालक को प्रणाम कर बिना कुछ लिये चला गया।

बाल्यकाल से ही इनका ध्यान देश-सेवा की ओर था। इनकी शिक्षा-दीक्षा होने लगी। कई छात्र रोज सुभाष से मिलने उसके बँगले पर आते थे। एक दिन उसके पास वह लड़का नहीं आया, जो प्रतिदिन नियमित आता था।

सुभाष के उसके मिलने पर पता चला कि उसके चाचा जो कि भामपुर में रहते थे, हैजे के कारण मृत्यु को प्राप्त हुये। इसके बाद सुभाष चिन्तित रहने लगा।

सुभाष कुछ छात्रों को लेकर भामपुर गया और हैजे से पीड़ित लोगों की सेवा करने लगा। दो महीनों तक हैजे की विकट परछाइयों के नीचे चक्कर लगाने के पश्चात् वीर बालक सुभाष भी अपने घर चला आया।

एक दिन स्कूल में हेडमास्टर ने सुभाष से प्रश्न किया-तुम पढ़-लिखकर क्या काम करना पसन्द करोगे? एक क्षण के लिये बालक सुभाष सोच में पड़ गये, फिर बोले- "मैं सर्व प्रथम अपने देश को अजाद कराने की कोशिश करूँगा' हेडमास्टर साहब।"

हेडमास्टर इस उत्तर से बुरी तरह चौंक पड़े। राय बहादुर के बेटे के मुँह से ऐसे शब्द सुनने की उन्हें आशा तक न थी। वे तो यह कल्पना कर रहे थे कि उनका बेटा आई० सी० एस० अथवा राय बहादुर बनने का कोशिश करेगा। सुभाष ने मैट्रिक प्रथम श्रेणी में पास किया। सुभाष ने १७ वर्ष की आयु में १९१४ में में रामकृष्ण परमहंस के उत्तराधिकारी स्वामी विवेकानन्द के भाषण भी सुने। इसका उन पर गहरा प्रभाव पड़ा। सुभाष का एक मित्र था जो कि अंग्रेजी था उसका नाम हैरी था। एक बार उसने गंदे भारतीय लड़के को 'ब्लैक मंक्की' कह दिया। इस पर सुभाष ने उसकी बहुत पिटाई की।

सुभाष ने बी० ए० की परीक्षा पास कर डिग्री प्राप्त कर ली। यही नहीं बल्कि अच्छा-खासा सैनिक प्रशिक्षण भी प्राप्त कर लिया। इसी समय सुभाष के

मन में यह भावना जागृत हुयी कि सेना संगठित करने के बाद ही भारत माँ को स्वाधीन कराया जा सकता है। सुभाष देश सेवा के कार्य करने लगे। उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। २५ अक्टूबर १६२४ को एक आर्डीनेंस जारी कर दिया गया। इसका नाम था–'बंगाल आर्डीनेंआ' इसके द्वारा बंगाल सरकार को आदेश दे दिया गया कि वह जब चाहे जिसे बन्दी बना सकती है। गिरफ्तारियाँ आरम्भ हो गयी। २५ अक्टूबर को सुभाष गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में सुभाष की तबियत खराब हो गयी। उनकी खराब हालत देखकर सरकार को यह भय हुआ कि यदि यह चल बसे तो देश में विद्रोह न भड़क उठे। १६२७ मई को उनको जेल से रिहा कर दिया गया। अप्रैल १६३६ में उनको गिरफ्तार कर लिया गया और फिर मार्च १६३७ में मुक्ति मिली।

एक बार सुभाष चन्द्र लापता हो गये। पूरे देश में शोर मच गया। कुछ दिनों बाद सहसा २७ अप्रैल १६४२ को भारत में बर्लिन रेडियो से सुना गया 'मैं' यह बता देना चाहता हूँ कि यदि उनका कोई शत्रु है तो ब्रिटिश साम्राज्यवाद, वे बोल रहे थे।

... मैं संसार के किसी भी कोने में रहूँ, लेकिन मेरी भक्ति सदा मेरे देश भारत के लिये रही है। मैं भारतीय हूँ तथा सदा भारतीय ही रहूँगा, ब्रिटिश साम्राज्य का अन्त अब दूर नहीं, निकट है। ब्रिटिश सरकार जब सुभाष चन्द्र बोस का बर्लिन से रेडियो ब्राडकास्ट सुना तो वह तिलमिला उठी। सुभाष बहुत समय से चाहते थे कि भारत की स्वाधीनता के लिये एक "आजाद हिन्द" सेना का गठन किया। जारा जर्मनी के एक नगर ड्डनन पर हैडक्वाटर स्थापित कर सुभाष ने आजाद हिन्द सेना की घोषणा कर दी। उन्होंने १५०० सैनिकों वाली आठ बटालियन बनाई फिर वे बढ़ती ही चली गयी।

सुभाष जर्मनी ६ जून १९४३ को रवाना हुये और १० जून को टोकियो पहुँचे। वहाँ से वे सिंगापुर पहुँचे। वहाँ पर उनका स्वागत किया गया। सुभाष चन्द्र बोस ने "दिल्ली चलो" का नारा दिया। उन्होंने कहा भारत के स्वाधीनता सैनिकों त्याग और बलिदान के लिये तैयार हो जाओ, मातृभूमि तुम्हें प्रकार रही है– "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।" सुभाष चन्द्र बोस ने भारत को आजाद करने के लिये बहुत लड़ाइयाँ लड़ी। उनके बहुत से सैनिक मारे गये। 'जय हिन्द' की सेना दिल्ली आकर बहुत लड़ी।

इस समय नेता जी के मष्तिष्क में केवल एक ही आशा उभरी थी, वह थी रूस पहुँच कर कुछ करने की। वे एक विमान में बैठकर टोकियो के लिये रवाना हुये। २३ अगस्त १९४५ को टोकियो के एक ब्राडकास्ट पर कहा गया कि–अस्थाई आजाद हिन्द सेना के सरकार सुभाष चन्द्र जापानी सरकार से बात करने के लिये १६ अगस्त १९४५ को वायुयान द्वारा टोकियो रवाना हुये थे। १८ अगस्त को विमान दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गयी। इस समाचार पर ब्रिटिश सरकार को विश्वास नहीं हुआ क्योंकि दो वर्ष पूर्व भी जापानियों ने सुभाष चन्द्र बोस की मृत्यु का झूठा समाचार फैला दिया था।

भारत सरकार ने जो आयोग जाँच के लिये बैठाया उसने स्पष्ट मत व्यक्त किया कि वे जीवित नहीं है।

वैसे यह बात सत्य है नेता जी मरे नहीं है वे मर भी नहीं सकते। वे जीवित हैं और जब तक जीवित रहेंगे तब तक भारत जीवित है। उनकी याद देशवाशियों में सदा प्राण फूँकती रहेगी। जिन्होंने आजादी के लिए अपना बलिदान कर दिया।

उन्हीं महापुरुषों में थे नेता जी सुभाषचन्द्र बोस, जो मरे नहीं वरन् जीवित हैं। तथा सदा जीवित ही रहेंगे, इतिहास में तथा हमारे हृदय में।

सामान्य ज्ञान

कुछ महत्वपूर्ण तत्व

– वेदप्रकाश सिंह सप्तम (ख)

कुछ दुर्लभ वैज्ञानिक जानकारी देना संकलन कर्त्ता का उद्देश्य है।

–सम्पादकीय

प्रश्न

१. नाइट्रोजन गैस की खोज कब हुई ?
२. पृथ्वी का भार कितना है ?
३. हेमूधेम केतू अब कब दिखाई देगा ? यह कितने वर्ष बाद दिखाई देता है ?
४. सरसों के पौधे का वानस्पतिक नाम क्या है ?
५. भोपाल गैस–काण्ड में कौन सा गैस निकला था ?
६. चन्द्रमा का व्यास कितना है ?
७. न्यूट्रान की खोज कब हुयी ?
८. जल का क्रान्तिक ताप कितना होता है ?
९. वायुमण्डल की नमी मापने के लिये किस यंत्र का उपयोग होता है ?
१०. जल के भीतर की ध्वनि मापने के लिए किस उपकरण का उपयोग किया जाता है ?
११. स्कर्वी किसके कारण होती है ?
१२. अपोलो –१२ चन्द्रमा पर कब पहुँचा ?
१३. चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी कितनी है ?
१४. सहारा मरूस्थल का क्षेत्रफल कितना है ?
१५. लाउडस्पीकर का आविष्कार किसने किया ?
१६ ट्रांजिस्टर का आविष्कार किस सन् में हुआ ?
१७. प्रशान्त महासागर की गहराई कितनी है ?
१८. प्रोटॉन की त्रिज्या कितनी होती है ?
१९. भारत में समुद्री सीमा कितने क्षेत्र में फैली है ?
२०. हाइड्रोजन गैस का आविष्कार कब हुआ ?
२१. कोलम्बस ने अमरीका और वेस्टइडीज की खोज कब की ?
२२. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन कब और कहाँ हुआ था ?
२३. गुण-सूत्र किसका बना है ?
२४. स्काईलैब दुर्घटना कब हुयी ?
२५: ईवनिंग स्टार किसे कहते हैं ?

(उत्तर पृष्ठ ७१ पर देखें)

हँसी के गुब्बारे

संकलन–जितेन्द्र कुमार त्रिपाठी
एकादश (ख)

जीवन के बोझिल क्षणों में हास्य क्षणिकायें फिर से नई स्फूर्ति का संचार करती हैं अस्तु प्रस्तुत चुटकुलों से उपरोक्त लाभ पाठकों को मिलेगा।

–सम्पादकीय

१– पत्नी– जब भी तुम कार मोड़ते हो तो मुझे इस बात का डर रहता है कि कहीं एक्सीडेंट न हो जाये।

पति– अरे! तुम डरती क्यों हो। तुम भी मेरी तरह आँख बन्द कर लिया करो।

२– एक मित्र (अपने बेहद दुबले मित्र से)

–यार तुझे नौकरी न मिलने का कुछ तो कारण रहा होगा।

दुबला मित्र –

क्या पता ! आवेदन पत्र के साथ फोटो भेजने पर जबाब आता है कि हमने आपसे फोटो मांगा है एक्सरे नहीं।

३–चित्रकारः– जनाब ! यह चित्र घास चरती गाय का है इसका शीर्षक है "गाय और घास"।

दर्शक :– लेकिन इसमें घास कहाँ है ?

चित्रकार :– वह तो चर गई।

दर्शक :– और गाय कहाँ है ?

चित्रकारः– आप क्या समझते हैं कोई गाय इतनी बेवकूफ होगी कि वह घास चरने के बाद भी वह खड़ी रहेगी।

४– एक भिखारी एक घर के दरवाजे पर पहुँचकर बोला, "बाबा-कुछ खाने को दो।" अन्दर से आवाज आई," नहीं है।"

भिखारी–"तो फिर पैसा दो।" अन्दर से फिर आवाज आई, "नही है।"

भिखारी–"अरे तो फिर कपड़े ही दे दो।"

फिर आवाज आई "अरे ! वो भी नहीं है।"

तो भिखारी बोला "अरे तो फिर तुम अन्दर क्या कर हो तुम ? भी मरी तरह कटोरा लेकर बाहर आ जाओ।"

५– दो व्यक्ति जिसमें एक चीन का था और एक भारत का था। उन्होंने आपस-आपस में तय किया कि जो व्यक्ति अपने देश के एक भक्त का नाम बतायेगा वह दूसरे व्यक्ति की दाढ़ी से एक बाल नोच लेगा। शुरुआत भारतीय ने की– "महाराणा प्रताप" कहते हुये चीनी व्यक्ति की दाढ़ी से एक बाल नोच लिया। चीनी को गुस्सा आया और उसने कहा–"शुंग–तुंग–पुंग' और भारतीय की दाढ़ी से एक बाल नोच लिया।

भारतीय ने कहा सुभाष चन्द्र बोस और एक बाल चटक लिया। थोड़े गुस्से में आकर चीनी व्यक्ति ने कहा–"ताइव खान चेन च्वांग," और एक बाल जोर से खींचा। भारतीय गुस्से में आकर उसकी पूरी दाढ़ी को मुठ्ठी में पकड़-झटकते हुये चीखा–"जालियां वाला बाग.......................।'

उत्तर

(१) १७६६ ई. में
(२) ५.९८ × १०२९ मीटरीटन
(३) २०६२ ई० में ७६ वर्ष बाद
(४) ब्रेसिका कम्पेस्ट्रिस
(५) मिथाइल आईशोनेट गैस
(६) २१५९.९ मील
(७) सन् १९३२ में
(८) ३६०° सेन्टीग्रेड
(९) हाइग्रोमीटर
(१०) हाइड्रोफोन
(११) विटामिन 'सी' की कमी
(१२) १९ नवम्बर १९६९
(१३) २,३८,८५५ मील
(१४) ८४,००,००० वर्ग किमी०
(१५) एडीसन
(१६) शोकली
(१७) ११,०३३ मीटर
(१८) १० मीटर १३ से० मीटर
(१९)
(२०) हेनरी कैवेंडिश ने १९५२ में
(२१) सन् १४४२ में
(२२) सन् १८८५ में, बम्बई में
(२३) डी. एन. ए. तथा प्रोटीन
(२४) ११ जुलाई १९७९ में
(२५) वीनश-ग्रह को

"क्रिकेट का पहला-पहला रिकार्ड"

आशुतोष सिह
१२ 'ख'

१– शब्दकोश में 'क्रिकेट' शब्द पहली बार सन् १५५८ ई० में शामिल हुआ ।

२– पत्थर और लकड़ी की गेंदो के युग के बाद पहली सिली हुई गेंद सन् १६५८ ई. में बनी ।

३– पिच की लम्बाई प्रारम्भ में २३ गज थी पर १७४४ ई. से पिच की लम्बाई २२ गज कर दी गई ।

४– सन् १६४८ से लेग बाई रनों का मिलना आरम्भ हुआ ।

५– १०० रनों की साझेदारी सबसे पहले यामल सूटर और जार्ज लीर ने सन् १७६६ ई. में वटन शाबर की ओर से सरे के विरूद्ध की ।

६– टेस्ट क्रिकेट की पहली बों गेंद 'शाँ' ने फेंकी । वे इंग्लैण्ड के खिलाड़ी थे ।

७– टेस्ट क्रिकेट का पहला विकेट नेट थामसन (इंग्लैण्ड) ने चार्ल्स वैनरमैन (आस्ट्रेलिया) का लिया ।

८– आस्ट्रेलिया के बल्लेबाज चार्लस बैनरमैन ने टेस्ट क्रिकेट की पहली गेंद खेली, पहला रन व पहला शतक बनाया और उनका ही विकेट टेस्ट क्रिकेट में गिरने वाला पहला विकेट था ।

९– विश्व का पहला टेस्ट आस्ट्रेलिया और इंग्लैण्ड के बीच खेला गया और १६ मार्च सन् १८७७ को आस्ट्रेलिया ने इसे ४५ रनों से जीत लिया ।

१०– आस्ट्रेलिया के विलियम गैरेटा ऐसे क्रिकेट खिलाड़ी हैं जिन्होंने आस्ट्रेलिया की ओर से भी क्रिकेट खेला और आस्ट्रेलिया के विरूद्ध भी ।

११– इंग्लैण्ड के जेम्स साउथर्टन टेस्ट जीवन शुरू करने वाले सबसे बुजुर्ग खिलाड़ी है । उन्होंने ४६ वर्ष १६६ दिन की आयु में पहला टेस्ट खेला ।

१२– ६६ के योग पर सबसे पहले वलेम हिल (आस्ट्रेलिया) सन् १९०२ ई में आऊट हुये ।

१३– इंग्लैण्ड के जानी ब्रिग्स ने टेस्ट क्रिकेट में सबसे पहले १०० विकेट प्राप्त किये । अपना १०० वाँ विकेट उन्होंने आस्ट्रेलिया के विरुद्ध अपने २५ वें टेस्ट में सन् १८९५ ई० में लिया ।

विस्मय-पूर्ण

नीतेश त्रिपाठी

अष्टम (ख)

(१) इम्फाल का न्याधीश गोसेन एक ऐसा न्यायधीश था जिसे सिर नीचे पैर ऊपर करके न्यायालय में मुकदमा सुनने की अदभुत बीमारी थी। यह इसी प्रकार ११ बर्ष तक मुकदमा सुनता रहा।

(२) ग्रर नाई मछली ऐसी मछली है जो पानी में तैरती है जमीन पर चलती है और हवा में उड़ती है।

(३) फ्रांस एक ऐसा देश है जहाँ मच्छर नहीं पाये जाते हैं।

(४) विश्व में हवाई द्वीप एक ऐसी जगह है जहाँ सर्प नहीं पाये जाते हैं।

(५) आफ्रीका में मेण्ड्रस नामक एक ऐसा पौधा है जिसकी शक्ल मनुष्य से मिलती जुलती है इसे उखाड़ने पर इसमें से बच्चे के रोने की सी आवाज आती है।

(६) बागों में पाये जाने वाले घोघे के १५,००० दांत होते हैं। जो ३५ पंक्तियों में व्यवस्थित होते हैं।

(७) लोबस्टार (झिंगा मछली) के छः विशिष्ट प्रकार के जबड़े होते है पर उसके दाँत उसके पेट में मौजूद होते हैं।

(८) भेड़िये का मुखिया जब तन कर खड़ा हो जाता है तो अन्य सभी भेड़िये कान नीचे करके दुम दबाकर खडे हो जाते हैं।

(९) केले में फूल तो लगते हैं परन्तु बीज नहीं लगते।

(१०) कंगारू को मनुष्य की गन्ध लगभग चार मील दूर से मिल जाती है।

(११) गरूड़ एक ऐसा पक्षी है जो आकार में बड़ा होते हुये भी २०० मील प्रति घण्टे की गति से उड़ता है।

(१२) सबसे मोटा चमड़ा घोड़े का होता है।

(१३) कछुआ एक ऐसा जीव है जो सबसे अधिक जीता है।

(१४) मनुष्य प्रतिदिन २३२४० श्वांस लेता है।

(१) सऊदी अरब में राष्ट्रीय शोक के दिन भी झण्डा नहीं झुकता।

(२) ट्रिनीडाड में अलकतरे की झील है।

(३) सहारा रेगिस्तान के लोग बालू से नहाते हैं।

(४) पपुआ न्यूगिनी नामक देश में नरभक्षी मनुष्य रहते हैं।

(५) सोवियत संघ में बच्चा पैदा होने पर इनाम दिया जाता है।

(६) कुवैत में शादी के लिये ऋण दिया जाता है।

(७) हाथी को हर वस्तु दुगुनी बड़ी दिखाई पड़ती है।

(८) दरियायी घोड़े के शरीर से गुलाबी पसीना निकलता है।

(९) भालू पैदा होने के बाद दो महीने तक सोता है।

(१०) कंगारू पैदा होने के समय एक इंच का होता है।

× × ×

(१) पृथ्वी की पपड़ी में यूरेनियम की मात्रा १००००००००००००००० टन है

(२) मुर्गे को रात में दिखाई नहीं देता है।

(३) असम में पक्षी भी हत्या करते हैं।

(४) हिरन नाक एवं कान दोनों से सांस लेता है।

(५) पक्षियों में हमिंग बर्ड सबसे छोटा पक्षी हैं।

(६) सर्वप्रथम पुर्केञ्जे ने जीबद्रव्य के बारे में बताया।

(७) 'जेड जेनसन्स' सूक्ष्मदर्शी के अविष्कारक थे।

(८) 'राबर्ड मेयर' ने प्रकाश संश्लेषण के अविष्कार का स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया।

(९) जीवाणुओं की खोज 'ल्यूवेनहाक' ने की थी।

(१०) आधुनिक वनस्पति का वर्गीकरण 'ओस्वाल्ड टिप्पो' ने किया।

(११) सर्वप्रथम रक्तदान स्ट्रीफन हेल्स ने नापा था।

(१२) महान दार्शनिक सुकरात को बिना कष्ट की मृत्यु के लिये हेमलोक नामक जहरीले पौधे का प्रयोग हुआ था।

(१३) सर्वप्रथम 'बानषिश' नामक वैज्ञानिक ने मधुमक्खियों की भाषा का पता लगाया।

(१४) ग्रहों पर समय देखने के लिये कमानी घड़ी का प्रयोग करते हैं।

(१५) कुरान शरीफ में कुल ७७.९३४ शब्द है।

(१६) इस समय सम्पूर्ण विश्व में ४०० लिपियाँ तथा २४१६ बोलियाँ प्रचलित है

(१७) ध्रुव तारे से आने वाले प्रकाश को हम लोगों तक पहुँचने में २५० वर्ष का समय लग जाता है।

(१८) आकाश में मुख्य-२ २१ तारे है लुब्धक तारा सबसे चमकीला है।

(१९) भू मध्य रेखा की लम्बाई ४००७५० कि. मी. है।

(२०) सूर्य का आयतन हमारी पृथ्वी के आयतन से लगभग १३ लाख गुना है।

(२१) फिनलैण्ड झीलों का देश कहलाता है।

(२२) विहार का शोक कोसी नदी को प्राप्त है।

(२३) सर्व प्रथम ट्रैक्टर सन् १९०० में होल्ट द्वारा बना था।

(२४) भारत में लगभग ७२०० रेलवे स्टेशन हैं।

मौन आदमी : बोलती लाश

– आशोष कुमार सिंह 'चक्र'

(आज के समाज में युवा पीढ़ी की मानसिकता को विकृत करने और उन्ह नशीली दवाओं के सेवन की लत डालने का षडयंत्र अमानुषिक स्तर पर चल रहा है। इस व्यंग्य–रचना में इसी ओर इंगित किया गया है।) –सम्पादक

शहर से बाहर,
नीरव रात्रि,
स्तब्ध खण्डहर।
चार कन्धे अर्थी लिये,
बढ़ते कदम,
मौन धारण किये।
अचानक ! यह कैसी चीख ?
लाश बोल बठी ?
जिन्दा होकर डोल उठी !
···रस्सियों से बँधा–
एक कुरूप विकृत चेहरा।
दर्दनाक चीखों का–
बढ़ता सिलसिला।
किन्तु, अप्रभावित साये
बढ़ते रहे अनवरत,
और वह असहाय
कराहता रहा
···पुकारता रहा।
"ठहरो ! इतना क्रूर,
इतना जघन्य !
एक ज़िन्दा व्यक्ति को
कर दिया दफन !
जानते नहीं ?
यह सरासर कत्ल है।
इससे विभत्स नहीं कोई
अपराध में नस्ल है।"

"मत रोको हमें"
चारों एकाएक बोल उठे,
"जिन्दा मत कहो इसे,
लाश से भी बदतर यह दीन।
मर तो तभी गया था,
जब चखी थी हेरोइन।
तब से यह सड़ता रहा।
ब्राउन-सुगर,
स्मैक पर पलता रहा।
दफना देने दो इसे,
बना देगा ज़िन्दा लाश यह
न जाने और किसे–किसे ?"
बढ़ गये वे फिर,
बिना ठिठके,
कब्रिस्तान की ओर
घुप्प अँधेरे में–
धुँधलते साये,।
कम होता गया,
उस लाश का शोर।
शायद असह्य वेदना–
शब्द नहीं पा रही थी।
किन्तु, उधर–
कब्रिस्तान से
कोई आवाज आ रही थी।
परीक्षा में मैरिट प्राप्त

कोई बेकार युवक
आज हो रहा था मुक्त
अपनी मूल्यवान डिग्रियों
और बेकार ज़िंदगी से ।
हाँ, इसी ज़िंदगी से !
जिसे तुम और मैं–
ठेल रहे,
शायद
झेल रहे ।
थके हुए, टूटे हुये
या ड्रग्स में डूबे हुए
हताश, निराश
व बदहवाश ।
धमनियों में–
सड़ता रक्त ।
हड्डियों से–
चिपकती खाल ।
यही, पूरे समाज का हाल ।
चन्द बूटों तले कुचला
सिर्फ कराहना सीखता
भीड़ में चलना सीखता
या ड्रग्स में डूबना सीखता ।
मत कहो इसे 'समाज'
मकड़ी के जाले सा घिनौना–
सब जकड़े हुए,
सब बिछुड़े हुए ।
...उधर, लौटते चार साये
किन्तु अकेले–
सर झुकाये हताश. ।
शायद, कर दिया उसे दफन ;
हाँ, भविष्य का एक और
जगदीश चन्द्र बोस' या 'रमन' ।
आज मुक्त हो गया ।
किन्तु, कितनी कब्र खोदोगे ?
यहाँ तो जिन्दा लाशों की
कौम की कौम
खड़ी,
इन्तजार कर रही है
मौत का ।
लाचार, असहाय, निरुपाय
पड़ी,
पुकार रही है
इन सायों जैसे
किसी डोम को ।
तभी, सर उठा कर देखा तो
भँवर पनप रहे थे नभ में,
निशा शिहर उठी थी,
थे दिग्–दिगन्त तिमिर–लीन,
किन्तु तूफान की–
पूर्व लालिमा
हल्की–हल्की छिटक पड़ी थी ।
नख से शिख तक काँप उठा
चले पग–चक्र दूजी छोर,
घनीभूत कुशंकायें थी
मिल न जाये कोई लाश और ।

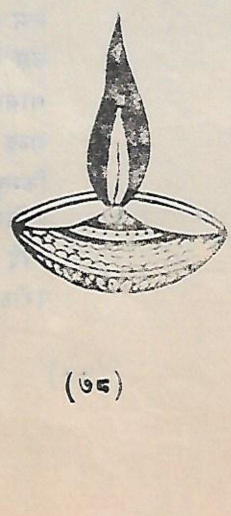

काले जादू का कमाल

– हिमांशु कटियार अष्टम 'ख'

(हमारा विश्व विचित्रताओं से भरा है। यदा-कदा ऐसे पशु पक्षियों के दर्शन होते हैं जो प्रकृति के अनेक अनेक कौतूहल अपने छोटे से शरीर में संजोये रहते हैं।) – सम्पादक

(१) आँखों से खून की पिचकारी छोड़ने वाली छिपकली उत्तरी अमेरिका तथा मैक्सिकों में एक ऐसी छिपकली पाई जाती है। जो अपनी आँखों से खून की पिचकारी छोडती है यद्यपि खून की पिचकारी छोड़ने के मौके बहुत कम आते। इस छिपकली को 'होर्न्ड टोड' अथवा 'होर्न्ड लिजार्ड' कहते हैं।

इस विचित्र बात की व्याख्या करने के लिए कई सिद्धांत दिये गये हैं। यह देखा गया है कि आवश्यकता पड़ने पर यह छिपकली अपने सिर का रक्त दाब बड़ा लेती है। जिससे इसकी सूक्ष्य कोशिकायें फट जाती है। और खून की बूदें फुहार के रूप में कई इंच तक जाती हैं। इसके द्वारा छोड़ी गई खून की फुहारे सामने खड़े उसके शत्रु पर उसकी आँखों में पड़ती है। जिससे उसके शत्रु की आँखों में जलन मचती है। और तब तक वह भाग जाती है।

होर्न्ड लिजार्ड इगुआनिडाइ परिवार की एक सदस्य है। इस तरह की छिपकली की १४ जातियाँ होती हैं। इसके सिर पर दो छुरे जैसे सींग होते हैं। इन छिपकलियों की लम्बाई कम से कम ७.५ से० मी० तथा ज्यादा से ज्यादा १२.५ से० मी० की होती हैं।

ये छिपकलियाँ आम तौर से रेगिस्तानी क्षेत्रों में रहती है। ये कीड़े तथा चीटियाँ खाती हैं। छुपने के लिए ये छिपकलियाँ तिरछी होकर कुलबुलाती हैं। जब तक ये पूरी तरह छुप न जायें। इन छिपकलियों को अक्सर पालतू बनाया जाता है। लेकिन बन्दी अवस्था में ये ज्यादा दिन जी नही पाती।

(२) क्या कोई भालू चश्मा भी लगाता है–

ऊष्ण कटिबन्धीय दक्षिणी अमेरिका के एक छोटे से भालू के ऊपर विचित्र निशान पाये जाते हैं। इस भालू के थुथनी का रंग मलाई के रंग जैसा पीला होता है। नाक से लेकर नीचे तक इसी रंग के बाल होते हैं। जिससे इनकी आकृति विचित्र सी हो जाती है। इन भालुओं की आँखों के चारो ओर इसी रंग के बालों का समूह होता है। जो कि दूर से एक चश्मे के आकार का नजर आता है।

हालाँकि इस चश्मे वाले भालू की केवल एक ही जाति "ट्रेमार्कटोस ओनट्रिस" होती है। लेकिन इन जातियों के अन्दर ही भालुओं के चेहरों पर कई प्रकार के निशान पाये जाते हैं। वैसे तो ये सभी भालू पेडों पर ही रहते हैं। परन्तु चश्मे वाला भालू पतली-पतली डालियो से हो कर डाली के अगले सिरों पर लगी कोमल पत्तियों तथा फूलों को तोड़ कर खाने में बड़ा माहिर होता है।

चश्मे वाला भालू अन्य भालुओं में सबसे छोटा होता है। वयस्क भालू के कंधे तक की लम्बाई ६४ से. मी. से ७० से. मी. तक होती है। इसकी कुल लम्बाई १२० से १४० से. मी. तक होती है। इसकी पूछ लम्बी होती है। इसकी झबरी त्वचा का रंग काला या भूरा होता है। इन भालुओं का मुख्य भोजन फूल तथा पत्तियाँ होता है।

भूख

– दीपेन्द्र गुप्त द्वादश 'ख'

(जीवन के साथ भूख का महत्व आदि काल से ही माना जाता रहा है। यह भूख का ही प्रभाव है कि मनुष्य की मानसिकता बदल जाती है। भूख बुझाने के साधन भिन्न हो सकते हैं लेकिन भूख की तीव्रता एक जैसी ही होती है।) – सम्पादक

भोर होते ही तुम सब को क्यों व्याकुल
बना देती हो ?
पशु से पक्षी तक
अमीर से गरीब तक
सब तुम्हारे कारण ही भाग-दौड़
करते हैं।
तुम ही तो हो जो अपने लिये–
सब को एक स्तर पर खड़ा कर
देती हो।
क्रियायें भिन्न होते हुये भी ध्येय एक है–
तुम से छुटकारा पाना।
तुम्हारी एक विशेषता
सराहनीय है
तुम हर स्तर के व्यक्ति के साथ
उस की बन कर रह जाती हो।
मजदूर के लिये तुम सूखी रोटी हो।
तो मालिक के लिये न जाने क्या-क्या
तुम ही तो हो इस सृष्टि को चलाने वाली
तुम मिट गयीं तो सब मिट जायेगा
जहाँ तुम सुन्दर हो
वहीं भयानक भी
जीवन की सुन्दरता,
तुमसे बनती बिगड़ती है
तुम अद्भुत हो ॥

सहारा

मुनि रूप त्रिपाठी दशम 'क'

[गद्य-गीत शैली में लिखी गई इस रचना में ऐसे मन की पीड़ा व्यक्त की गई है जो एक सहारे की खोज में है। इसमें ऐसे मन की कसक है जिसका सहारा टूट गया है।] —सम्पादकीय

बढ़ते हुये अनजान रास्ते पर,
सोचा था मैंने मिल जायेगा सहारा।
सहारा तो क्या,
मुझे एक निशाँ तक न मिला।
खोज में इसी निशाँ की,
बढ़ता हुआ मैं आगे।
चलता गया निरन्तर,
बिना सोचे समझे।
सोचता रहा मैं अन्त तक,
मिल जाये मेरा सहारा;
तो लेकर उसका साथ,
बढ़ता चलूं मैं पथ पर।
जिन्दगी की अनजान राहों पर,
कभी तो काम आता ये सहारा।
मिला ही नहीं तो सोचें क्या?
सोचकर भी करना क्या।
लेकिन इस दहकती जिन्दगी में,
आता है खयाल उसका बार-बार;
कैसे मैं रोकूँ हृदय के,
उस उफनते हुये तूफान को।
जो साथ रहा मेरे जिन्दगी भर,
बहकाता रहा मुझको;
मैं नहीं समझ पाता,
करना क्या चाहिये?
समझ भी लूं मैं अगर,
तो मैं कर भी क्या सकता हूँ;
ढूंढ़ तो नहीं सकता उसे,
देख जरूर सकता हूँ।
देखूंगा कहाँ पर उसे यहाँ,
जो है ही नहीं इस जिन्दगी में;
अपने मन के खयालों में,
लाता हूँ उसको बार-बार।
देख लेता हूँ उसे मैं वहाँ,
अपनी जिन्दगी के आइने में;
मेरे लिये जिन्दगी क्या है?
सिर्फ ईंटों-पत्थरों का ढेर है।
लेकिन कह देना सहज है जितना,
कर दिखाना मुश्किल है उतना;
नहीं समझेंगे आप इस व्यथा को,
पैठी है गहरे जो मेरे दिल में।
रहेगी अभी वर्षों तक,
उसकी याद ताजा।
टीस जरूर कम होगी,
दिल में रहेगी बेचैनी।
जाते-जाते मैं सिर्फ,
इतना कह सकता हूँ;

नहीं रहना चाहिये,
सहारे किसी के ।
आत्म निर्भर हो सके तो,
उससे अच्छा है ही क्या;
लेकिन यह है नहीं सम्भव,
सबके लिये इस विश्व में ।
इसलिये कहता हूँ मैं,
बार-बार यही ।
छीनो मत किसी से,
उसका प्राण प्रिय सहारा ।
टूट जायेगा दिल उसका,
बेकार हो जायेगी जिन्दगी ।
अन्त में मैं केवल,
इतना कह सकता हूँ बार-बार ।
यही कि,
छीनो मत मुझसे मेरा सहारा ।
मुझसे ही क्या यहाँ पर,
इस लोभी संसार में ।
कभी मत छीनो,
किसी का सहारा,
किसी का सहारा ।

मुसाफिर

सफर है बड़ा, गुनगुनाता हुआ चल ।
बढ़े पांव अपने, बढ़ाता हुआ चल ।
मिलेगा तुझे राज-पथ या स्वयं तू—
नई राह अपनी बनाता हुआ चल ।।१

जग रहे थोड़े मुसाफिर, शेष सब सोये से हैं ।
कुछ तो गाते चल रहे हैं और सब रोये से हैं ।
डूब कर कैसे भला कुछ, पा सकेंगे वे रतन—
जो कि फुटपाथी प्रशंसाओं, में ही खोये से हैं ।।२

जब बेपनाह को कहीं पनाह मिल सके ।
और डूबने वाले को कहीं बाँह मिल सके ।
रखता हूँ इसलिये मैं पांव फूँक-फूँक कर—
बहके हुये कदम हैं, कहीं राह मिल सके ।।३

भटका नहीं हूँ मित्र, तो मैं अपनी राह से ।
लाता रहा मोती निकाल कर अथाह से ।
तस्वीर मैंने रख दी जमाने के सामने—
चाहे कोई भी देखे चाहें जिस निगाह से ।।४

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

वार्षिक आख्या १९८९-९०

आज उन्नीसवीं बार पुन: इस मंच से राष्ट्रपुरुष पण्डित दीन दयाल उपाध्याय का पावन स्मरण हो रहा है। उनकी स्मृति में स्थापित इस विद्यालय ने उनके जीवनादर्शों पर चलने का सत्प्रयास करते हुये जो पहचान समाज के बीच में बनायी है, उसके मूल में पण्डित जी के अतिरिक्त पूज्य श्री गुरु जी पुण्यशीला ममतामयी "बूजी" का तप और त्याग है, जिन्होंने इस विद्यालय की भावना को मूर्तरूप देने में अत्यन्त सक्रिय भूमिका निभायी।

इस विद्यालय के संस्थापकों ने उस राष्ट्रपुरुष के निधन को एक दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना मात्र न मानकर, देशद्रोहियों की सोची-समझी साजिश का परिणाम माना और इस घिनौनी मनोवृत्ति को सदा सर्वदा के लिये समाप्त करने के सकारात्मक उपाय सोचे। उनके बोझिल अन्तर्मनों की भावनायें उद्वेलित हुयीं और विचार संकल्पबद्ध। वे संकल्पवान विचार ही इस विद्यालय की पूर्वपीठिका हैं। पं० दीनयाल उपाध्याय के उदात्त विचारों के शतधा स्वरुपों को अंकुरित और पल्लवित करना ही इस विद्यालय का लक्ष्य रखा गया। परिणाम स्वरूप २३ फरवरी १९७० को परमपूज्य श्री गुरु जी के परम पावन हाथों से इसका शिलान्यास हुआ और १८ जुलाई १९७० को गुरु पूर्णिमा के दिन इसकी विधिवत कक्षायें प्रारम्भ हो गयीं।

पं० दीनदयाल जी भारत भारती और भारतीयता के मूर्तिमान स्वरूप थे। इस विद्यालय के प्रयोग और परिणाम उनकी इसी भावना की प्रतिकृति हैं। दृढ़ इच्छाशक्ति सम्पन्न आदर्शप्राण पीढ़ी शनै:-शनै: अपना अस्तित्व प्रकट करने लगी है और इसीलिये हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि यह विद्यालय ब्रिटिश दासता के काल से चली आ रही पब्लिक स्कूलों की चकाचौंध भरी भ्रामक परम्परा में एक सुस्पष्ट, गतिमान, तेजोद्दीप्त और प्रभावी उपक्रम है।

भवन :

जिस भूमि पर यह विद्यालय स्थित है वह श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल के द्वारा प्रदत्त है। महामण्डल की इस उदारता का विद्यालय चिर ऋणी रहेगा। भवन-निर्माण का पूर्ण श्रेय स्वर्गीया श्रीमती सुशीला नरेन्द्रजीत सिंह को है, जिनको हम लोग स्नेहवश "बूजी" कहा करते थे। उन्होंने इसके निर्माण का पूरा व्यय वहन करके तथा अपनी देख-रेख में ही इसको बनवाकर अपने अप्रतिम विद्या-प्रेम के साथ-साथ अगाध देश-प्रेम का भी परिचय दिया है। वस्तुत: उनके प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति उनसे सुपरिचित किसी भी व्यक्ति के लिये शब्दातीत है। आवश्यकतानुसार विद्यालय-भवन का और भी विकास हो रहा है। इण्टर कक्षाओं हेतु एक

स्वतंत्र भवन बनकर पूर्णरूपेण तैयार हो चुका है। इसकी लागत रु० 10,16,400/– आई है। इस निर्माण व्यय में कर्मचारियों के नौ आवास भी शामिल हैं। इस कार्य हेतु लगभग 1,33,000/– रुपये दान से भी प्राप्त हुये हैं। भविष्य में आचार्यों हेतु आवास आदि बन सके, इस दिशा में भी हम प्रयासरत हैं एक स्वतन्त छात्रावास का निर्माण भी प्रारम्भ हो चुका है। अभी भूतल खण्ड बनकर तैयार हुआ है, जिसमें 36 छात्रों के रहने की व्यवस्था है।

शिक्षण :

यह विद्यालय षष्ठ कक्षा के मात्र 24 छात्रों से प्रारम्भ होकर निरन्तर प्रगति करता हुआ आज पूर्ण विकसित वैज्ञानिक वर्ग में मान्यता प्राप्त विशेष कोटि का इण्टरमीडिएट विद्यालय है। प्रत्येक कक्षा में दो अनुभाग हैं और विद्यालय के 14 अनुभागों में इस समय छात्रों की संख्या 680 है। इस विद्यालय को शासन के द्वारा विशिष्ट विद्यालय के रूप में कुछ विशेषताओं के आधार पर ही मान्यता दी गयी थी, जिनमें छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान प्रमुख है।

शिक्षा विभाग के द्वारा निर्धारित विषयों के अतिरिक्त छात्रों को उनकी अभिरुचि के अनुरुप दरी बुनना, चित्रकला, छायांकन, वक्तृत्व कला, अभिनय आदि का भी प्रशिक्षण दिया जाता है। पाठ्य-विषयों का स्तर ऊँचा रखने हेतु हम सतत् प्रयासशील हैं।

वेश :

अनुशासन की दृष्टि से निर्धारित वेश में ही विद्यालय आना पड़ता है जिसमें ऋतु के साथ-साथ परिवर्तन भी होता रहता है।

आचार्य :

विद्यालय में पढ़ाने वाले आचार्यों की संख्या प्रधानाचार्य सहित इस समय 24 है। लगभग सभी प्रशिक्षित परास्नातक हैं। अवकाशप्राप्त आचार्य श्री जागेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव भी अपने ज्ञान और अनुभव से हमारे छात्रों को लाभान्वित कर रहे हैं। विद्यालय के संस्थापक प्राचार्य श्री चन्द्रपाल सिंह का निस्पृह जीवन हम सब को सतत् प्रेरणा देता रहता है। हम उनका आभार शब्दों में प्रकट नहीं कर सकते। डॉ० आर० एन० कपूर हमारे द्वादश कक्षा के छात्रों का सदैव मार्गदर्शन कर रहे हैं। हम उनके प्रति भी अत्यन्त आभारी है।

परीक्षा-परिणाम :

प्रारंभ से अब तक परीक्षा परिणाम उत्तम ही रहा है। विगत सत्र का परीक्षा परिणाम इस प्रकार रहा–

	हाईस्कूल	इण्टरमीडिएट
कुल छात्र	88	93
प्रथम श्रेणी	87	68
द्वितीय श्रेणी	01	25
ससम्मान	53	14

प्रदेश में स्थान	सातवाँ, सत्रहवाँ	
विशेष योग्यतायें	257	109

प्रतियोगी परीक्षायें :

जे० ई० ई० (आई० आई० टी०)	–	04
रुड़की	–	04
सी० ई० ई० (एम० एन० आर० ई०)	–	12
अन्य (दयालबाग आदि)	–	04

बोर्ड परीक्षा के अतरिक्त शिक्षा विभाग द्वारा संचालित एकीकृत छात्रवृत्ति परीक्षा में जिसमें 8वीं कक्षा के छात्र बैठते हैं। इस बार हमारे 64 छात्र सफल रहे। विद्या भारती द्वारा संचालित अखिल भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा में भी हमारे छात्र प्रतिवर्ष बैठते हैं तथा शत प्रतिशत सफल होते हैं। इसी प्राकर श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल द्वारा संचालित मानस-प्रवेश, मानस-किशोर व मानस-प्रवीण व अन्य स्थानों पर होने वाली वाद-विवाद भाषण प्रतियोगिता आदि में हमारे छात्र उत्कृष्ट स्थान पाकर पुरस्कृत होते रहते हैं।

राष्ट्रीय प्रतिभा खोज :

एन०सी०ई०आर०टी० के द्वारा आयोजित यह परीक्षा तीन चरणों में होती है। प्रथम राज्य स्तर पर, द्वितीय राष्ट्रीय स्तर पर तथा तृतीय साक्षात्कार। साक्षात्कार के बाद चयनित विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति उस समय तक मिलती रहती है जब तक वह अपने ही देश में अध्ययन करते हैं। इस वर्ष अपने विद्यालय के 48 छात्र राज्य स्तरीय परीक्षा में सम्मिलित हुये जिनमें से राष्ट्रीय स्तर की परीक्षा के लिये 26 छात्र चुने गये। साक्षात्कार हेतु 08 छात्रों का चयन हुआ तथा साक्षात्कार के पश्चात अंतिम रूप से तीन छात्र चि० अनुराग गुप्त (छात्रावास), चि० लोकेश पाठक तथा चि० शिशिरकांत चुने गये। इन तीनों होनहार छात्रों को बधाई।

छात्रवृत्तियाँ :

पिछले परीक्षा परिणामों के आधार पर हमारे छात्र प्रदेशीय छात्रवृत्ति 40/– प्रतिमास तथा छात्र राष्ट्रीय छात्रवृत्ति 60/– प्रतिमास पाने के अधिकारी घोषित हुये हैं। इस समय बिधालय में विभिन्न छात्र-वृत्तियाँ पाने वाले छात्रों की कुल संख्या 370 है।

सरकारी छात्रवृत्तियों के अतिरिक्त कुछ दानशील महानुभावों तथा न्यासों से भी हमारे 19 छात्रों को जिनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है, सहायता मिलती है। इनमें जय नारायण चेरिटेबिल ट्रस्ट, श्री हरि भार्गव ट्रस्ट, श्री सोमनाथ चोपड़ा, लायन्स क्लब ईस्ट कानपुर तथा श्री मोल्हू सिंह भागवान महावीर निर्माण स्मृति ट्रस्ट आदि प्रमुख हैं।

इस वर्ष से भगती निवेदिता शिक्षा संस्थान में विद्यालय के कुछ होनहार छात्रों को पुरस्कृत करने की इच्छा व्यक्त की है। इन सभी महानुभावों व संस्थाओं को साधुवाद।

शारीरिक शिक्षा :

मानसिक विकास के साथ-साथ हमारे विद्यालय में शारीरिक कार्यक्रमों की भी विशेष योजना है। सामूहिकता की भावना हेतु योगासन व समता पर हम विशेष ध्यान देते हैं। अपने विद्यालय में पर्याप्त क्रीड़ा-क्षेत्र न होने के कारण हम हाकी–फुटबाल जैसे खेलों को भली प्रकार नहीं सिखा पाते हैं, किन्तु हमने अपने सीमित साधनों में कबड्डी, खो-खो, वालीबाल, जैसे मैदानी खेल तथा टेबिल टेनिस जैसे अन्तर्कक्षीय खेलों को विकसित करने का सफल प्रयास किया है। विगत मास से राज्य क्रीड़ा संघ की ओर से वालीबाल का प्रशिक्षण शिविर भी चलाया जा रहा है। शीघ्र ही हम बास्केटबाल तथा हैण्डबाल के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करने जा रहे हैं।

एन० सी० सी० :

सुरक्षा सेवाओं में भी हमारे विद्यालय का योगदान रहे, इस दृष्टि से अपने विद्यालय में राष्ट्रीय कैडेट कोर की सीनियर तथा जूनियर इकाईयाँ सफलतापूर्वक चल रही हैं। जिनका सफल संचालन विद्याल के ही दो आचार्य कर रहे हैं।

पुस्तकालय :

विद्यालय का पुस्तकालय विकासशील है। इसमें लगभग 60,000/– रु० मूल्य की लगभग 8000 पुस्तकें हैं। विद्यालय के वाचनालय में 5 दैनिक, 5 साप्ताहिक, 3 पाक्षिक, 11 मासिक पत्र, पत्रिकायें आती हैं। मुख्य समाचार, सुभाषित, सामान्य ज्ञान की बातें श्याम पट्ट पर भी लिख दी जाती हैं।

पाठ्यक्रमेतर गतिविधियाँ :

पाठ्येत्तर क्रियाकलाप भी शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग है। अत: बच्चों में उत्तरदायित्व की भावना के विकास के लिये स्वशासित बाल भारती (कक्षा 8 तक के लिये) किशोर भारती (कक्षा नवम से द्वादश तक) तथा तरुण भारती पूर्व छात्रों के लिये गठित की गयी है। विद्यालय की संस्थायें पूर्णरूप से क्रियाशील हैं। तरुण भारती की सक्रियता भी बढ़ रही है। उनके तत्वावधान में समय–समय पर होने वाले विभिन्न कार्यक्रम जैसे वाद–विवाद, महापुरुषों की जयन्तियां उनकी प्रतिभा के विकास में सहायक होते हैं।

प्राय: प्रतिवर्ष ही हमारे बच्चे दीपावली के अवकाश में देश–दर्शन हेतु बाहर जाते हैं। जिससे न केवल उन्हें देश के भाग विशेष की कुछ व्यावहारिक जानकारी मिलती है वरन् उनके सामान्य ज्ञान में भी वृद्धि होती है। इस वर्ष कक्षाश: पृथक–पृथक न्यूनतम सात देश दर्शन दलों की योजना बनायी गयी है।

छात्रावास :

विद्यालय के ऊपरी खण्ड में तथा पीछे छात्रावास है। इसकी व्यवस्था एक मुख्य अधीक्षक तथा तीन सहायक अधीक्षक करते हैं। इस समय छात्रावासीय छात्रों की संख्या 164 है। छात्रावास अधीक्षक छात्रावास

में ही रहकर अनुशासन, स्वास्थ्य, भोजन, पढ़ाई आदि की देख–रेख करते हैं । आवासीय बच्चों में बिहार तथा उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों के छात्र हैं ।

नैतिक शिक्षा :

पाठ्य–विषयों के अतिरिक्त समय सारणी में प्रतिदिन नैतिक शिक्षा तथा सदाचार का प्रावधान है। वन्दना के पश्चात् अध्ययन प्रारंभ होने से पूर्व निर्धारित आचार्य नियमित रूप से शिष्टाचार अथवा किसी नैतिक गुणों के सम्बन्ध में चर्चा करते हैं अथवा किसी महापुरुष के जीवन पर प्रकाश डालते हैं । साथ ही रामायण, गीता अदि ग्रन्थों से चुने हुये अंश भी कण्ठस्थ कराये जाते हैं । प्रत्येक मंगलार को रामचरित मानस पर साप्ताहिक प्रवचन होता है ।

इस प्रकार हम छात्रों को आदर्श नागरिक बनाने एवं समाजोन्मुखी जीवन यापन करने की प्रेरणा देने का प्रयास कर रहे हैं । ईश्वर से अनुग्रह एवं आप से सद्‌भाव बनाये रखने की कामना है ।

विद्यालय परिवार

१– श्री ओमशङ्कर त्रिपाठी एम० ए० (हिन्दी) बी० एड्०, प्राचार्य
२– श्री प्रयाग सिंह, एम० एस सी० (गणित) बी० एड्० उपप्राचार्य
३– श्री जागेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव, अंशकालिक, प्रवर आचार्य
४– श्री प्रकाश नारायण बाजपेयी, एम० एससी० (जन्तु विज्ञान) बी० एड्०, प्रवर आचाय
५– श्री राजेश कुमार शुक्ल एम० एससी० (रसायन-विज्ञान) बी० एड्० प्रवर आचार्य
६– श्री रामतीर्थ मिश्र एम० ए० (हिन्दी) बी० एड्०, प्रवर आचार्य
७– श्री आनन्द प्रसाद वर्मा आई० जी० डी० (बाम्बे), कला आचार्य
८– श्री महेशचन्द्र श्रीवास्तव एम० एससी० (गणित) एम० ए० (समाजशास्त्र) बी० एड्०, आचार्य
९– श्री दीपक राजे बी० ए० (इतिहास) बी० एड्०, आचार्य
१०– श्री सुभाषचन्द्र शर्मा एम० ए० (भूगोल) बी० एड्०, आचार्य
११– श्री वीरेन्द्र सिंह पाण्डेय एम० ए० (समाजशास्त्र) बी० एड्०, आचार्य
१२– श्री बिहारी लाल मिश्र एम० ए० (अंग्रेजी) बी० एड्०, आचार्य
१३– श्री गणेश शंकर बाजपेयी एम० ए० (संस्कृत) बी० एड्०, शास्त्री आचार्य
१४– श्री गया प्रसाद वर्मा एम० ए० (अंग्रेजी) बी० एड्०, आचार्य
१५– श्री रमाकान्त कटियार एम० एससी० (गणित), बी० एड्०, आचार्य
१६– श्री सतीश चन्द्र गुप्त एम० ए० (प्राचीन इतिहास, राजनीतिशास्त्र) एम० एड्०, आचार्य
१७– श्री लल्लूराम चन्देल एम० एससी० (गणित) बी० एड्०, आचार्य
१८– श्री हरिनाम सिंह, एम० एस सी० (रसायन) बी० एड०, आचार्य
१९– श्री हेमन्त शुक्ल एम० एससी० (भौतिकी) आचार्य
२०– श्री महेन्द्र प्रताप दुबे, 'सुमन' एम० ए० (हिन्दी दर्शन शा०) बी० एड०, आचार्य
२१– श्री अर्जुन पाण्डेय, बी० एस सी० एम० ए० (हिन्दी) बी० एड०, शास्त्री (संस्कृत आयुर्वेद) आचार्य
२२– श्री उमेश चन्द्र तिवारी एम० एस सी० (वनस्पति विज्ञान), आचार्य
२३– श्री अरुण शुक्ल एम० एस सी० (रसायन) आचार्य
२४– श्री शशिमाल सिंह सेंगर एम० एस सी० (भौतिकी) आचार्य
२५– श्री रमेश चन्द्र अवस्थी बी० काम०, एम० ए०, साहित्य रत्न, कार्यालय अधीक्षक

२६– श्री ओंकार नाथ	कार्यालय सहायक
२७– श्री श्यामलाल	कार्यालय कर्मचारी
२८– श्री रामभजन	प्रयोगशाला सहायक
२९– श्री रामलाल	प्रयोगशाला सहायक
३०– श्री रमेशचन्द्र	स्वच्छकार

३१– श्री रमाकान्त शुक्ल एम० ए० (हिन्दी), भोजनालय-व्यवस्थापक

अस्माकं विद्यालयस्य वार्षिकोत्सवः

पं० दीन दयाल उपाध्याय जयन्ती

क्षेमेन्द्र बाजपेयी नवम 'क'

अस्माकं प्रेरणा-स्रोतुः युगद्रष्टा पं० दीनदयाल उपाध्यायस्य एकोऽधिक द्विसप्तः जन्म-दिवसे २५ तम् सितम्बरे १९८९, अस्माकं विद्यालयस्य वार्षिकोत्सवः प्रारम्भम् अभवत् । अयम् उत्सवः त्रिषु दिवसेषु सम्पन्नः भवति ।

वार्षिकोत्सवस्य प्रथमम् एव सकलाः विद्यार्थिनः, अध्यापकाः अन्ये चापि कर्मचारिणः कार्येषु व्यस्ताः आसन् । मार्जकाः सर्वेषाम् स्थानानाम् मार्जनम् अकुर्वन् ।

प्रथमः दिवसः

प्रथमे दिवसे अर्थात् २५ तम् सितम्बरे वयं सायंकाले विद्यालये उपस्थिताः अभवाम् । समारोहस्य प्रबन्धम् अति शोभनमासीत् । शीघ्रमेव उत्सवस्य कालः सञ्जातः । अस्य समारोहस्य मुख्य-अतिथिः विश्व हिन्दू परिषदोः अध्यक्षः श्री अशोक सिंघल महोदयाः आसीत् । कार्यक्रमः षट्-वादनकाले प्रारम्भम् अभवत् ।

यदा मुख्य-अतिथिः अन्येचापि गणमान्य-जनाः मंचे आगच्छन् तदा वयं सकलाः उपविष्टाः छात्राः उत्तिष्ठाम् । सर्वतः प्रथमं विद्यालयस्य परम्परानुसारं छात्राः विद्यायाः देवी सरस्वत्याः अर्चनाम् अकुर्वन् । तत्पश्चात् मुख्य अतिथिः अन्ये च गणमान्य अतिथयः पं० दीनदयाल उपाध्यायस्य चित्रे माल्यार्पणम् अकुर्वन् । मुख्य अतिथे स्वागतार्थं छात्राः पथसंचलनमपि अकुर्वन् एकविंश गुलिकाभिः ध्वनिम् अपि अकुर्वन् ।

"स्वस्थे शरीरे एव स्वस्थं मस्तिष्कं निवसति ।" इति चरितार्थं कियन्तः पृथक्-पृथक् सप्तानाम् दलानान् छात्राः योगासनानि अकुर्वन् । अस्मिन् कार्यक्रमे आमंत्रित जुगल देवी सरस्वती विद्या मंदिरस्य छात्राः अपि शारीरिक प्रदर्शनम् अकुर्वन् । तदन्तरम् अस्माकं विद्यालयस्य प्रधानाचार्यः श्री ओम शंकर त्रिपाठी महोदयाः वार्षिकं आख्यां प्रस्तुतम् अकरोत् । सः अस्मिन् सत्रे विद्यालयस्य प्रगत्याः बोधं सर्वानि अकारयत् तदुपरान्त सर्वे छात्राः "जन्मभूमि कर्मभूमि स्वर्ग से महान है ।" इत्याख्यं गीतमगायन् । तत्पश्चात् विद्यालय प्रबन्धसमितेः अध्यक्षः बैरिस्टर नरेन्द्र जीत सिंहः मुख्य अतिथेः परिचयम् अकारयत् । तदा मुख्य अतिथिः अस्मान् सम्बोधयत् । मुख्य अतिथिः अकथयत्–"अस्माकं शिक्षायाः उद्देश्यं मात्र जीविकोपार्जनं न भवेत् ।" सः अकथयत्–"अस्माकं शरीरं पञ्चतत्वैः मिलित्वा निर्मितमस्ति ।" तस्य व्याख्यानम् अतीव ओजस्वी आसीत् । सर्वे छात्राः आगन्ताः च तस्य व्याख्यानं ध्यानेन आकर्णयन् ।

तत्पश्चात् विद्यालयस्य प्रबन्ध-समितेः सचिवः श्री वीरेन्द्र जीत सिंह महोदयाः मुख्य अतिथिं प्रति आभार प्रदर्शनम् अकरोत् । अन्ते राष्ट्रगानस्योपरान्ते अद्य दिवसस्य कार्यक्रमाः समाप्ताः अभवन् ।

द्वितीयः दिवसः

द्वितीय–दिवसे सांस्कृतिक–कार्यक्रमाः

अभवन् !

कार्यक्रमाणाम् श्रृंखलायां सर्वप्रथमं संभूय अभिनय-

गीतम् अकारयम् । तत्पश्चात संस्कृत नाटिका "चित्रकूटे रामभरतसमागम:" अभवत् । अस्या: नाटिकाया: पश्चात् आंग्ल भाषाया: एकांकी, अभवत् । तत्पश्चात् "नेताजी अनोखेलाल कानपुरी" नाम एका हास्य-नाटिकाया: प्रथमस्य दृश्यस्य प्रस्तुतिमभवत् । तत्पश्चात् आंगल-भाषाया: नाटिकाया: प्रस्तुतिम् अभवत् । अस्या: नाटिकाया: पश्चात् पुन: हास्य नाटिकाया: द्वितीयं दृश्यं प्रस्तुतम् अभवत् । कार्यक्रमस्य अन्ते नाम हिन्दी नाटकस्य प्रस्तुतिमभवत् । अस्य दिवसस्य कार्यक्रमं दृष्ट्वा सर्वे प्रसन्ना: आसन् ।

तृतीय: दिवस:

अद्य वार्षिकोत्सवस्य अन्तिम दिवस: आसीत् प्रात: काले दशवादने विद्यालयस्य पुस्तकालये प्रथम वर्गस्य (षष्ठत: अष्टम) वाद-विवाद प्रतियोगिता अभवत् । अस्य वर्गस्य छात्राणाम् वाद-विवाद प्रतियोगिताया: विषय: आसीत् "कश्चित् अपि राष्ट्रस्य उन्नति: स्वभाषां बिना संभवमस्ति ।" द्वितीय-वर्गस्य (नवमत:-द्वादश) वाद-विवाद प्रतियोगिता विद्यालस्यसभागारे अभवत् । प्रतियोगिताया: विषय: आसीत्-'स्वतन्त्र-भारतस्य निर्माणस्य दिक् त्रुटिपूर्णम् अस्ति ।' विभिन्न विद्यालयायाम् छात्रा: विषयस्य पक्षे-विपक्षे वा स्वे-स्वे तर्कपूर्णान् विचारान् व्यक्ता: अकुर्वन् ।

प० दीनदयाल विद्यालय अस्मिन् प्रतियोगितायाम् प्रथमं स्थानम् अप्राप्नोत् । अस्या: प्रतियोगिताया: आयोजनं पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक शिक्षा समिति: अकरोत् ।

सायंकाले नववादनकाले कवि सम्मेलनम् अभवत् । अनेके विद्वांस:, हास्य कवय: च काव्यपाठम् अकुर्वन् एतं कार्यक्रमं रात्रौ एकवादन काले समाप्तम् अभवत् ।

इत्थम् अस्माकं विद्यालयस्य नवदश: वार्षिकोत्सव: सम्पन्न: अभवत् ।

कालिदासस्य प्रकृति-वर्णनम्

गणेश शंकर बाजपेयी (आचार्य)

कवि: लोकोत्तर प्राणी काव्य जगत्कर्तेत्युच्यते। कविस्तु स्वविलक्षण प्रतिभया शुकान्यपि वर्णनानि सारसानि करोति, तथा च व्यासने कवे: कर्म वैचित्र्यं वर्णतया व्यलेखि-यत्–

अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापति:।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते ॥

कालिदास: तु संस्कृतस्यैव न अपितु विश्वसाहित्यस्य लोकोत्तर: महाकवि: अस्ति। कालिदास: स्वरचनासु सर्वविधं काव्य वैशिष्टयं विलक्षण प्रतिभायाऽवर्णयत्। तस्य प्रकृति चित्रणमपि विश्वसाहित्येऽसाधारणमस्ति। परिवर्तिन: कवयस्तु कालिदासस्य प्रकृतिवर्णनमाश्रित्य लोके प्रसिद्धिमवाप्य यश: शरीरेणाऽमरा बभूवु:। कालिदासेन लिखिता: सप्त ग्रन्था: सन्ति-कुमार संभव-रघुवंश महाकाव्ये, ऋतुसंहार-मेघदूते द्वे खण्डकाव्ये, मालविकाग्निमित्र-विक्रमोर्वशीयाऽभिज्ञानशाकुन्तलानि च त्रीणि नाटकानि।

एषु सप्तसु अपि ग्रन्थेषु पर्याप्तं प्रकृति चित्रणं संदृश्यते। ऋतुसंहारे षण्णामृतूनां कामोद्दीपकं प्रकृति चित्रणं शृंगारं च रसानुकूलं प्राप्यते। मेघदूत नाम खण्ड काव्ये तु प्रकृते: मानवीकरण रूपमत्याश्चर्यकर सहृदयाह्लादक स्वरूप पदे-पदे संदृश्यते। विरहीयक्ष: आषाढ़मासस्य प्रथम दिवसे नूतनं मेघखण्डमेकमवलोक्यैव तस्य मानवीकरण स्वरूपं वर्णयन् प्रार्थयत् यत्–

धूम ज्योति: सलिल मरुत: सन्निपात: क्व मेघ:।
सन्देशार्था: क्व पटु किरणै: प्राणिभि: प्रापणीया: ॥

इत्यौत्सुक्याद परिगणयन्गुह्यकस्तं ययाचे।
कामार्ता हि प्रकृति कृपणा चेतना चेतनेषु ॥

यक्ष: स्वविरहेण मेघस्वरूपम् विचार्य तं प्रशंसन संदेशं नेतुमकथयत्-यत्–हे मेघ!

जातं वंशे भुवन विदिते पुष्करा वर्तकानां।
जानामि त्वां प्रकृति पुरुषं कामरूपं मघोन: ॥

तेनार्थित्वं त्वयिविधिवशाद दूरबन्धुर्गतोऽहं।
याञ्चामोधा वरमधि गुणे नाधमे लब्धकामा ॥

प्रकृते: मानवीकरण स्वरूपस्येदमुत्कृष्टमुदाहरणमस्ति इति सर्वे सानन्दं स्वीक्रियते। मेघस्योच्चवंशस्य वर्णनं कृत्वा स्वाभीष्ट मनोरथमब्रवीत् यत्–

सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियाया:।
सन्देशं मेहर धनपति क्रोध विश्लेषितस्य ॥

गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां।
वाह्योद्यानस्थित हरगिरिश्चन्द्रिका धौतहर्म्या ॥

हे मेघ! त्वमेव पीडितानां सहायकोऽसि। अत: हे जलद मम विरहिण: यक्षस्य संदेशं पत्न्या: समीपम् अलकापुरीं प्राप्य। मेघदूतस्य प्रकृति चित्रणस्य तुलनां न कोऽपि कर्तुं शक्नोति।

कालिदास: रघुवंशस्य त्रयोदशे सर्गे प्रकृति चित्रणस्य मधुरं कोमलंस्निग्धं च वर्णनमकुर्वन्–

क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्र नीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवमृविद्धा।
अन्यत्र माला सितवङ्क जानामिन्दीवरै रुत्खचितांतरेव ।।

कालिदासस्य प्रकृति चित्रणे मानवीय दुःख-सुखादीनामपि भावानां संवेदनशीलं स्वरूपं समुपलभ्यते ।

उदाहरणार्थमभिज्ञानशाकुन्तलस्यायं श्लोकः उद्घतुं शक्यते–

उद्गलित दर्भ कवला मृग्यः परित्यक्त नर्तना मयूराः ।
अपसृत पाण्डु पत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः ।।

शकुन्तलायाः पतिगृह गमनं वृत्तान्तं निशम्य मृगाः घास चर्वणं परित्यजान्, मयूराः नर्तनम् अत्यजन् पीतपत्राणि निपातयन्त्यः लताः एव प्रतीयन्ते मन्येऽहं शकुन्तलायाः विहरेण अश्रूणि अपातयन् ।

उपर्युक्त विवेचनेन एतत्स्पष्टं प्रतीयते-यत् कालिदासस्य प्रकृति वर्णनस्य तुलनां न कोऽपि कर्तुं प्रभवति । वस्तुतः कालिदासस्य कृतिषु प्रकृतेः सुकुमारतरं मनोहारि रमणीयं सहृदयाह्लादकं दर्शनीयं प्रकृति-चित्रणं कालिदासः सर्वोत्कृष्टः महाकविरस्ति इत्यत्र कोऽपि संशयलेश लवोऽपि नास्ति ।

"पुरा कवीनां गणना-प्रसङ्गे कनिष्ठिकाऽधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थकता प्रपेदे ।।"

"धर्मादर्थः प्रभवति धर्मात् प्रभवते सुखम् ।
धर्मेण लभते सर्वं धर्मसारमिदं जगत् ।।"

साम्प्रदायिकतायाः निवारणम् अत्यावश्यकम्

विश्वम्भर दयालः नवम 'क

अस्माकं देशस्य एका महती समस्या-साम्प्रदायिकता। इयम् समस्या गम्भीरा। अत्यावश्यकम् अस्याः निवारणम्।

सर्वतः प्रथमं वयम् जानीयाम्—"किमस्ति साम्प्रदायिकता ?" प्रख्यात साहित्यकारस्य कृष्णचन्द्रस्य शब्देषुसाम्प्रदायिकतायाः इदं परिभाषा उपयुक्तम्--

"सर्वेषाम् धर्माणाम् जनाः पारस्परं भ्रातरः सन्ति। अयमेव भ्रातरः यदा-कदा उमंगे आगत्य क्रीडन्ति तावत् साम्प्रदायिकता भवितुं शक्नोति।"

साम्प्रदायिकता दीमकेन सदृशः भारतं खादति वयमच् तम् दर्शकाः भूत्वा पश्यामः। अस्माकं देशस्य शासनं किमपि न करोति ? अस्याः निवारणाय आवश्यकमस्तिअक्रोधः सद्व्यवहारः च।

यावत् क्रोधः जायते तावत् मनुष्यस्य मतिः नष्टं भवति। सः क्रोधवशीभूत्वा धर्मस्यान्धानुकरणं किरन् उत्पातं करोति। स सद्व्यवहारेण इयम् समाप्तं भवितुं शक्नोति।

साम्प्रदायिकता रूपे भयंकरं विषं धर्मनिरपेक्ष-राष्ट्र-भारते विद्यमानम्। लोकतन्त्रे अस्याः उपस्थितिः शोचनीया।

वृक्षारोपणफलम्

— पंकज त्यागी अष्टम 'ख'

वृक्षारोपण से अक्षय पुण्य की प्राप्ति

यस्तु रोपयते तीरे पुण्य वृक्षान् समन्तः ।
तस्य पुण्य फलं ज्ञातुं कथितुं नैव शक्यते ॥

अन्यत्र रोपणं कृत्वा शाखिनां यत् फलं लभेत् ।
ततो जल समापे तु लक्ष कोटि गुणं भवेत् ॥

स्वयं पुष्करिणी तीरे त्वनन्तं फलमश्नुते ।

अश्वत्थरोपणं कृत्वा जलाशयसमीपतः ।
यत्फलं लभते मर्त्यो न तत्क्रमतुशतैरपि ॥

पतन्ति यानि पत्राणि जले पर्वणि पर्वणि ।
तानि पिण्डसमानीह पितृणामक्ष ययुः ! ॥

खादन्ति पतगास्तत्र फलानि कामतो ध्रुवम् ।
ब्रह्म भक्ष्यं समं तस्य पुण्यं भवति चाक्षयम् ॥

भाषानुवाद– जो जलाशय के तट पर चारों ओर पवित्र वृक्षों को लगाता है, उसके पुण्य फल का पूरा ज्ञान अथवा वर्णन नहीं किया जा सकता। अन्य स्थानों पर वृक्ष लगाने से जो फल प्राप्त होता है, उसकी अपेक्षा जल के समीप वृक्ष लगाने पर करोड़ों गुना अधिक फल होता है। अपने बनवाये हुये पोखरे के किनारे वृक्ष लगाने वाला मनुष्य अनन्त फल का भागी होता है। जलाशय के समीप पीपल का वृक्ष लगाकर मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है वह सैकड़ो यज्ञों से भी नही मिल सकता। प्रत्येक पर्व के दिन जो उसके पत्ते जल में गिरते हैं वे पिण्ड के समान होकर पितरों को अक्षय तृप्ति प्रदान करते हैं तथा उस वृक्ष पर रहने वाले पक्षी अपनी इच्छा के अनुसार जो फल खाते हैं, उसका ब्राह्मण भोजन के समान अक्षय फल होता है।

Pt. Deen Dayal Upadhyaya-aTribute

Sri J. P: Srivastava

When on the sad day of 30th January, 1948, Mahatma Gandhi passed away, Pt. Jawaher Lal Nehru, the then Prime Minister, during the course of his broadcast to the nation, observed. "The light is gone and there is darkness every where" At the sad demise of Pt. Deen Dayal Uppadhyaya, Sri Atal Behari Vajpayee too almost in a similar vein rightly bemoand; "The Nandadeep has been put out and we see no light." No doubt we are disillusioned at the agonising and sudden demise of men like Gandhiji and Pt. Deen Dayalji and feel as if we have been forced to grope in the dark. But in reality, great men pass away only physically; their words echo for ages to come. These words guide us and inspire us. The words give us a sort of divrne light. Panditji's words echo ir our hearts and give us light to guide our path.

Panditji's words came out from the depth of his heart. He said what he meant and meant what he said. In this respect, he was not at all a political man. Politics was forced upon him and when it was forced upon him he took it in the truest sportman-like spirit and tried to sublimate it. Ofcourse, his life was cut short, otherwise ha must have given new and sublime dimensions to politics. For so many years, he remained the General Secretary of the then Jana Sangh, now BJP, and was elected its President. Ignorant critics termed the Jana Sangh as a party of status quo, or may be they deliberately did so to malign the party and its leaders. But Deen Dayalji often said, "Don't be afrald of change. Face it boldly and try to shape it in such a way that it may become a blessing for the future". I would emphatically assert that he was far more progressive than the so called progressives.

When Upadhyayaji propounded the theory of Integral Humanism, he was humble enough to submit that what ever he said was nothing new and that he was indebled to the seers, saints and sages of India for what he propounded, although to many of us he himself was a saint and seer. How prophetic his words were when he used to say that communism was only an incomplete philosophy and as such could never succeed. Events of the enghties have justified his prophecy. Though a critic of communsirm, he always appreciated its emphasis on equality, but with reservations of course. Prejudice and ill will were foreign to his nature.

Deen Dayalji was a thinker, a writer, a joutnalist, an organiser, a leader all and much more blended into one. Unfortunately Panditji's life and his ideas have not yet rsceived the propagation they deserve for the good ef the country. The more the country comes to know of him, the better it will be for its own good.

When Deen Dayalji paid a visir to America an admirer of his gave him a cheque worth ten thousand dollars. Panditji did not even look into the amount and kept it safely in his briefcase. The money had been given to him so that he might buy certain thinge of his choice. But the cheque remanied with him as it was. When he returned home to India, he gave it away as Guru Dakshina in the Guru-puja festiral of the RSS, The anecdote shows the mould in which Panditji's life was shaped He was a 'veetaragi' having no attachment for worldly possessions. He knew that money has a corrupting influence both on individuals and institutions. So it is that he never hankered after money for the Jana Saugh. He wanted only just what was enough for furthering the cause of the Party. To me it appears to be spiritualisation of politics.

Panditji was a man of letters and yet he was humble to the extreme, he was a versatile gonius and yet he made absolulely no show of his being a genius; He was a leader and yet he was unimposing to the extreme. For him no one was so unimportant as to be neglected and no one so important as to draw his attention more than due. He was a man of very high thinking and it is no exaggeration when I say that he was simplicity incarnate. Inspite of his extremely busy schedule of work in connection with the Jana Sangh and the RSS, he used to wash his clothes with his own hands and even sew them up when torn. He paid scant attention to his dress which to him was an index of the barber-and tailor civilisation of the west. Once he paid a visit to a town, where he had to address a public meeting. The workers had arranged for him a new dress. He had no objection to wearing the same. But he would have been in the same form of his mental and intellecttual self in his rather simple and not so clean dress as in the new one.

Anger to Panditji was something alien, but he could assert effectively, when it became necessary to assert. Once Panditji was addresaing a press confercnce here at Kanpur. I was also present in the conference A correspondent, with a view to making Panditji answerless, proudly asked him, "Panditji, you talk of Indian technology. Isn't technology universal ?" Prompt came Pandetji's reply without even a second's pause, "No, tichnical laws are universal; tecnology is regional" Such a rare presence of mind and minute understanding of things Deen Dayalji passessed.

It was our good fortune to be associated with such a personality But it was our misfortune to lose him at a time when he had not completed even fifty tow years of his life. He was an 'ajaat shatru, a man having no enemies and yet he was killed in ghastly and tragic circumstances, leaving his countrymen shocked and stunned. We remember him sorrowfully and cherish his memory most devoutly.

Unto God

I know not how thou singest, my master!
I ever listen in silent amazement.
The light of thy music illumines the world.
The life-breath of thy music runs from sky to sky.
The holy stream of thy music breaks
through all stony obstacles and rushes on.
My heart longs to join in thy song,
but vainly struggles for a voice. I would speak,
but speech brcaks not into song,
and I cry out baffled.
Ah ! thou hast my heart captive.
in the endless meshes of thy music, my, master.'

(From Gitanjali)

मैं नहीं जानता स्वामिन् ! तुम गीत किस तरह गाते,
हरदम सुन मौन जिन्हे नित, हैं प्राण चकित रह जाते।
कर देता है इस जग को संगीत प्रकाशित तेरा–
जीवन-संगीत तुम्हारे, दो क्षितिज-छोर छू जाते।
कर भग्न शिला-बाधायें, ये गीत तुम्हारे पावन
निर्झर से उनसे झरते बस, आगे बढ़ते जाते।
मेरे उर की आकांक्षा स्वर मिला चाहती गाना,
असहाय यत्न रह जाते, स्वर फूट न लेंकिन पाते।
चाहता जभी कुछ कहना, वाणी से गीत न झरते,
अकुलाहट लिये हुये बस, ये प्राण चीख रह जाते।
अगणित संगीत-मयी इन जंजीरों से बस अपनी
मेरे मन के हे स्वामिन् ! किसलिए बाँध तुम जाते।

'निश्छल'

"Laugh and the World Laughs withYou; Weep and You Weep Alone"

–Saurabh Chaturvedi XII A

Laughter is infectious; tears are not. A cheerful face puts every one in good spirits. Comedy has been defined as the laughter of the mind. Laughter suggests that man can rise above passing misfortunes, faults and failings. There is a liberating quality in laugbter. Certain ineidents, situations, some peculiarities of appearance and character quicken our sense of humour and relieve us of the sensc of the humdrum and the commonplacc. It is a very welcome feeling.

There is something of the common touch in laughter. And there is something private and personal in tears. Sorrow is self-contained. Joy and laughter have the touch of nature which makes the whole word kin. A sad man's company is usually avoided. A glad man's eompany is sought by all. A sad or tragic ending ie not permitted in Sanskrit drama. In Shakespeare's tragedies there is something to show that though much is lost, all is not lost

The popularity of the novels of Prem chand, though they are full of sad and painful incidents, lies in the fact that they have a happy ending. Laughter makes life tolerable and bearable. Laughter proves the triumph and the victory of the human spirit. Without a festive spirit life would become unbearable.

Laughter lends sunshine and colour to the dullness and drabness of life. Even when the situation is one of sorrow, an actor like Charlie Chaplin can arouse our comic spirit. Therein lies the secrct of their universal appeal. Laughter means that we can look at life in a spirit of play. Sometimes nonsense and mere foolings do good to the heart. A humorist is divinely gifted. It has been said that every

humarist in reality is a sad person. Why then does he arouse in us such laughter ? This is so, because the humorist has risen above his personal sorrow. His sense of humour has liberated him from sorrow. The humorist can laugh at his own sorrow. He laughs and the whole world laughs with him.

But laughter and tears are not so far removed from each other as we usually imagine. Shakespeare's comedies narrowly escape being tragedies. A humorist makes even tears shine with the seven colours of the rainbow. The human spirit refuses to be damped or daunted by sorrow and misfortune. When sorrow is felt to have a meaning and a message, it becomes greater than mere sorrow. It results in what has been called the higher seriousness.

But the tears of most people do not suggest that depth and meaning which makes sorrow great There is something narrowing and forbidding in the tears of most people. It is for such people that it has been said, "Weep and weep alone." The tears and sorrow of such characters as Rama, Shakuntala, Nal and Damayarti or of tragic figures of Shakespeare's dramas have a dignity, a higher plane and a depth of meaning and universality, so that in their tears we see the tragedy and the tears of all humanity. It is not a man or a woman whose tears we share but the tears of all mankind. When they weep they do not weep alone.

Man is the Architect of his own Fate

—**Yogesh Chandra (XII-B)**

The heights, by great men reached and kept
Were not attained by sudden flights
But they while their companions slept,
Were toiling upward in the night.

Genius said Carlyle, is the capacity to take infinite pains. Another man put it mathematically and said it is ten percent inspiration and ninety percent perspiration. We have only to make up our minds and if we do so the mountain of difficulties disappears like fog before the rising sun.

Those who never get success in life are very apt to assume a tone of injured innocense and conclude too early that cruel fate was responsible fortheir failure, or that a set of circumstances deprived them of their objectives. They lament with Shakespeare.

"It is the stars : the stars above us
that govern our condition"

But one who does not believe in stars quote Shakespeare in this way.

"The fault, dear Brutus is not in our stars.
But in ourselves that we are underlings."

Many a man has risen to dizzy heights by firm determination and sheer hard work Dr. Johnson who came up to London with a single guinea in his pocket and who in so many of his letters has written to his freinds signed himself as Johnson, the Dinnerless ; by dint of constant and relentless efforts became the greatest writer of his day and sat with the king at dinner. His testimony is worth quoting:

"All the complaints which are made of the world are unujust : I never knew a man of merit and diligence neglected. it was by his own fault that he failed of success,"

Napoleon was an ordinary soldier at Corsica but he had a firm determination, a vision and an ambition and went on plodding. He always gave advice to his generals to rely for victory more on dry gun powder than on prayers to the Almighty And it was this Napoleon who built up an empire in his lifetime all of which he personally planned and directed.

When Mahmud of Gazhni attacked the famous Som Nath temple, the priests instead of preparing for resistance started praying to the Almighty for assistance which never came because God helps these who help themselves.

Newton, the great mathematacian, worked day and night in the purchuit of his subject. There are several anecdot s about his forgetting his meals when working on problems and he summed up his career in the famous words, "If I have done the public any service, it is due to nothing but industry and patient thoughts." The goddess of fortune smiles only on those whose hands have been coarsened with labour and not on those wno always lift their soft hands in prayer and do nothing else.

Whither India ?

-CHANDRA PAL SINGH
Ex-Principal

There was a time when our politics was dominated by moral and intellectual giants, real statesmen, who were far-sighted enough to care for their country's interests rather than those of their party or individual selves. Men like Mahatma Gandhi, Sardar Patel, Jawaharlal Nehru, Rajendra Prasad, Rajgopalachari and Bhim Rao Ambedkar, while deciding on a course of action always took a long range view and fully thought of its impact on the future generations. They even accommodated the views of those who differed from them. But to day the politicians who rule the roast are intellectual dwarfs and moral bankrupts, who can't look beyond their personal or party interests.

Just after independence the first major step teken by Sardar Patel was to restore the historic Somnath Temple to its old pristine glory, for in his view the sack of Somnath by Mahmood of Ghazni was an act of national humiliation and the restoration of the temple was the prime national need. He did not treat it as a communal issue,but a purely national one. This step was taken with the concurrence of the central cabinet, which included Jawaharlal Nehru and Maulana Azad, President Rajendra Prasad formally inaugurated the newly-built temple. Had Patel lived a few years longer, there would have been no objection even by the so-called seculatists to the restoration of the Ram Janma Bhoomi, Krishna Janma Bhoomi and Kashi Vishwanath temples on their original sites, for the demolition of these temples was an act of vandalism, perpetrated by the foreign invaders with a view to humiliating us and so the restoration of these temples to their former glory was essential to inspire the rejuvinated nation with self-respect.

The Hindus are the most tolerant people on the earth and the most secular in their outlook. But tolerance can't be allowed to be stretched to the limit of suffering national dishonour. Hinduism, as a matter of fact, is not a religious cult. It is a way of life a culture, evolved through thousands of years in this holy land of ours, called Hindustan or Bharat. We don't want to desecrate the secred places of others, but at the same time we can't tolerate the desecration of our holy places, be they Sanatan Dharma temples, Jain places of worship, Bauddha maths or Sikh gurdwaras. Let the super-strutures built by the foreign rulers over the birth places of Ram and Krishna and the original site of Keshi Vishwanath, be taken away by those, who treat then as sacrosanct and instal them at other suitable places. This has been made possible by lhe latest engineering technique. We have no objection to it.

The Congress (I) felt no qualms of conscience, while co-operating with the Muslim League in ministry-making in Kerala. In the famous Shahbano case it didn't hesitate to bring about a change in the

constitution to placate the Muslim fundamentalists. It made unabashedly boosting the Christian faith a plank of its election propaganda in Mizoram. And yet it claims to be secular and denounces BJP as a communal party. The communists have always been opportunists. In the last world war they supported the war effort of the British, denounced Subhash Bose as a fascist, favoured partition of the country, refused to denounce the Chinese as aggressors in 1962 and co-operated with the Muslim League in Kerala. With what face do they call the BJP communalists and not worth having truck with? Really speaking, no nationalist party should have any truck with these fellows. Their character has always been dubious and anti-national. Communism is already dying in their fatherland, Russia. One wonders why these people are still sticking to it.

After the partition of the country it was the duty of the ruling Congress to take all possible steps to bring the Muslims, who had refused to migrate to Pakistan and chosen to stay back in India, into the main national stream. This could have been easily done by making primary education, based on the age-old cultural ideals of India, compulsory for all children upto the age of fourteen years as provided in the constitution and making a common civil code for all sections of the people, which too the constitution recommends. The congress, on the other hand, kept the embers of communalism and regionalism burning by retaining special educational rights given to the minorities under section 29 and 30 of the constitution and giving a special status to Kashmir under section 370, only because tne majority of its population happens to be Muslim.

Unfortunately the National Front government too like its predecessor is obesessed with pseudo-secularism and is bent upon placating the Muslim majority. It has not the guts to call a spade a spede or to face a grim stutation bravely. Its abject surrender to the Kashmir terrorists in the case of Rubaiyas obduction is a proof thereof. It too doennt treat the Ram Janma Bhoomi issue as a national one and is afraid of the Muslim fundamentalists.

We are really grateful to Dr. Sampurnanand, who both as Educational Minister and Chief Minister of Uttar Pradesh did yeoman's service to the national cause by making Hindi a compulsory subjet in the school curriculam right up to the Intermediate standard. It was a states manlike step, which did much to bring the Muslims of U. P. into the main stream. As a result of this measure a whole generation of Muslim youths has come in to being, who speak and write Hindi as their mother tongue fluently without being coversant with the Persian script in which Urpu is usually written. Has not Shri N. D. Tiwari spoilt all the good work that goes to the credit of Dr. Sampurnanand by making Urdu the second official language of U. P.? He has thus set back the hands of the clock of progress. His eye was set only on the forth coming election and not on national consolidation. In order to appease the Muslim voters he merely injected virus into our body politic. The Badaun riot on Mahatma Gandhi's birth day was a patent proof thereof. Why did Islamia College boys attack Shri Krishna College? Only because the boys of the latter had gone a day earlier in a peaceful procession to submit a memorandum to the D. M. against

the imposition of Urdu as the second official language of U. P.

On the one hand, Urdu is said to be a language of both Hindus and Muslims and on the other the then ruling party treated it as the language of the Muslims alone, for it used it to win Muslim votes. Truly speaking, Urdu is not an independent language. It's only Hindi written in the Persian script. At the most, it's only a Persianisd and Arabicised style of Hindi. There is practically no difference between spoken Hindi and spoken Urdu. The dialogues of Hindi films are full of Persian and Arabic words like mujarim, quatil, intizar, saza etc. The only difference between Hindi and Urdu is that of the script. If Urdu is written in Devnagari script, which is the script of Hindi, Marathi, Nepali and Sanscrit and consequently the most popular script used in India, the great poets and writers of Urdu like Ghalib, Jigar and Azad will acquire a greater publicity and Urdu a wider appreciation. In recent years severel collections of Urdu poets have appeared in Devnagari script with the result that mushairas and recitations of ghazals and quawwalis have become quite popular among Hindi lovers. This natural process of national consolidation and linguistic development is being retarded by the short-sighted politicians, whose eyes are rivetted only on the vote-banks of a particular minority and their own personal interests.

Urdu can thrive in India only as a style of Hindi. Written in the Persian script, it becomes outlandish and artificial. The so called secularists forget that it was the Urdu wallahs of U. P. and Bihar who agitated for Pakistan and migrated to it. There too they are not respected, for Urdu is not the language of any region of Pakistan. So they have to keep a separate identity of theirs as Muhajrins. Moreover, it was Urdu which when imposed on East Pakistan led to the emergence of Bangladesh. Thus Urdu, when imposed leads to division of the land. Are the secularists intent on further division of the country by foisting Urdu on us with the help of their brute majority ? Undoubtedly it will be a step fraught with disastrous consequences.

It is an irony of fate that not only the Congress (I) but other political parties too, except BJP, don't understand the real divisive character of Urdu. After all they have all been brought up in the congress culture. Most of them have come out of the congress and naturally subscribe to almost the same ideology. They too in order to enlist the support of the Muslim votors dare not oppose Urdu.

As a matter of fact, after the partition of the country, the first priority for our rulers should have been to instil a strong feeling of nationalism in the majority community and to absorb those elements of the defiant Muslim community, which had chosen to stay back in India. This could be done only through an educational system framed in consonance with the ethos and cultural ideals of this ancient land. Instead of imparting man-making education to our children we gave them job-procuring instruction. In imitation of the west we made our young men materialistic hedonists instead of lovers of virtue and men of character. The all round degradation and corruption that we witness to day, is the direct result of this policy. We adopted a constitution which was merely an amalgam of the constituents

of the constitutions of some prominent western countries. Even some of the basic features thereof we have not been able to implement so far. For example we have failed to provide for free and compulsary primary education to our children, which is so essential for the success of democracy. Similarly we have not been able to introduce a common civil code for all our citizens, irrespective of their religions, which is necessary for national integration. We have made Hindi our national language and yet after 43 years we are still giving prime importance to English. Apart from her cultural and religious aspects, the cow plays an important role in our economy and as such a ban on cow slaughter is one of the directive principles of our constitution and yet we have not been able to implement it. We wonder where our mentors are leading us.

My Opinion About Life

Kanchan Srivastava (XI B)

Life for me is like a challenge. Which has to be accepted by all living beings. It is a challenge which has a difficult procedure. It's like a road which is complicated at different Places. One should try to deal with these complications with full courage.

We can also call life a competition in which each and every soul has to take part. Some do fail in this competition but it doesn't mean that one should stop trying further. He or she should try harder to achieve success.

Life has two main objectives. One is sorrow and the other is happiness. These two phases are sure to exist in one's life. In other words we can say that life is like a balance having happiness in one pan aud sorrow in the other.

A state of equilibrium is not or rarely maintained in the balance. At different modes of life one of the two pans become heavier. This means that at certain times of our lives we have greater happiness while others have greater sorrow.

It is also accepted that life is not a bed of roses. It is sure that one has to face some difficulties in life. In such conditions one should never lose confidence and must try harder to find some remedy to that difficulty. Sometimes even over-confidence also has harmful results. So one must try to face these difficulties with full courage and without any hesitation. These problems and difficulties are like obstructions in life and one should not evade them, but must try to remove them.

Sometimes, we hear cases of someone committing suicide because he or she was not able to solve his or her problems. Here also we see that those who commit suicide have lost confidence and have no faith in themselves. This is not the proper solution to their problems. For me only the cowards can do such a thing.

Problems are uncountable, but it does not mean that we should surrender overselves before them.

In our life, sometimes, we find ourselves in a dilemma. At these moments we can make the correct choice with the help of our proper judgement. We can also consult others in whom we have faith, for a suitable advice and we will see that our problems are solved more satisfactorily.

One should always take advantage of different opportunities which life offers.

Life is divided in to several categories. One is the busy life of a businessman. Second is ascetic life. It is seen that no one gives much attention to this type of life. We can also call it a simple life. It is usually seen that a man who leads an ascetic life always achieves his goal easily, whereas, a man who leads a busy life has to seek different ways which could be wrong in the long run.

Simple life does not mean to leave everything uncared for. Other wise we would live a selfish life.

In my opinion one should live a simple life so that he or she could leave his or her marks on the minds of the people after he or she passes away. A man can live a peaceful and sincere life when he or she obeys the objectives and rules of life. One should not boast against fate as we cannot deny the existence of 'Destiny' which governs life.

There are other things also in life which should be accepted by one, such as marriage, love etc. and at such times one should remain faithful. I am very sure that if one follows the correct rules in life then only he or she can live a better life. We must aim at living in such manner as to leave footprints on the sands of time.

The Vedas –the Oldest Scriptures of the World

—Vishambhar Dayal, IX A

The Vedas, the main religious scriptures of the Hindus, are the oldest books in the library of mankind. They are four in number, i.e. Rig-Veda, Yajur-Veda, Som-Veda and Atharva-Veda.

The whole of the other religious literature of Hindus is only an elaboration or explanation of these Vedas.

Not ideas or Commandments :-

The Vedas are not ideas or commandments of one man in the name of God; but are the result of researches in the spiritual field through meditation by many learned saints or "Rishis".

So, like scientific knowledge, the knowledge of the Vedas is based on reasoning and logic There is no place for blind faith and superstition in the Vedas The knowledge of the Vedas is not limited to the ways of worship; but it deals with all the problems of human beings.

Main Fundamentals :-

There is not a single problem of man which is not fully answered in Vedas. The knowledge necessary for physical, psychological, mental, spiritual, and social development of the human race is found there.

The main fundamentals or laws of modern science are related in the Vedas.

The teachings of the Vedas are not for a particular race, place or time. They are beneficial for all, and for all time. There is no place for caste, creed and race in the Vedas.

Two Kinds of People :-

According to the Vedas there are only Two kinds of people: good or bad. Goodness or badness depends only on the good and bad of a man and not on his beliefs.

Broadly speaking:

Rig Veda deals with knowledge-of God,
the soul and matter,

Yajur Veda deals with knowledge of action.

Sam Veda deals with knowledge of worship.

and,

Atharva Veda with the knowledge of food, medicine, etc.

Poetry and Its Function

G. P. Verma, M. A. (Eng.)

Poetry may be called the best of all the compositions of literature. To define poetry is not altogether a simple matter. All the definitions given by authors differ in meaning but all of them have Something to do with the sense of poetry. According to Carlyle, 'Poetry is nothing but musical thought', Shelly calls it 'The expression of imagination' Coleridge holds that Poetry ;s the composition of best words in the best order, its immediate object is to yield pleasure and not only truth. Mathew Arnold explains tnat poetry is criticism of life and the perfect from of utterance that human words can reach. Milton's poetry reflects the loafty and immortal thoughts while other poets like Bridges writes it for sheer joy or for artistic pleasure.

Despite differences all poetry expresses some one's feelings and emotions. Poets are sensitive enough to express these feelings in the form of verse. We can feel about a thing but we can not express our feelings in artistic way. Profound thoughts and creative imagination give rise to poetry. Maharishi Valmiki felt the pain caused by the cry of the bird cruelly deprived of her mate and his pity and grief found expression in form great epic.

Thus a true poet is one who makes the readers feel what he feels himself. For example when we read the lines of Shelly we are Sunk into the sea of same sorrow wherein the poet seems to have washed his wounds. He says.

'I fall upon the thorns of life I bleed' Again he Says.

"Alas ! I have nor hope nor health
Nor peace within nor calm around

Nor fame, nor, power, nor love, nor leisure
Others I see whom these surround
Smiling they live and call life pleasure
To me that cup has been dealt in another measure",

These beautiful lines not only reveal the dejection of the poet's heart but also share the disappointment of a common reader. The reads finds his own feelings running with the lines of poetry. Poetry is an art and the poet is an artist with extra ordinary imaginative power as well as devine gift of expression. He is like a diver who dives

into the depth of heart and brings forth the best lying hidden. Like a Scientist he presents the photographic expression of the inside of heart and mind of a person.

In the words of W. H. Hudson "The world is great poets have always recognised that poetry is made of out of life. belongs to life. exists for life". It is the function of poetry to make life ideal, pleasant and meaningful. Real poetry is the inner voice of entire mankind. "It is" says carlyle, "not only a criticism of life, it is very truth of life, very essence of man's noble quest for reachfng the kingdom of Eternal Bliss". In the words of Shakespsare the creative function of poetry is again expressed in the following lines;

"The poet's eye in a fine frenzy rolling
Doth glance from heaven to earth and from earth to heaven."

The poet can not creat out of nothing. He does not only reproduce what he sees around him but also imagins of an ideal life moreover he innovates new principles for the good of human being. Thus his responsibility is greater than that of Scientist. The poet reveals the spritual meaning of life. He is conscious of the ends of physical world. Inspered by the noble aim of poetry Bridge cried out with great wonder that "Poetry is God and God is poetry." John said, "It is not the shade of mystery, it is the light of Eternity".

The matter of poetic creation is supplied by the crude experience of life never the less his creation is not confined to the fact. The poet transcends the limit of time, place and reality. He has to idealise the life and present its reality as well. He does not teach us to escape from the weariness, the fever and fect of life. On the contrary it incourages man to face the reality and struggle for survival. The two words of reality and imagination are equally balanced on the wings of poet's imagination.

To conclude we can say that poetry is the Source of pleasure, inspiration and wisdom. Science teaches us how to fly in the space, how to sail across the sea but poetry teaches us how to live on the earth.

Flattery is a Key to Success

Ashutosh Singh
12th 'B'

Till yesterday it was believed that hard work alone holds the key to success. Even what Long-fellow said :

"The heights by greatmen reached and kept.
Were not attained by sudden flight.
But they, while their companions slept.
Were toiling upwards in the night."

May be true of the great men of Long-fellow's time. But the great men of today are those. who are successful flatteres. The dictum of hard work is no longer regarded as an asset of life. Instead, flattery has be-become a valuable key to success.

What is coaxing or flattery ? The desire to be noticed and admired is a basic human weakness. If the genrine appreciation is exaggerated, it soon changes into flattery. The sole aim of flattery is to achieve success without any labour. The people who are efficient in this art take advantage of the basic human weakness to succumb to flattery and achieve what they normally do not deserve.

The practice of flattery has been greatly refined now-a-days It has acquired several new names. Unsophisticated people in India call it "Maska Polish". The educated people refer to it as the art of winning friends and influencing people. The Government and business concerns describe it as public relationship.

The importance of flattery in each and every sphere of life has made it a universal art. In the field of educatlon too, it holds water. To be in the teachers good books is considered to be much more important than burn the mid night oil. Further, let us speak of a petty shop-keeper.

He addressess a constable as 'Inspector Sahib' and if a teacher passes by, he/she calls her/him 'Principal Sahib'. If he is contradicted, he would add in a smooth tone that he would soon hold a higher post, if he didn't just then. Thus his tongue has won favour of many hearts, and people flock to him as flies swarm leaving aside the other shops in the market.

In the sphere of literature if some one wants to come up as a shining writer one has to flatter the editor as much as one can. You can be dead sure that the article is bound to be published along with your photograph, althogh the article of a better writer is not published.

An office employee who is a master of the art of flattery, turns up at his boss's house.

If asked about the nature of his visit, he would humbly say that he had just come to pay a visit to him. Once in a while, he carries fruits or sweets along with him saying that his wife has sent them for the children. Lo ! he gets a double promotion and the records of his casual leave too disappear.

Flattery is actually a very difficult art to practise. The dividing line between genuine praise and flattery is very thin, Only an expert artist (of flattery) can cross it successfully. Falling a prey to flattery is a basic human weakness and most men fall victim to it. According to swift :

"It's an old maxim in the schools,
That flattery is the food of the fools,
Yet every now and then, you men of wit.
Will condescend to take a bit."

LIQUID CRYSTALS

(The 4th state of matter)

Rishendra Maurya
XI 'B'

The liquid crystals is the intermediate state of water between solid and isotropic liquids. Basically there are two types of liquid crystals—

(A) Thermotropic liquid crystals.

(B) Lytropic liquid crystals.

(A) Thermotropic liquid crystals—

The term "thermotropic" arise because transitions involving these mesophases are most naturally effected by changing temperatures. Material showing thermotropic liquid crystals, phases are usually organic substances with molecular structure typified by those of cholesteryl novanoate and N—(p-methoxybenzylidine) —p'—n—butylaniline. In this type of liquid crystal every molecules on an equal basis in the long range ordering.

(B) Lyotropic liquid crystals—

Solution of rod-like entities in a normally isotropic solvent often form liquid crystals phases for sufficietly high solute-concentration. These anisotropic solution mesophases are called 'Lyotropic" liquid crystals. Many synthetic polypeptides are form lyotropic mesophases when dissolved in an appropriate solvent (usually water) in suitable concentration. The conformation of most of these materials in quite temperature sensitive.

Classification according to molecular order

The distinction between thermotropic and lyotropic liquid crystals in mind we proceed to classify these liquid crystals as following.

1. Nematic
2. Cholesteric
3. Smectic

1. Nematic—

These have long range orientation order- i.e. the molecules tend to olign parallel to each other. The nematic phase is fluid i.e. there is no long range co-relation of the molecular centre of mass positions.

2. Cholesteric—

As in nematic phase lack of long range transitional order imports fluidity to the cholesteric phase. The cholesteric and nematic ordering are very similar some times these are known as twisted nematic.

3. Smectic –

The molecules in this phase are layered but all have the same direction. As a consequeuce of this particle translational ordering the smectic phases are much more viscous than either the nematic or cholestric phase.

The liquid crystals have polymorphic property. So due to that property they have great importance in scientific applications.

Applications—

1. They are used in display divices called liquid crystal display. (I. C. D.).
2. Thay are used in temperature sensors.
3. They are widely used in electronic divices.
4. Lyotropic liquid crystals have greater importance in biological organism.

POLLUTION

Dharmendra Pratap Singh
IX 'A'

Water is the basic requirement of life and probably men's awareness towards their environment and its impact has resulted in the multifarious development of hydrobiological problems. In the modern days. water pollution has become a serious threat to human life. Water pollution, in general, can be defined as the addition of the undesirable and noxious materials in the body of fresh water. Practically. streams or lakes rising from mountains at hlgh level are free from the gross pollution. On the other hand, the lakes or streams situated in polluted area are largely contaminated by variety of pollutions.

Froms of water :

Fresh water may be broadly divided into three categories

(i) rain water
(ii) ground water and
(iii) surface water

The raln water if collected before coming to the ground is quite clean and safe to drink. The ground water in the deeper layers of the earth contains undesirable subtances The surface (rivers, streams, lakes) naturally will contain certain bacteria and other forms added from the soil. It is often necessary to obtain water supply from rivers or lakes for the cities and towns which are located nearby. It is, therefore, necessary to provide water-works to purify water in large cities.

Cause of Pollution :

The majar causes of pollution are discharge of various industries including dye, Sugar, cellulose, proteins, oil and petroleum based industries, hospitals, city sewerage which is discharged into the rivers and other water resources. Apart from this, soil washings and decomposable organic matter are sources of pollution. There are several other factors of water pollution. apart from what have been stated.

Types of Pollution :

The pollution can be of two types. The pollution by inorganic substances (inorganic pollution) and by organic substances (organic pollution). The first chiefly, includes addition of various types of metallic and non-metallic compounds. The organic pollution is mainly through discharge of city sewrage with organic waste,

Water-borne Diseases :

Water-borne diseases have always been a threat to the mankind. People may be quite aware of the epidemic of cholera in London in 1854. The outbreak was so intense that 530 persons died between 30th August and 9th September and cholera epidemic in Hamburg in 1892 in which 8695 deaths occurred. Even today, large parts of the third world countries suffer from a great number of water-borne diseases.

Public Water Supply and its Management.

The supply of good quality of water to the public is the prime duty of the water works authorities. The good water supply should be sufficient in quantity and practically must be free from all pollution like hnman or or animal excreta and be free from the germs of infection or industrial diseases, good water should possess certrin desirable physical and chemical properties, which will tend to encourage its use for drinking purposes. The management of public water supply is also very essential. It is hoped that with the awareness of the problems of water pollution, efforts will be taken to eradicate it.

Our Friend, Philosopher and Guide

-Krishna Kumar Gupta 'Nishchhal'

The sun rises and sets,
The moon wakes and wanes.
Buds bloom and wither
Pleasures pursue pains.

Empires prosper and decay,
Temples crumble into ruin.
Change is the law of life–
Child grows into a man.

But they who for nation's sake,
Live and die any day,
The suns of their souls
Shine forever, night and day.

May life be short or long
An elegiac note or a song
Unmoved unceased they work
In rightening every wrong.

On the first day of the week
And twentyfifth day of April;
In the year nineteen sixteen–
He came, our desires to fulfit.

Pt. Bhagwati Pd. his father
Was there the station-master.
His ancestors lived at 'Mathura'
But he was posted to Jalesar'.

The family priest, surprised
Looked at the shining star
the fame of the babe, he said
Would spread near and far.

Hardly three years passed
When the child lost his father.
He could not even weep.
Six month-old was his brother.

The days any how passed
But easy was not the road.
At eight the dear mother too
had left for heavenly abode.

Thus was not-the-end of storm
Younger brother was also gone
Poor "Deenu" Then passed his days
Father less, friendless all alone

Problems but, could never stop
The daring steps of bravery
Slowly and steadily he climbed
The foot steps steep but silvery

The time kept on rolling–
'Panditji' to gain true knowledge
Came to our City Kanpur
And gamed the V.S.S.D. College.

Then he went to Agra
To pass his M. A. there.
But could not do the final
For he loss of his sister dear.

He then appeared at I. A. S.
And came out in flying colour
He was the first to face interview.
In Indian dress and order,

Thus in every walk of life
He was ahead, second to none.
Giving a pratical lesson to us
How the battle should be won.

The whole world mourned
When he left the world wicked.
Near the 'Mugulsarai Junction,
We found him lying dead.

The sun is set, but still there
The stream of light floods the way.
'Work and work' the success will
Kiss your gentle feet one day.

Unique, unparallel adoring,
Was the Man Pt. Deen Dayal.
A friend, philosopher and guide
Was liked and loved by all.

Two Funny Stories

—**Nitin Kaushik** (X-A)

1. HOW DARE YOU GO TO BED

An old man, who was afraid of the sea,
Once asked a sailor :

'Where did your father die ?'

'In a storm at sea,' said Jack, the sailor.

'And your grand father ?'

'He was drowned.'

'And your great-grand father ? How did he die ?'

'He too perished at sea,' answered Jack.

'And do you still dare to go to sea when all your ancestors were drowned ? I think you are very foolish.' said the old man.

Now replied the sailor. 'You tell me where your father died.'

'Very comfortably, in a bed'

'And your grand father ?'

'In a bed also.' answered the old man.

'And your great grand father ?'

'In exactly the same manner, very quietly in his bed.'

'Well,' said Jack, 'How do you dare go to bed, since all your ancestors died in bed ?'

2. THE WRONG ANSWERS

Frederick the great, paid so much attention to his army that he knew the face of every one of his soldiers. Whenever he saw a fresh face he used to put the following three questions to the soldier.

(1) How old are you ?
(2) How long have you been in my army?
(3) Are you satisfied with your pay and food ?

It happened that a young French man, who did not understand any word of German, became a soldier in Frederick's army. His officer wanted him to be ready to meet Frederick, So he made him learn the right answers to the king's three questions, in their usual order.

When Frederick noticed the new soldier he began to ask him questions.

'How long have you been in my army ?'

'Twenty-one years, replied the Frenchman

'What !' said the king in surprise

'How old are you, then ?'

'One year' was the strange reply.

'Dear me ! said Frederick. Either you or I must be mad.'

"Yes Sir, Both", replied the soldier who was ready to answer the third question.

'Well ! said the surprised king. 'This is the first time that any of my soldiers has called me a mad man. What do you mean by it, Sir ?'

The poor fellow could see that the king was angry. So he explained in French that he did not understand German. 'Oh, is that so?' said Frederick. 'Well learn it as roon as you can.'

पं० दीन दयाल उ० स० धर्म विद्यालय नवाबगंज, कानपुर

इण्टरमीडिएट प्रयोगात्मक–१९९०

अनुक्रमांक	नाम
२७६६२८	अभिषेक
,, ३०	अजय दीक्षित
,, ३१	अजय कुमार गुरूरानी
,, ३२	अजीत कुमार सिंह
,, ३५	अनिल गुप्ता
,, ३६	अनुराग गुप्ता
,, ३८	अनुराग मिश्रा
,, ४०	अरविन्द गुप्ता
,, ४२	आशीश कुमार सिंह
,, ४५	दीपक महेश्वरी
,, ४६	दीपक सक्सेना
,, ४७	दीपक शर्मा
,, ४९	दिलीप कुमार गुप्ता
,, ५०	दिलीप कुमार सिंह परिहार
,, ५२	गगन गुप्ता
,, ५३	गिरीश कुमार गुप्ता
,, ५४	गोपाल त्रिपाठी
,, ५५	ज्ञानेन्द्र मिश्रा
,, ५७	कौशलेन्द्र पाण्डेय
,, ५८	मधुर श्रीवास्तव
,, ५९	मलय जायसवाल
,, ६०	मनीष कुमार
,, ६२	मनीष सिंहानिया
,, ६३	मनीष श्रीवास्तव
,, ६४	मोहित कुमार श्रीवास्तव

अनुक्रमांक	नाम
२७६६६५	नारायण स्वरूप निगम
,, ६६	नवीन कुमार त्रिपाठी
,, ६७	नीतेश कुमार शुक्ला
,, ६८	निश्चल मेहरोत्रा
,, ७१	पंकज ओमर
, ७२	पवन कुमार शुक्ला
,, ७३	प्रकाश चन्द्र त्रिपाठी
,, ७५	प्रवीण कुमार उपाध्याय
,, ७६	पुनीत मेहरोत्रा
,, ७७	पुष्कर शंकर शुक्ला
,, ७८	रघुवीर सिंह
,, ७९	राघवेन्द्र सिंह चौहान
,, ८०	रजत पाण्डेय
,, ८२	राजीव शर्मा
,, ८३	राजेश शुक्ला
,, ८४	रजनीश दुबे
,, ८८	रुद्र प्रताप सिंह
,, ८९	सचिन मोहन
,, ९०	समीर दीक्षित
,, ९१	समीर सक्सेना
,, ९२	संजय बाजपेई
,, ९४	संजय शुक्ला
,, ९५	संजीव दीक्षित
,, ९७	संजीव वर्मा
,, ९९	सन्तोष कुमार मल्ल

२७६७००	सौम्य त्रिपाठी
,, ०१	सौरभ चतुर्वेदी
,, ०३	धर्मवीर निगम
,, ०५	सोमेश कुमार सिंह
,, ०६	सुधीर सिंह गंगवार
,, ०८	स्वदेश कुमार सक्सेना
,, १०	त्रिभुवन पाण्डेय
,, १२	विकास कुमार पाण्डेय
,, १३	विमल श्रीवास्तव
,, १४	विनय देव तिवारी
,, १५	विनय मेहरोत्रा
,, १६	विनय पाण्डेय
,, १७	वीरेन्द्र नाथ
,, २९	अजय कुमार
,, ३३	आलोक कुमार तिवारी
,, ३४	आनन्द गुप्ता
,, ३७	अनुराग कुमार प्रजापति
,, ३९	अरुण कुमार
,, ४१	अरविन्द कुमार त्रिवेदी
,, ४३	आशीश मिश्रा
,, ४४	आशुतोष सिंह
,, ४८	दीपेन्द्र गुप्ता
२७६७५१	दुष्यन्त मिश्र
,, ५६	ज्योति कुमार गुप्त
,, ६१	मनीष कुमार राठी
,, ६९	पंकज सक्सेना
,, ७०	पंकज भारती
,, ७४	प्रशान्त मणि त्रिपाठी
,, ८१	राजीव रंजन पाण्डेय
,, ८५	राम नगीना सिंह
,, ८६	रामेश्वर त्रिपाठी
,, ८७	रवीन्द्र सिंह भदौरिया
,, ९३	संजय मिश्रा
,, ९६	संजीव कुमार मिश्रा
,, ९८	सन्तोष कुमार भट्ट
२७६७०२	सौरभ जैन
,, ०४	शीलेन्द्र कुमार गुप्ता
,, ०७	सुधांशु कुमार मालवीय
,, ०९	तरुण कुमार गुप्ता
,, ११	त्रिवेणी नारायण जायसवाल
,, १८	विशाल मोहन सक्सेना
,, १९	यशोवर्धन सिंह
,, २०	यशवन्त यादव राव देशमुख
,, २१	योगेशचन्द्र

पं० दीनदयाल उ स धर्म विद्यालय नवाबगंज, कनपुर

हाई स्कूल १९९०

अनुक्रमांक	नाम	अनुक्रमांक	नाम
५३५९२७	अभिषेक कुमार	५१५९५५	आसुतोष गुप्ता
२८	अभिषेक शुक्ला	५६	अविरल पांडेय
२९	आदर्श कुमार श्रीवास्तव	५७	भानुप्रताप सिंह
३०	अजय विक्रम सिंह	५८	दीप कुमार द्विवेदी
३१	अजय अग्रवाल	५९	दीपक श्रीवास्तव
३२	अक्षय माथुर	६०	देवेन्द्र सिंह
३३	आलोक पोरवाल	६१	देवेश सिंह
३४	आलोक कुमार दीक्षित	६२	धनन्जय पांडेय
३५	अमरीश चन्द्र तिवारी	६३	गौरव गुप्ता
३६	अमित गुप्ता	६४	गौरव गुप्ता
३७	अमित कुमार द्विवेदी	६५	गोपाल कृष्ण सिन्हा
३८	अमित कुमार	६६	हरीश गुप्ता
३९	अमित कुमार गुप्ता	६७	हरीश तिवारी
४०	आनन्द अवस्थी	६८	कृष्ण मोहन शुक्ला
४१	अंकुर अग्रवाल	६९	क्रिष्टिज जयपुरियार
४२	अनुराग चतुर्वेदी	७०	कुलदीप सिंह
४३	अनुराग गुप्ता	७१	मनीष शर्मा
४४	अनुराग कटियार	७२	मुनिरूप त्रिपाठी
४५	अनुराग सारस्वत	७३	नामित जैन
४६	अनुराग सक्सेना	७४	नवीन कुमार
४७	अरविन्द कुमार	७५	नवीन कुमार सिंह
४८	आशीष अग्रवाल	७६	नीरज शर्मा
४९	आशीष आनन्द	७७	निमेश यादव
५०	आशीष खरे	७८	निर्मल कुमार श्रीवास्तव
५१	आशीष मिश्रा	७९	नितिन सेठ
५२	आशीष कुमार सिंह	८०	नितिन कपूर
५३	आशीष सिंह	८१	पियूष राज
५४	आसुतोष मिश्रा	८२	प्रदीप कुमार उपाध्याय

अनुक्रमांक	नाम	अनुक्रमांक	नाम
५३५९८३	प्रवीन अग्रवाल	५३६००३	शरद कुमार गुप्ता
८४	प्रवीन गंगवार	०४	शिशिर कुमार
८५	प्रवीन कुमार	०५	शिव कुमार अग्रवाल
८६	पुनीत अग्रवाल	०६	सुभाष चन्द्र गुप्ता
८७	पुष्पेश सिंह	०७	सुधीर कुमार सिंह
८८	राजीव प्रताप सिंह	०८	सुनील शर्मा
८९	राजेश शर्मा	०९	सुनील चन्द्र अवस्थी
९०	राकेश नेगी	१०	सुरेश कुमार जैन
९१	राकेश साहु	११	सुशील कटियार
९२	रतनेश तिवारी	१२	स्वपनिल शुक्ला
९३	रवी सिंह चौहान	१३	विभव श्रीवास्तव
९४	रवीश सिंह राजपूत	१४	विकास सिंह
९५	रोहित गुप्ता	१५	विकराम भाटिया
९६	रोहित पांडेय	१६	विनय कुमार सिंह
९७	सचिन गुप्ता	१७	विनय कुमार अवस्थी
९८	सलिल कुमार शर्मा	१८	विनीत मिश्रा
९९	संजय कुमार बाजपेई	१९	विपिन कुमार धामा
५३६०००	सत्येन्द्र ठाकुर	२०	विशाल गुप्ता
०१	सत्येंद्र सिंह तोमर	२१	विवेक सिंह सचान
०२	सौभाग्य शुक्ला	२२	यतनेश पांडेय

श्रृद्धांजलि

यह सत्र हमारे लिए ऐसी साहित्यिक क्षति का रहा है जिसकी पूर्ति कभी नहीं हो सकती। हमने दो-दो साहित्य-साधकों को खो दिया। हिन्दी के मूर्धन्य कथा-शिल्पी एवं श्रेष्ठ उपन्यासकार अमृत लाल नागर, हमारे बीच नहीं रहे। 'अमृत और विष' 'मानस का हंस' और 'खंजन नयन' जैसी अमर कृतियों के रचनाकार को हम अपने विद्यालय-परिवार की ओर से श्रृद्धांजलि अर्पित करते हैं।

इसी प्रकार वैदिक साहित्य के विद्वान एवं हिन्दी के श्रेष्ठ समीक्षक पं० मुन्शीराम शर्मा 'सोम' जैसे संत-साधक के निधन से हिन्दी साहित्य-मन्दिर का एक कोना रिक्त हो गया है।

हमारा विद्यालय परिवार इन दोनों महा विभूतियों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनकी आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।

—संपादक

।। विद्यालय की प्रबन्ध-समिति ।।

अध्यक्ष : श्री नरेन्द्रजीत सिंह, बैरिस्टर, कानपुर

उपाध्यक्ष : श्री शिवशरण शर्मा, अवकाश प्राप्त प्राचार्य

वी. एस. एस. डी. महाविद्यालय, कानपुर

मंत्री : श्री वीरेन्द्रजीत सिंह चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, कानपुर

सहमंत्री : डा० जगमोहन गर्ग, उद्योगपति, गाजियाबाद

सदस्य : श्री भाऊराव देवरस, सामाजिक कार्यकर्ता, नागपुर

प्रो० राजेन्द्र सिंह, सामाजिक कार्यकर्ता दिल्ली

डा० भूषणलाल धूपड़, प्राध्यापक

(आई. आई. टी.) कानपुर

श्री राम बालक मिश्र, एडवोकेट, कानपुर

श्री इन्द्रजीत जैन एडवोकेट, कानपुर

श्री प्रेमचन्द्र गुप्त, व्यवसायी, कानपुर

श्री गौरीशंकर भार्गव, एडवोकेट, कानपुर

श्री हरिशंकर शर्मा, अवकाश प्राप्त

अतिरिक्त शिक्षा निदेशक, उ० प्र० कानपुर

श्री ओम शङ्कर त्रिपाठी, प्रधानाचार्य कानपुर

दो शिक्षक प्रतिनिधि

मुद्रक :– नवीन प्रिन्टर्स गोविन्द नगर, कानपुर। फोन : 215966